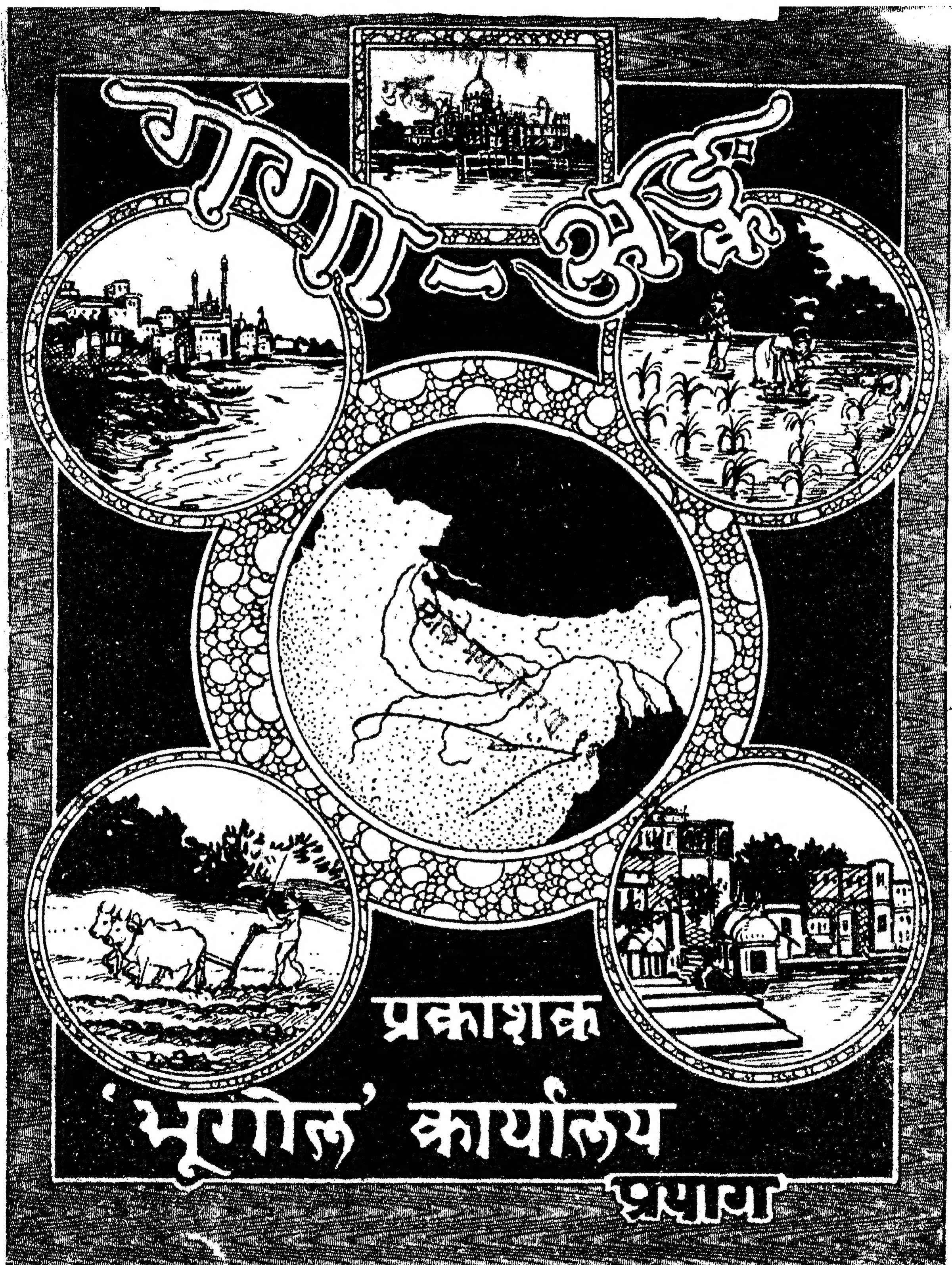


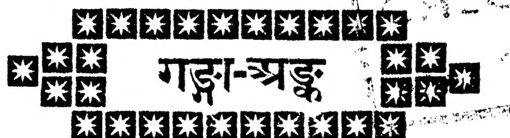
सम्पादक
रामनारायण मिश्र, बी० ए०

मूल्य १)

इस अंक के सहकारी सम्पादक—
दयाशंकर दुबे, एम० ए०, एल० एल० बी०

/)

"भूगोल"



वर्ष १५] माघ सं० १९९५, जनवरी १९३९ [सं० ९

गंगा या भागीरथी

(मेजर पोरमास्टन आफिसर-इन-चीफ, सर्वे आफ इण्डिया के पत्र का सार)

देवप्रयाग में मुख्य नदी की दो शाखायें भागीरथी और अलकनन्दा हो जाती हैं। देवप्रयाग के ऊपर गढ़वाली लोग हर एक शाखा को गंगा नाम से पुकारते हैं। यदि हम भौगोलिक दृष्टि से विचार करें तो दोनों शाखाओं का दावा गंगा का उद्गम कहाने के लिये समान ठहरता है, क्योंकि दोनों की लम्बाई समान ही है और इनके जल के परिमाण में भी कोई विशेष अन्तर नहीं है। इसलिये किसी एक को गंगा का उद्गम कहना अशुद्ध प्रतीत होता है।

फिर भी इस प्रदेश की नदियों में भागीरथी ही मुख्य ठहरती है। यह हरसिल से कुछ मील बीच में से काटती हुई आई है। भैरों घाटी पर जड़ गंगा उत्तर की ओर से आकर इसमें मिल गई है। यह भागीरथी से लगभग दूना जल लाती है। जड़ गंगा और उसकी सहायक मानागड के उद्गम, हिमालय पर्वत की मुख्य श्रेणी (जिसे कभी कभी जास्कर श्रेणी के नाम से पुकारते हैं) के हिमागारों (ग्लेशियरों) में हैं। सतलज नदी का बेसिन इस श्रेणी के उत्तर-पूर्व में है। गंगोत्री ग्लेशियर से भागीरथी गौमुख पर प्रकट हुई है। यहां इसका वेग इतना तीव्र है, कि इसको पार करना दुर्गम है।

गौमुख से ऊपर धारा काफी दूर तक ग्लेशियर के नीचे ही नीचे बहती है। गौमुख से दो मील उत्तर एक बड़ी धारा उत्तर की ओर से ग्लेशियर में आई है।

इसका उद्गम दो या तीन मील पर स्थित एक घाटी के एक छोटे ग्लेशियर में है।

गंगोत्री ग्लेशियर १५ मील लम्बा है और विस्तृत हिमागार (जिनमें केदारनाथ के उत्तरी ढाल भी शामिल हैं) इसका पेट भरते रहते हैं। चौखम्भा का सुन्दर समूह ग्लेशियर के बिलकुल सिरे पर ही स्थित है। गौमुख से लगभग चार मील ऊपर एक बड़ा ग्लेशियर ऊपर की ओर से आकर गंगोत्री ग्लेशियर में मिला है। चार भिन्न-भिन्न रंग के मोरेन इसकी शोभा को बढ़ाते हैं। इससे इसका नाम ही चतुरंगी बामक पड़ गया है। चौखम्भा के उत्तर में भागीरथी और अलखनन्दा के बीच के मुख्य जल-विभाजक पर यह ग्लेशियर बर्फ के ऊँचे क्षेत्रों से उतरता हुआ मालूम पड़ता है।

इससे यह प्रकट है कि भागीरथी और उसकी सहायक नदियों के उद्गम हिमालय की मुख्य श्रेणी में हैं, किन्तु बीच में पर्वतों की एक ऊँची श्रेणी

होने के कारण तिब्बत के पठार से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है।

अकलनन्दा और उसकी मुख्य सहायक नदियों के उद्गम हिमालय पर्वत की मुख्य श्रेणी के दक्षिणी ढाल में हैं।

भागीरथी के समान इसका भी निकास दो धाराओं (अलखनन्दा और धौलीगंगा) के मेल से हुआ है। इन दोनों का संगम जोशीमठ पर हुआ है। जोशीमठ से बद्रीनाथ का मन्दिर १८ मील ऊपर की ओर है, और माना ग्राम उससे भी दो मील आगे। माना में अलखनन्दा की धार बहुत छोटी है और यह मुख्य घाटी में पश्चिम की ओर से प्रवेश करती है। इस घाटी की मिट्टी रेतीली है। अलखनन्दा का वास्तविक उद्गम उत्तर की ओर की एक घाटी में है। यह स्थान सुप्रसिद्ध वसुधरा प्रपात के निकट ही है। मुख्य घाटी दो भागों में विभाजित है। इनमें चौखम्भा के पूर्वी पार्श्वों से बहकर सतोपन्थ और भागीरथ (बगत खरक) नामक दो ग्लेशियर आये हैं।

माना ग्राम से १३ मील उत्तर घासटोली में अरवा नदी आकर इसमें मिली है। अरवा पश्चिम में हिम क्षेत्रों और पूर्व में चतुरंगी ग्लेशियर के जल को बहा लाई है। इस भाग में अलखनन्दा को सरस्वती के नाम से पुकारते हैं। सरस्वती में पूर्व की ओर से कई छोटी छोटी धारायें आकर मिली हैं। इनका उद्गम उस श्रेणी में है, जो कामेट से दक्षिण की ओर जाती है। मुख्य घाटी माना दर्रे पर जो १७८९० फुट की ऊँचाई पर स्थित है, समाप्त हो जाती है।

धौली गंगा—जोशी मठ से दस मील ऊपर पूर्व से आकर ऋषि गंगा इसमें मिलती है। यह नन्दा देवी के बेसिन से निकलती है। इस बेसिन के सम्पूर्ण भाग का पानी इसमें बह आता है। यह संसार के एक महत्वपूर्ण तंग रास्तेमें होकर बहती है, जिसका पता अभी हाल (१९३४ ई०) में लगा है।

बीस मील ऊपर मलारी ग्राम में गिरथी नामक एक नदी पूर्व से आकर इसमें मिली है। धौली गंगा स्वयं नीति दर्रे से निकल कर आई है, जो १६,६२८ फुट की ऊँचाई पर स्थित है।

नीति और माना दर्रों के द्वारा गढ़वाल का तिब्बत से व्यापार होता है। यह व्यापार इन्हीं घाटियों के निवासी भाटिया लोगों के हाथ में है। माल याक या भेड़, बकरियों पर ले जाते हैं। याक उत्तरी गढ़वाल ही में पाला जाता है। इसे १०,००० फुट से नीचे नहीं ले जा सकते हैं। गढ़वाल की भेड़ मैदान की भेड़ से भिन्न होती है। यह लगभग १२ सेर और बकरी दस सेर तक बोझा ले जा सकती है।

यद्यपि इस नदी का उद्गम इतना ऊपर है, किन्तु इसका अलकनन्दा नाम धौली गंगा से संगम होने के बाद विष्णुप्रयाग से ही पड़ता है। यहां से नन्दप्रयाग तक धारा का बहाव दक्षिण-पश्चिम है। यहाँ नन्दाकिनी नदी इसमें आकर मिली है। यह त्रिशूल के पश्चिमी ढाल वाले ग्लेशियर से निकली है। फिर कर्णप्रयाग पर पिण्डरसंगम है। यह नदी नन्दाकोट के सुप्रसिद्ध पिण्डारी ग्लेशियर से निकली है। यहाँ से रुद्रप्रयाग तक धारा का बहाव पश्चिम की ओर रहता है। रुद्रप्रयाग में मन्दाकिनी संगम है। मन्दाकिनी का उद्गम सुप्रसिद्ध तीर्थ केदारनाथ के निकट है।

केदारनाथ में ही स्वामी शंकराचार्य का देहान्त ३२ वर्ष की अवस्था में हुआ था। जब बौद्ध धर्म ने शैवधर्म को इस देश में लुप्तप्राय: कर दिया तो आपही ने उसका उद्धार किया था। इन महाशय ने बसुदेव की (जो विष्णु का अवतार हैं) पूजा का प्रचार किया, और हिमालय के तीर्थों की यात्रा पर विशेष जोर दिया। जोशीमठ की स्थापना और बद्रीनाथ के मन्दिर का उद्धार आपने ही किया था।

लगभग पचास, साठ हजार यात्री बदरीनाथ और केदारनाथ के दर्शनों के लिये प्रति वर्ष जाते हैं। यात्री लोग ऋषिकेष से लक्ष्मणझूला जाते हैं, वहाँ पुल पार कर, गंगा के किनारे २ देवप्रयाग, श्रीनगर रुद्रप्रयाग और गुप्त काशी होकर केदारनाथ पहुँचते हैं। फिर वे मन्दाकिनी की घाटी में उखीमठ तक लौट आते हैं। यहाँ से पहाड़ियों को तंगनाथ के रास्ते से पार कर चमोली पर अलकनन्दा की घाटी में पहुँच जाते हैं। चमोली से यात्री बदरीनाथ जाते हैं। वहाँ तप्तकुंड में स्नान करते हैं। इसका जल स्नान के लिये एक बड़े जलाशय में एकत्रित किया जाता है।

२६ मई को ११ बजे दिन में इसका तापमान १२०० फारेनहाइट था, यात्रियों को स्नान की सुविधा के लिये इसमें ठंडा पानी मिला दिया जाता है।

इस तरह के दो और कुंड केदारनाथ की सड़क पर मन्दाकिनी के दक्षिण तट पर है। ६ अक्तूबर को पांच बजे शाम को जब वायु का तापमान ६४° था और नदी का ५२° तो एक कुंड के जल का तापमान ७४° और दूसरे का १२८° था। स्नान के लिये इनका भी जल एक जलाशय में एकत्रित किया जाता है।

मन्दिर में दर्शन करने के बाद यात्री जोशीमठ होते हुए उसी रास्ते से कर्णप्रयाग वापिस आ जाते हैं। यहाँ से लोभा रोड होते हुये पंडवाखल चले जाते हैं। इस तरह केवल गढ़वाल ही में उन्हें एक मास लग जाता है।

रुद्रप्रयाग से नदी का बहाव फिर दक्षिण की ओर हो जाता है। श्रीनगर होती हुई देवप्रयाग में भागीरथी से मिल जाती है। इसके आगे व्यासघाट पर नायर संगम होता है। नायर इस जिले के मध्य भाग का पानी बहा लाती है। यह पूर्वी नायर और पश्चिमी नायर नामक दो धाराओं के योग से बनी है। ये दोनों डूडाटोली पर्वत से निकल कर भटकोली में मिल जाती हैं।

डूडाटोली पर्वत पर जंगली कुत्ते पाये जाते हैं। यहाँ के अतिरिक्त ये पिंडर की घाटी तथा कुछ अन्य स्थानों में भी मिलते हैं। गढ़वाल के बन्दरों में लंगूर मुख्य है। सांप कम होते हैं।

इन पशुओं के पाये जाने का कारण यहाँ जंगलों का प्राचुर्य ही है। चीड़, बांज ओक, राघ और रौसल आदि वृक्षों के अलावा यहाँ सघन बन विद्यमान हैं। ६००० फुट की ऊँचाई तक के स्थानों में चीड़ के ही बन अधिक पाये जाते हैं। वैसे तो इसकी सीमा १६०० से ७२०० फुट तक है। यह प्रायः अकेला ही पाया जाता है। बांज ओक यद्यपि ४००० फुट ऊंचे स्थानों पर भी पाया जाता है, किन्तु इसके बन अधिकतर ६००० से ८००० फुट तक ही पाये जाते हैं। इस वृक्ष की लम्बाई कुछ विशेष नहीं होती है।

राघ और रौसल ७५०० फुट से ११००० फुट तक पाये जाते हैं। ये वृक्ष लम्बे होते हैं, किन्तु इनकी शाखायें छोटी और निकट २ होते हैं। कुछ की लम्बाई तो १२० फुट तक पहुँच जाती है, और घेरा लगभग १५ फुट तक। थानेर और साइप्रेस भी इसी ऊँचाई पर पाये जाते हैं। इनकी लकड़ी कड़ी और अधिक समय तक जलने वाली होती है किन्तु पानी पर उतराती नहीं है। बर्च १२००० फुट ऊँचे स्थानों पर भी उग आता है।

वालनट नामक फल वाला वृक्ष जंगल में मिलता है और उगाया भी जाता है

व्यासघाट से लक्ष्मणझूले तक गंगा का बहाव पश्चिम की ही ओर रहता है।

देहरादून-जिले में गंगा का प्रवेश

लक्ष्मणझूले से हरिद्वार तक गंगा गढ़वाल और देहरादून जिलों की सीमा पर बहती है। इस प्रदेश में नदी का बहाव दक्षिण-पश्चिम की ओर रहता है। यहाँ पर तथा ऊपर के भाग में भी (जिस का वर्णन हम पीछे कर आये हैं) जो ग्राम हैं, वे साधारणतया पहाड़ी के मध्य भाग में स्थित हैं, जिससे आधे भाग में नीचे और ऊपर सरलता से खेती की जा सके। मकान छोटी छोटी सड़कों के दोनों ओर किनारे बनाये जाते हैं। एक सड़क पर लगभग छः-सात होते हैं। हर घर के सामने चौक होता है। गौ-स्थान अधिकतर बस्ती से अलग बनाये जाते हैं। रात में पशु इन्हीं में या मकानों में ही गोठ के नीचे बांध दिये जाते हैं। यहाँ गोबर आदि जमा होने दिया जाता है। इससे गंदगी रहती है। अच्छा हो यदि सफाई पर कुछ अधिक ध्यान दिया जाय। पहाड़ी पशु फुर्तीले, कद के छोटे और कदम के पक्के होते हैं। गायें बहुत कम दूध देती हैं। दिन भर में लगभग एक सेर भी नहीं। इनको खाने के लिये पहाड़ों के पार्श्वों पर उगी हुई घास (जिसे औरतें ले आती हैं), पत्तियाँ या भूसा दिया जाता है। इन्हें नमक बहुत कम मिलता है।

यहाँ के सभी निवासी गेहूँ या चावल खाते हैं। केवल निर्धन व्यक्ति ही मडुआ या झंगोरा अनाज भाट और गाहट दाल के साथ खाकर सन्तोष कर लेते हैं। इन लोगों का पहिनावा मैदान वालों के पहिनावे से भिन्न नहीं है। पहाड़ी लोगों की टोपी छोटी होती है, पैजामा प्रायः सभी श्रेणी के लोग पहिनते हैं।

बाहर जाने वाली वस्तुओं में अनाज जैसे जौ, गेहूँ चावल, दाल, पापड़, झगोरा, मडुआ, प्याज, आलू, सब प्रकार का कपड़ा, गुड़, तम्बाखू, चीनी, मसाले, सूखेफल, और चाँदी के बर्तन विशेष उल्लेखनीय हैं।

नमक, सुहागा, टट्टू, जूवू, भेड़, बकरी, कुत्ते, ऊन सब प्रकार के ऊनी सामान, चीनी, जूते, जड़ाऊ तिब्बती जीन, चाय, मक्खन, सोना, याक की पूंछ और सींग यहाँ के प्रधान आयात हैं।

लक्ष्मणझूले पर गंगा जी की गहराई तो काफी है, किन्तु पाट कम चौड़ा है। यहाँ श्री लक्ष्मणजी का प्राचीन मन्दिर बना हुआ है। पहिले इस स्थान पर गंगा को रस्सों द्वारा ही पार किया जाता था। किन्तु फिर एक पुल बना दिया गया था। सन् १९२४ वाली गंगा की बाढ़ में वह टूट गया। उसके स्थान पर लोहे का एक झूलता हुआ बहुत ही सुन्दर पुल सेठ सूरजमल ने बनवा दिया है। इससे यात्रियों को आने जाने में सुविधा हो गई है। पुल को लटकौआ झूला इस लिये कहते हैं। कि इसको साधने के लिये बीच में कोई खम्भा नहीं है।

ऋषीकेश यहाँ से तीन मील दूर हैं। यह स्थान देखने में एक सुन्दर तपोवन सा मालूम होता है। यहाँ तक अब रेल भी बन गई है। इससे यहाँ की आबादी अब बढ़ चली है। बाबा काली कमली वाले (जिनकी धर्मशालायें उत्तराखंड में स्थान स्थान पर हैं) का प्रधान कार्यालय यहीं है। यहाँ श्री भरतजी का एक प्राचीन मन्दिर है। रचना और कला से ज्ञात होता है कि यह बौद्ध काल का है। इसकी प्राचीनता में कोई सन्देह नहीं है। यहाँ पर एक चौक बाजार है। जिसमें सभी प्रकार की आवश्यक वस्तुयें पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो सकती हैं। रात को बड़ी दुकानों पर गैस की रोशनी का प्रबन्ध रहता है। सड़क पक्की है। और सीधी गंगा घाट तक गई है। इस जगह श्रीरामचन्द्रजी का मन्दिर दर्शनीय है। गंगा के किनारे पक्के घाट का अभाव है। किन्तु अब एक बाँध बंधवा देने का उद्योग हो रहा है। आशा की जाती है कि कुछ वर्षों में गंगा-फ्रंट फार्म बंध जाने से हरद्वार की तरह यह स्थान भी खिल उठेगा।

चन्द्रभागा राव नदी यहीं आकर गंगा में मिली है, इससे इसकी शोभा और भी बढ़ जाती है। लगभग दस मील नीचे रायवाला के पड़ाव के थोड़ा ही ऊपर सुंग और सुसवा आकर गंगा में मिली हैं। बीच के प्रदेश में पर्वतों पर चीड़, देवदारु, बान, ओक, खरशू आदि वृक्षों के घने जंगल खड़े हैं।

चीड़ के बन अकेले. और बान ओक के साथ में मिले हुये दोनों प्रकार से पाये जाते हैं। इसकी सीमा ३००० फुट से ६५०० फुट तक है। ५००० फुट से ६५०० फुट तक बान, ओक, बुरन और अयार वृक्षों के साथ साथ किन्तु चीड़ के बिना भी पाया जाता है। ६५०० फुट से ९००० फुट ऊँचाई तक देवदार के बन हैं, यह वृक्ष साधारण रूप से कैल, बान, और खरासू के वृक्षों के साथ मिला हुआ पाया जाता है। ९००० फुट से अधिक ऊँचे स्थानों में अधिकतर खरासू और ओक के ही वृक्ष मिलते हैं। चीड़ के वृक्षों से तारपीन का तेल निकालने के लिये कारखाने खुल गये हैं, किन्तु अभी यह व्यवसाय बहुत समुन्नत नहीं है।

फल वाले वृक्षों में सेव, नाशपाती, आम, अमरूद और लीची विशेष हैं।

यहाँ के जंगलों में हाथी, चीते, तेन्दुआ, भालू और हाइना पाये जाते हैं। हिरन तो कई प्रकार के मिलते हैं। जंगली भेड़, सुअर, नेवला, खरगोश, लोमड़ी और लंगूर खूब हैं। विषैले जन्तुओं में छिपकली, गोड, मेढक, मगर और सांप विशेष उल्लेखनीय हैं।

यहाँ पशु पाले भी बहुत जाते हैं। बहुधा इनकी संख्या आवश्यकता से कहीं अधिक होती है। परिणाम यह होता है कि इन्हें भर पेट भोजन भी कठिनता से प्राप्त होता है। वर्षा होने के एक या दो मास पहिले से बहुतों को केवल आधे पेट भोजन पर ही निर्वाह करना पड़ता है।

संग और सुसवा पूर्वी देहरादून की नदियाँ हैं। सुसवा का उद्गम आसारोरी-देहरा सड़क के पूर्व में एक चिकनी मिट्टी के जलाशय में है। इसमें आकर रिसपाना राव और किन्दल नदियाँ भी मिल जाती हैं। कन्सराव से थोड़ा ही नीचे सुसवा में आकर संग मिली है। इस नदी का उद्गम टिहरी में है। संग संगम के एक या दो मील नीचे जाखन-राव आकर सुसवा में मिली है। इस संगम के उपरान्त पानी का अधिक भाग संग में होकर जाता है। सुसवा उसके साथ ही साथ बहती है किन्तु उसमें पानी बहुत थोड़ा रह जाता है। इस नदी के उत्तर में धाराओं का एक जाल सा बिछा हुआ है। इस में मुख्य नदी को उसकी सहायक नदियों में से ढूँढ़ निकालने में कठिनाई पड़ती है।

सुसवा संगम के उपरान्त गंगा का जल कई धाराओं में विभाजित हो जाता है। इन धाराओं के बीच में छोटे छोटे द्वीप हैं, जिन पर जंगल उगे हुए हैं। इस प्रकार हरद्वार के निकट गंगा इस जिले की सीमा को पार कर सहारनपुर जिले में प्रवेश करती है।

गंगा सहारनपुर जिले की पूर्वी सीमा पर बहती है। हरद्वार गंगा के दाहिने तट पर एक इस पहाड़ी के नीचे बसा हुआ है। गंगा के बायें तट पर चण्डी पर्वत है, जो समुद्रतल से १९३० फुट ऊँचा है। गंगा का प्रवेश शिवालिक श्रेणी के अंतर्गत एक बड़े तंगरास्ते से हुआ है। यह तंगरास्ता सबसे संकीर्ण स्थान पर भी एक मील चौड़ा है। नदी कई छोटी २ धाराओं में विभाजित हो गई है। इनके बीच में द्वीप हैं जिन पर घने बन उगे हुये हैं। मुख्य धार को यहां नील धारा के नाम से पुकारते हैं, यह चण्डी पर्वत के निकट ही बहती है, किन्तु प्रधान शाखा हरद्वार नगर के नीचे बहती है। यह दो मील नीचे कनखल में नील धारा से मिल जाती है।

नदी का किनारा मन्दिरों और घाटों के बने होने के कारण बड़ा सुन्दर प्रतीत होता है। इनमें से सब से पहिले भीमगोड़ा तालाब पड़ता है। कथा है कि गंगाजी जिस समय उतर रही थीं, उस समय भीम-सेन पाण्डव उन्हें रास्ता दिखाने के लिये वहाँ नियुक्त हुये थे। आपके घोड़े की ठोकर एक चट्टान में लग जाने के कारण इस तालाब का विकास हुआ था। दूसरी ठोकर इस नगर के अन्दर ही ब्रह्मकुण्ड नामक स्थान में लगी थी। ब्रह्मकुण्ड से मिला हुआ ही हर की पैढ़ी का घाट है। यहाँ एक पत्थर पर विष्णु की पादुकायें बनी हुई हैं। यह घाट जो कि हरद्वार में सबसे पवित्र स्थान माना जाता है, पहिले बहुत संकीर्ण था जिससे मेले के अवसर पर बहुत से लोग कुचल कर मर जाते थे। किन्तु यात्रियों की सुविधा के लिये अब इसका काफी विस्तार कर दिया गया है। इसकी पेंदी पक्की कर दी गई है और

गंगा की धार इस प्रकार लाई गई है, कि जल प्रचुर परिमाण में इसमें लगातार आता रहे।

हर की पैढ़ी से मिला हुआ ही गंगाद्वार मन्दिर है। यह यहाँ सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण मन्दिर है। इसके बाद सर्वनाथ के मन्दिर तक एक देव स्थानों की श्रेणी सी चली गई है। सर्वनाथ पर लालतारव आकर गंगा से मिली है।

इसके दक्षिण में मायापुर है। सुप्रसिद्ध पुरातत्त्व-वेत्ता कनिंघम साहब का अनुमान है कि मायापुर एक अति प्राचीन स्थान है। अब भी नहर के पुल के सामने एक बड़ा टीला है, जिस पर बड़ी २ ईंटों और पत्थरों के टुकड़े बिछे हुये हैं। इसके उत्तर में भैरों और मामादेवी के प्राचीन मन्दिर हैं। यहां से दक्षिण पश्चिम में नहर के पश्चिम तट पर नारायण-वली का प्राचीन मन्दिर बना हुआ है। इसमें ईंटें बड़ी २ लगी हैं। इसके उपरान्त एक बड़ा टीला पड़ता है जिसे राजा वेणु के किले का ध्वंसावशेष बतलाते हैं।

गंगा नहर का प्रधान कार्यालय गणेश घाट पर है। हरिद्वार से थोड़ा ऊपर बहुत से सुधार-घर बनाये गये हैं। जिससे इस धारा में नहर के लिये पर्याप्त जल आ जाय।

यह नहर सन् १८५५ ई० में लार्ड डलहौजी के शासन-काल में निकाली गई थी। लगभग ६१५ मील बहकर कानपुर में फिर गंगा से मिल गई है। गणेश पर गंगा के बीच में लोहे के बड़े बड़े फाटक लगे हुये हैं। गरमी में ये फाटक बन्द कर दिये जाते हैं और गंगा का प्रायः सब जल नहर में ले लिया जाता है। वर्षा ऋतु में ये फाटक ऊपर उठा दिये जाते हैं, और नहर पर के फाटक नीचे कर दिये जाते हैं, जिससे नहर में अधिक बाढ़ नहीं आने पाती है। नहर में जो अधिक पानी आ जाता है वह मायापुर के नहर के पुल के फाटक से कनखल की ओर बहा दिया जाता है। यहाँ से गंगा दो भागों में विभक्त हो जाती हैं। कनखल के पूर्व की ओर गंगा का प्रवाह है और पश्चिम की ओर नहर बहती है।

मायापुर से एक मील दक्षिण कनखल है। यहाँ का बाजार एक पत्थर की पक्की सड़क के दोनों ओर स्थित है। और इसी के दोनों पार्श्वों में नगर बसा हुआ है। यहाँ के बहुत से मन्दिरों और गृहों पर चित्रकारी बनी हुई है। जिससे यह नगर बड़ा भव्य प्रतीत होता है।

यहाँ पर दक्ष प्रजापति का मन्दिर है। कहते हैं कि राजा दक्ष ने यहीं पर यज्ञ किया था। जिसे सती के अपमान से क्रुद्ध होकर शिवजी ने ध्वंस कर दिया था।

कनखल के चार मील नीचे वानगंगा गंगा में से निकली है। वास्तव में वानगंगा गंगा की ही एक उपशाखा है। सम्भव है कि किसी समय में गंगा जी का बहाव इसी मार्ग से रहा हो। गंगा से निकल कर खादिर में इस नदी का बहाव भोगपुर तक दक्षिण की ओर ही रहता है। भोगपुर से रेल की पटरी दक्षिण-पश्चिम होकर मुजफ्फरनगर के जिले में यह फिर दक्षिण की ओर बहने लगती है। इसी जिले में चांदपुरी के निकट यह फिर गंगा में मिल जाती है। यों तो वानगंगा का पेंदा स्थिर है, और दोनों तटों की भूमि को बहुत कम नुकसान पहुँचता है, किन्तु पिछली शताब्दी में इसके मार्ग में बहुत परि-वर्तन हुये हैं, और अब बाढ़ के समय में इस पार से उस पार जाने में अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित हो जाती हैं।

कनखल से गंगा का प्रवाह दक्षिण की ओर ही रहता है। इस भाग में गंगा का पेंदा पत्थरों से भरा हुआ है। वास्तव में यह प्रदेश भब्बर इलाके के अन्त-र्गत पड़ता है। यह पत्थर वालावली के पुल के बाद जो हरद्वार से १२ मील दक्षिण है नहीं मिलते नदी का ढाल भी घटता जाता है। वालावली के बाद तो देसी नावों में भी गंगा पार की जा सकती है।

मध्य के भाग में धारा की चौड़ाई परिवर्तित हुआ करती है। इसका प्रभाव तटों की बनावट पर भी पड़ता है। एक ओर के तट ऊँचे हैं, और दूसरी ओर के ढालू। किन्तु धारा प्रत्येक वर्ष की बाढ़ में कुछ परिवर्तन अवश्य ले आती है।

नदी का जल अक्तूबर के मध्य से घटने लगता है और घटते घटते जनवरी के मध्य में बहुत कम रह जाता है। फिर हिमालय की बर्फ पिघलने के कारण इसका जल फिर बढ़ने लगता है। मार्च के अन्त तक यह लगभग जनवरी से दुगना हो जाता है, किन्तु सबसे अधिक वृद्धि इसमें वर्षा में ही होती है।

हरिद्वार से कुछ मील उत्तर रायवाला नामक स्थान में गंगा के जल के परिमाण का जो तखमीना लगाया गया है, उसके आंकड़े नीचे दिये जाते हैं।

मार्च मास में :—एक सेकंड में ६००० क्यूबिक फुट वर्षा में :—एक सेकंड में ४८२,००० " "

बाढ़ का प्रभाव जिस भूमि पर बराबर पड़ता रहता है। वह खादिर के रूप में परिणत हो जाती है। इस प्रकार सोलानी नदी और गंगा के बीच के समस्त भूखण्ड को हम खादिर कह सकते हैं। इसके उत्तर में पहाड़ियाँ हैं। इनके निकट ऊँची जमीन धीरे २ नीची हुई है, किन्तु ज्यों २ हम नीचे बढ़ते जाते हैं। त्यों २ गंगा की ओर ढाल भी बढ़ता जाता है। यहाँ की जमीन बहुत ऊँची नीची है और उसका रूप भी एक सा नहीं है। बहुधा दो धाराओं के बीच की जमीन रेतीली है, किन्तु जलाशयों और दलदलों में चिकनी मिट्टी अधिक पाई जाती है।

खादिर में अधिकतर जंगल या घास उगी हुई है। इनमें चीड़, खैर, शोशम, ढाक, बेर और सेमल के वृक्ष उगे हुये हैं। साल कहीं २ पर मिलता है। पर बाँस बहुत पाया जाता है, और इसका वृक्ष भी मूल्यवान समझा जाता है।

मैदान के अन्य जिलों की अपेक्षा यहाँ पशु भी अधिक हैं, किन्तु जंगली पशु धीरे २ बहुत कम हो गये है। शेर और चीते तो लगभग नहीं के बराबर हैं। तेंदुये बहुत हैं। वैसे हाइना, बन बिलाव लाल कुत्ता, भेड़िया, गीदड़, और जंगली सुअर भी खूब मिलते हैं। जंगली हाथियों के झुंड के झुंड घूमा करते हैं। जब कभी ये मैदान में उतर आते हैं, तो धान आदि के खेतों को काफ़ी नुकसान पहुँचता है। हिरन कई प्रकार के पाये जाते हैं। नीलगाय और बारहसिंघे भी मिलते हैं। साँपों में कोबरा, करैट और डामन मुख्य हैं।

पालतू पशु यहाँ देहरादून जिले वालों की अपेक्षा कहीं अच्छे होते हैं। क्योंकि यहाँ चरागाहें बहुत हैं। इनमें गाय, बैल ही विशेष हैं। भेड़ बकरी कम पाई जाती हैं। घोड़ों के लिये किसी समय सहारनपुर बहुत प्रसिद्ध था किन्तु अब वह बात लुप्तप्राय: हो गई है।

खादिर का प्रदेश इस जिले में बहुत पिछड़ा हुआ माना जाता है। आबादी बहुत कम है और निवासी अधिकतर खानाबदोश हैं। नदियों और धाराओं को पार करने में कठिनाई पड़ती है। पृथ्वी नम है, और उसके अधिकांश पर घास उगी हुई है। बाढ़ और कटाव से नुकसान हुआ करता है।

जिला बिजनौर

बिजनौर में गंगा का प्रवेश हरद्वार से थोड़ा ही ऊपर होता है। नहर निकल जाने के कारण यहाँ गंगा में जल बहुत कम रह जाता है। पत्थर बेशक बहुत हैं। कुछ दूर आगे इनके स्थान पर रेत ही रेत दिखाई पड़ता है।

यहीं पर शामपुर से दो मील नीचे पैलीराव आकर गंगा में मिली है। इसका उद्गम गढ़वाल के पर्वतों में है। वर्षा में यह बड़े वेग से बहती है तब इसमें बड़े बड़े पत्थर पेड़ आदि बह आते हैं। इससे लगभग चार मील दक्षिण पश्चिम लालभंग के निकट खासन नदी आकर गंगा में मिली है। इसके वेग में पैली की सी प्रबलता नहीं है। इसी कारण से इसमें जल भी बारहों मास रहता है और कुछ भागों में उसका उपयोग सिंचाई के लिये भी होता है। इसी प्रकार की नदी कोटवाली राव भी है। इसका संगम आसफगढ़ के निकट हुआ है। लहपी नदी सैफपुर खद्दर से निकलती है, ऊँचे किनारे के नीचे २ बहती हुई यह रावली झाल में मिल जाती है और उसी के कुछ आगे गंगा में ऐसा मालूम पड़ता है कि किसी समय में गंगा इसी मार्ग से बहती थी। अब भी बाढ़ के समय में बहुत सा पानी भर जाता है। और उस से हानि भी खूब पहुँचती है।

मालिन नदी का भी उद्गम गढ़वाल की पहाड़ियों में है। इसका प्रवेश इस जिले में नजीबाबाद पर्गने के उत्तर में होता है। यहाँ यह तीन धाराओं में विभक्त हो जाती है। पश्चिम वाली को रतनाल और पूर्व वाली को रिवारी के नाम से पुकारते हैं। रतनाल साहनपुर के निकट और रिवारी भोगपुर के निकट मालिन से मिल जाती है। गंडावर के निकट लकड़हान इसमें आकर मिल गई है और उसके बाद यह स्वयं गंगा से रावली के निकट मिल जाती है। उत्तर के भाग को छोड़ कर इस नदी की घाटी बहुत उपजाऊ है और इसके दोनों तटों पर खेत लहलहाते हैं।

कहा जाता है कि कण्व का आश्रम इसी के तट पर था। जहां दुष्यन्त और शकुन्तला की पहिली भेंट हुई थी। कालिदास ने इसी कथानक के आधार पर शकुन्तला नाटक की रचना की है।

मालिन के बाद इस जिले में छोइया संगम ही कुछ महत्व रखता है। यह नजीबाबाद पर्गने के समीपुर ग्राम से निकली है। गंगा से इसका संगम जहानाबाद से दो मील नीचे होता है। यद्यपि इसकी घाटी का अधिकांश भाग उपजाऊ है, किन्तु वर्ष के अधिक भाग में यह निर्जल रहती है। इसकी खलिया और पदोही नामक केवल दो छोटी सहायक हैं, जो इससे पडला और मेमन के निकट आकर नदियाँ मिल गई हैं।

इस जिले में गंगा के किनारे किनारे एक खादिर की पट्टी है, किन्तु इसकी दशा मेरठ और मुजफ्फरनगर की खादिरों से कुछ भी अच्छी नहीं है। अभी सौ वर्ष भी नहीं हुए होंगे, जब जंगली हाथी और चीते इसमें स्वच्छन्दता से घूमते थे। यहाँ के दलदल इतने गहरे थे, कि एक बार एक हाथी एक दलदल में डूब गया था। फिर इसको साफ किया गया और कुछ वर्षों तक धान के खेत लहलहाते रहे किन्तु बाढ़ आदि उपद्रवों के कारण यह फिर उजड़ गई और यहाँ घास के जंगल उग आये। इमली के वृक्ष भी काफी हैं। जंगली पशुओं से यह फिर भी पूर्ण है किन्तु चीते और हाथी कम पाये जाते हैं। जंगली सुअर और हिरन खूब हैं। गंगा में घड़ियाल भरे पड़े हैं। साँपों की पहाड़ी भाग के समान यहाँ कमी नहीं है। चरागाहों की अधिकता के कारण यहाँ मवेशी अच्छी संख्या में हैं। बैल नाटे और गठे बदन के होते हैं। पर यह अन्य जिलों के बैलों की अपेक्षा कहीं अधिक मेहनती होते हैं।

इस जिले से जो वस्तुएँ बाहर भेजी जाती हैं, उनमें चीनी, बाँस और जंगल की अन्य पैदावार ही मुख्य है। अनाज इस जिले में कम पैदा होता है। जो कुछ यहाँ होता भी है, वह मुश्किल से इसी प्रान्त वालों के लिये पूरा पड़ता है, और अक्सर बाहर से भी मँगाया जाता है। बाहर से आने वाली अन्य वस्तुओं में नमक, मिल के बने हुए वस्त्र, धात की बनी हुई वस्तुएँ और मसाले हैं।

———

मुजफ्फरनगर

इस जिले में गंगा की घाटी या खादर एक ऐसे भाग में स्थित है, जो अवश्य ही किसी समय गंगा का पेंदा रहा होगा। इस समय इसके पश्चिम में बांगर स्थित है, जिसके कुछ टीले तो सौ फुट तक ऊँचे हैं। ये धीरे धीरे गंगा की ओर ढालू होते जाते हैं। खादर सबसे अधिक चौड़ा उत्तर में है, जहाँ यह गंगा से बारह मील की दूरी तक फैला हुआ है, किन्तु दक्षिण की ओर यह धीरे धीरे संकरा होता जाता है, यहाँ तक कि भुकरहेड़ा के निकट बांगर गंगा तट से केवल एक मील दूर रह जाता है।

गंगा में वह महान परिवर्तन जिसके कारण इस खादर का विकास हुआ, चौदहवीं शताब्दी में हुआ था। जन-श्रुति के आधार पर एक और ऐसा ही परिवर्तन शाहजहाँ बादशाह के शासनकाल में हुआ था। इस दूसरे परिवर्तन के समर्थन में यह बात कही जा सकती है कि नूरजहाँ का ग्राम्यनिवास पुरछपर पर्गने के उत्तर-पूर्व नूरनगर में था। जब गंगा इसके निकट बहती रही होगी तब यह स्थान अवश्य ही रमणीय रहा होगा। किन्तु गंगा से दूर होने पर जैसा दलदल आदि युक्त दुरवस्था में पड़े हुये नगर का सम्राज्ञी अपने निवास के लिये क्यों चुनने लगी।

तैमूर ने भी अपनी पुस्तक में दोआबे के धावे का वर्णन करते हुये लिखा है कि मेरठ छोड़ने के बाद वह मंसूरा होता हुआ 'पीरोज़पुर" गया। यह स्थान या तो हस्तिनापुर पर्गने का फीरोज़ पुर हो सकता है, या १७ मील उत्तर भुकड़हेड़ी पर्गने में शुक्रताल के निकट का। वहाँ से वह गंगा के किनारे किनारे १५ कोस चलकर तुगलकपुर पहुँचा, जो (जैसा कि उसके वर्णन से प्रतीत होता है) अवश्य ही गंगा-तट पर रहा होगा। तुगलकपुर एक अच्छा स्थान है। अकबर के शासनकाल में भी यह एक पर्गने का सदर मुकाम था। किन्तु अब यह सोलानी नदी का सदर मुकाम था। किन्तु अब यह सोलानी नदी के तट पर स्थित है और गंगा से लगभग बारह कोस पड़ता है। ऐसा मालूम पड़ता है कि वर्तमान गोर्धनपुर पर्गना उस समय गंगा के उस पार रहा होगा। भुकरहेड़ी के नीचे बाँगर फिर गंगा से दूर हटने लगता है, यहा तक कि जिले के दक्षिण में खादर फिर छः मील चौड़ा हो जाता है।

दूर से देखने में खादर एक चौड़ा चौरस मैदान सा प्रतीत होता है, जिसमें स्थान स्थान पर खेत नजर आते हैं। साधारणतया इसमें निम्न कोटि की घास और कहीं झाऊ के झाड़ों के समूह ही मिलते हैं। वृक्ष कम हैं और जाड़े में जब घास सूखने लगती है तो यह प्रदेश भूरा प्रतीत होता है। कहीं कहीं पर जल की धारायें हैं। जंगली पशु (विशेष कर सुअर) बहुत हैं और कृषि को नुकसान पहुँचाते हैं। पशु चराने के लिये यह स्थान अवश्य ही बहुमूल्य है, और बहुत से पशुओं का इससे निर्वाह भी होता है।

इस जिले में गंगा तट पर शुक्रताल एक प्राचीन स्थान है। कहते हैं कि शुकदेव जी ने राजा परीक्षित को इसी स्थान पर कथा सुनाई थी। शुकदेव जी पादुकाओं का मन्दिर एक टीले पर बसा हुआ है, जिस पर एक वगद का वृक्ष है। इस स्थान पर और भी मन्दिर और धर्मशालायें बनी हुई हैं। यहां नवाब नजीबुद्दौला ने एक किला बनवाया था।

मेरठ

इस जिले में गंगा मुजफ्फरनगर के पूर्व में बहकर आई है। नदी की धार साधारणतया स्थित है, यद्यपि कुछ स्थानों (पूठ पर्गना में) पर कटाव हो रहा है और वहां खादर बराबर बदलता चला जा रहा है। ऐसा मालूम पड़ता है कि पुराने समय में गंगा ने अवश्य ही बहुत अधिक पटाव किया होगा। एक जनश्रुति के आधार पर उसने हस्तिनापुर के प्राचीन नगर को नष्ट कर डाला था।

गंगा का उपयोग अब आने जाने के लिये कुछ विशेष नहीं होता है। नारोरा पर बांध बँध जाने के कारण व्यापार के लिये यह मार्ग बन्द हो गया है। सौ मन बोझ ढोने वाली नावें अब भी चल सकती हैं, किन्तु उनका भी कुछ विशेष उपयोग नहीं होता है। इस मार्ग के रुक जाने का एक अन्य कारण रेलों का बन जाना भी है। धारा का उपयोग सिंचाई के लिये भी नहीं होता है। क्योंकि तट से वह बहुत दूर पड़ता है।

धार की गति भी बदला करती है। जुलाई और अगस्त में नावें ४५ मील प्रतिदिन (२४ घंटा) की रफ़्तार से उतरती हैं। सितम्बर और अक्तूबर में इनकी रफ़्तार केवल १५ से २० मील तक ही रह जाती है, किन्तु जाड़े के महीनों में तो आठ या नौ मील से अधिक नहीं होती है।

गंगा के खादर के पूर्व भाग में बांगर है इसके नीचे-नीचे लगभग तीन चौथाई भाग में बूढ़ गंगा बहती है। बूढ़ गंगा, गंगा से बहुत सी धाराओं द्वारा सम्बन्धित है। यह मुजफ्फरनगर से फीरोजपुर ग्राम के निकट इस जिले में प्रवेश करती है और गढ़मुक्तेश्वर के निकट गंगा से मिल जाती है। किम्बदन्ती के अनुसार यह गंगा का एक पुराना पेंदा है। इसका समर्थन तैमूर के उस वाक्य से भी होता है जो उसने अपनी पुस्तक में लिखा है कि "मैंने गंगा के तट पर फीरोजपुर में डेरा डाला"। यह नदी किसी भी उपयोग में नहीं आती है। केवल इसके किनारे उगी हुई घास कुर्सियाँ या चटाई बुनने के काम में आती है। हस्तिनापुर के सामने कुछ झीलों की सहायता से बूढ़ गंगा एक बड़ा द्वीप बनाती है।

खादर में घास के जंगल उगे हुये हैं। जो सुअर आदि जंगली पशुओं से पूर्ण हैं। यहाँ की मिट्टी हल्की और निम्न कोटि की है। जिले के उत्तरी भाग में कटी हुई जमीन लगभग ७ मील चौड़ी है किन्तु दक्षिण की ओर वह बराबर संकरी होती चली गई है। पृथ्वी का धरातल भी उत्तर से दक्षिण की ओर नीचा होता जाता है। यहाँ तक कि पूंठ की मिट्टी केवल धान और ईख उगाने योग्य रह जाती है।

यहाँ के खादर में पन्नी घास अधिक पाई जाती है। यह पशुओं के लिये हानिकारक है। फिर भी इस जिले में पशु पालने का व्यवसाय होता है। और यहां के पशु अच्छे समझे जाते हैं। इनमें गाय, बैल घोड़े खच्चर विशेष हैं। गधे केवल कुम्हार ही पालते हैं।

इस जिले में गंगा के तट पर गढ़मुक्तेश्वर और पूठ केवल दो ही स्थान मुख्य हैं।

गढ़मुक्तेश्वर एक उच्च कगार पर स्थित है। पश्चिम में सरायें हैं। पूर्व में नाज की मंडी है। फौजी पड़ाव नगर के पूर्व में है। नगर घना बसा हुआ है। यद्यपि जमीन रेतीली है किन्तु पीने का पानी तीस से पचास फुट की गहराई पर मिल जाता है। यहाँ लकड़ी और बांस का व्यापार होता है, जो देहरादून और गढ़वाल से बहकर आते हैं।

कहते हैं कि यह स्थान हस्तिनापुर का एक मुहल्ला था। इसका उल्लेख भागवत पुराण और महाभारत दोनों में आया है। इसका नाम मुक्तेश्वर महादेव के नाम पर पड़ा है, जिनका मन्दिर और नृगकूप सड़क के किनारे बने हुये हैं। कार्तिकी पूर्णिमा को यहाँ एक बड़ा भारी मेला लगता है। इसमें लगभग दो लाख यात्री भाग लेते हैं। यात्रियों में जाट और गूजर विशेष होते हैं। ये लोग सपरिवार बैलगाड़ियों में बैठकर आते हैं जो इनकी रंगबिरंगी पोशाक के कारण बड़ी सुहावनी मालूम पड़ती हैं। गंगास्नान करके ये लोग उच्च कगार पर स्थित गंगा मन्दिर में दर्शन करने जाते हैं।

गढ़मुक्तेश्वर एक ऐतिहासिक स्थान भी है। फारसी की इतिहास पुस्तकों में इसका वर्णन आया है। मीर भवन नामक एक मराठा सैनिक ने यहाँ के एक प्राचीन दुर्ग का जीर्णोद्धार किया था। अब उसका स्थान केवल एक मिट्टी का टीला है।

गढ़मुक्तेश्वर से आठ मील दक्षिण में स्थित है इसका प्राचीन नाम पुष्पवता है।

हस्तिनापुर के राजाओं का उद्यान यहीं था। पूठ में आकर खादर समाप्त हो जाता है क्योंकि यहां बांगर बिल्कुल धारा के निकट तक आ जाती है।

बुलन्दशहर

गंगा इस जिले में सब से प्रथम सियाना पर्गना में प्रवेश करती है। यहाँ इसका पेंदा निम्न श्रेणी के रेत का है, जो लगभग तीस फुट तक चला गया है। इसके बारह फुट तक चिकनी मिट्टी और कंकड़ है, जिसके नीचे फिर १८ फुट तक भूरा रेत भरा है। नदी में रेत (Shoals) पड़ जाया करता है, और गहरी धार अपना स्थान बदलती रहती है। स्थान परिवर्तन के कारण उत्तरी-पूर्वी तट से बड़े बड़े खंड बराबर कटा करते हैं, जिनकी मिट्टी अन्य स्थानों पर जाकर जमा हो जाती है। दक्षिणी-पश्चिमी किनारा

बहुत कम परिवर्तित होता है। इसे कठोर चिकनी मिट्टी और कंकड़ के तट सुरक्षित किये हुये हैं। यह बाढ़ की सीमा से भी लगभग बीस फुट ऊंचे हैं। ऐसे ही तटों पर अहार, अनूप शहर, राजघाट और रामघाट बसे हुये हैं। इन तटों के नीचे धार गहरी और स्थिर रहती है इनमें से कुछ कम से कम सौ वर्ष प्राचीन हैं। वर्षा में गंगा पार जाना नावों के लिये भी कठिन हो जाता है। गंगा जल इस समय गंदला होने पर भी इतना मीठा होता है, कि लोग कुएँ का जल छोड़ कर उसे ही पीते हैं। जाड़े में यह फिर निर्मल हो जाता है। इसका तापमान भी इस समय ५०° के लगभग होता है। गंगा में साल भर नावें चल सकती हैं, यद्यपि फरवरी और मार्च में यह कहीं कहीं बहुत उथली हो जाती है। किन्तु नारोरा पर बांध बँध जाने से आना-जाना लगभग बन्द ही हो गया है।

यहाँ खादर केवल एक संकरी पट्टी मात्र है, जो बागर और गंगा के बीच में फैली हुई है। गंगा बाढ़ के समय जो चिकनी मिट्टी इसमें ले आती है, वह इसे बहुत उपजाऊ बना देती है। ऐसा मुबारकपुर और रामघाट में हुआ है इससे यहाँ पर अच्छी फसलें उगाई जाती हैं। यह दोनों ही स्थान कंकड़ और चिकनी मिट्टी के तटों से सुरक्षित हैं। रामघाट की रक्षा, नारोरा पर बनाये गये नहर के बांधों द्वारा भी होती है। यहाँ की पृथ्वी स्वभावतः नम रहती है, जिस से ऊख भी बिना सिंचाई किये उग आती है। यदि कहीं आवश्यकता पड़ी भी तो ढेंकुली वाले कुयें खोद लिये जाते हैं इन स्थानों के अतिरिक्त खादर में आम-तौर से खरबूजे आदि ही उगते हैं। कहीं बाजरा आदि भी बोया जाता है। अधिकांश उजाड़ है। इस पर घास और झाऊ के घने जंगल हैं जिनमें सुअर आदि जंगली पशु आश्रय पाते हैं। इनके उत्पात से खादर में कृषि करना और भी कठिन हो जाता है। यद्यपि इस जिले में चरागाह कुछ विशेष नहीं किन्तु फिर भी यहाँ के पशुओं की दशा अच्छी है। गाय, बैल, घोड़े और खच्चर पाले जाते हैं।

गंगा तट पर अहार नामक एक प्राचीन स्थान है। यहाँ से कच्ची सड़कें सियाना और अनूपशहर को जाती हैं। गंगापार मुरादाबाद जिले में जाने के लिये नाव भी मिलती हैं। यहाँ पर प्राचीन मन्दिर कई हैं, जिनमें अम्बिकेश्वर महादेव का स्थान बहुत प्राचीन माना जाता है। शिवरात्रि और दशहरा पर बड़े बड़े मेले लगते हैं। दो मील दक्षिण में मोहम्मदपुर ग्राम में अम्बिका देवी का मन्दिर है। चैत्र और आश्विन में नगराज के अवसर पर यहाँ मेला लगता है। यह स्थान रुक्मिणी का निवास-स्थान बतलाया जाता है। यहीं श्रीकृष्णजी ने उनका हरण किया था। अहार अहि और हर से बना है। महाराज जन्मेजय ने नागर ब्राह्मणों की सहायता से नागयज्ञ यहीं किया था। इन लोगों को पृथ्वी देकर सम्मानित किया गया था। नागर परिवार यहाँ अब भी पाये जाते हैं।

अहार से आठ मील दक्षिण अनूपशहर है। यहाँ से पक्की सड़क बुलन्द शहर और अलीगढ़ दोनों ही स्थानों को जाती है। गंगा पार जाने के लिये नावों का पुल है जहाँ से मुरादाबाद, बदायूँ और चन्दौसी को सड़कें जाती हैं। मुख्य बाजार बुलन्द शहर वाली सड़क पर स्थित है। वेवस्टरगंज में दुकानें अच्छी बनी हुई हैं। एक सराय भी हैं। कार्तिक की पूर्णिमा और फाल्गुन में यहाँ मेले लगते हैं।

अनूपशहर बड़गूजर राजा अनूपराय ने जहाँगीर बादशाह के शासनकाल में बसाया था। सन् १८५७ पानीपत की तीसरी लड़ाई के पहिले अहमद शाह अब्दाली ने अपना डेरा यहीं डाला था।

यहाँ से आठ मील दक्षिण कर्णवास है। कहते हैं कि इसे राजा कर्ण ने बसाया था। कर्ण शिला नामक एक स्थान यहाँ अब भी बना हुआ है। इसके पास कल्याणी देवी का प्राचीन मन्दिर है, जिसमें नगराज पर बड़ा मेला लगता है। कर्णवास में गंगा दशहरा पर एक बड़ा मेला लगता है, जिसमें लगभग एक लाख मनुष्य भाग लेते हैं।

यहाँ से तीन मील दक्षिण राजघाट है। यहां कोई तीर्थ नहीं हैं। अलीगढ़ से चन्दौसी जाने वाली रेल का पुल यहाँ बना हुआ है। एक रेल का स्टेशन भी है। अधिकतर यात्री कार्तिक स्नान और गंगा दशहरा के समय रामघाट न जाकर यहीं गंगा स्नान कर लेते हैं।

यहाँ से चार मील दक्षिण नारोरा है। लोअर (निचली) गङ्गा नहर यहीं से निकाली गई है। नहर के लिये एक बांध गङ्गा में बांधा गया है, और उसे स्थिर रखने के लिये और भी बांध किनारे पर बने हुये हैं। यहाँ से एक पक्की सड़क राजघाट स्टेशन तक जाती है। नहर के किनारे ही अफ़सरों के बङ्गले और दफ्तर बने हुये हैं। पास ही बाधूगंज नामक एक बाजार, डाकखाना और सराय है।

यहाँ से चार मील दक्षिण रामघाट नामक सुप्रसिद्ध तीर्थ है। यहाँ समस्त भारत से यात्री गंगा स्नान के लिये आते हैं। मुख्य मेले कार्तिकी और बैसाखी पूर्णिमा और गंगा दशहरा पर लगते हैं। राजघाट से रेल निकल जाने के कारण यहाँ के मेले अब उतने बड़े नहीं होते हैं, जैसे कि पहिले हुआ करते थे। कहा जाता है कि इस नगर को कृष्ण के भाई बलराम ने कोयल में कोलासुर नामक दैत्य का बध करने के बाद बसाया था।

मुरादाबाद

बिजनौर से निकल कर गंगा मुरादाबाद जिले में आती है। यहाँ यह जिले की पश्चिमी सीमा पर बहती है। किन्तु यहाँ इसका पेंदा इतना अस्थिर रहता है कि गांव के गांव इस जिले से मेरठ जिले में या मेरठ से इस जिले में परिवर्तित हुआ करते हैं। कांकाठेर स्टेशन के निकट गंगा पर रेल का पुल बना हुआ है। इसके बचाव के लिये यहाँ पर बांध बांधे गये हैं, जिससे इस स्थान पर धारा स्थिर रहती है। किन्तु यहाँ से बड़े बड़े परिवर्तन हुआ करते हैं, और वार्षिक बाढ़ के उपरान्त धारा का स्थान बहुधा बदला हुआ ही पाया जाता है। यह भय किया जाता है, कि यदि गंगा कटाव करती हुई महावा तक पहुँच गई तो नारोरा पर बने हुये गंगा-नहर के केन्द्रस्थान बेकार हो जायँगे। गंगा को पूर्व की ओर आने से रोकने के लिये कई बार उद्योग हो चुका है। रक्षा के बांध बंध जाने से भय का स्थान कुछ दक्षिण अवश्य हो गया है, किन्तु मिटा नहीं है। अब गंगा पूर्व की ओर सिरसा ग्राम के निकट मुड़ती है और इस सुन्दर ग्राम को नष्ट भी कर डाला है।

खादर में बहती हुई बहुत सी छोटी छोटी धारायें आकर गंगा में मिली हैं। इनमें से कुछ तो गंगा की छोड़ी हुई पुरानी धारायें हैं, किन्तु कुछ में ऊँचे स्थानों का बहुत सा पानी बह बह कर आता है। उत्तर में कृष्णी और बैया नामक दो छोटी छोटी धारायें आती हैं। ये आजमपुर के निकट धाव नामक झील में पड़ जाती हैं। बैया इससे निकल कर टिगरी के निकट गन्दौली पर गंगा से मिल जाती है। आजमपुर से चार मील दक्षिण देउठी के निकट इसी जलाशय में से पश्चिमी बगड़ निकली है। यह सिंहाली के निकट बसई सैन्सैलो तक झीलों की एक पंक्ति में होकर बहती है। गजरौले के निकट चाकीखेरा नामक छोइया जो बछरावाँ के निकट से निकलती है इसमें आकर मिली है। यहाँ दलदल से निकल कर यह नदी दक्षिण पश्चिम की ओर घूम जाती है। किन्तु कुछ ही दूर आगे यह दक्षिण की ओर फिर मुड़ती है। हसनपुर से निकट नालाजी नामक एक दूसरी छोइया इसमें आकर मिली है। यहाँ से जिला बदायूँ की सीमा तक यह खादिर के ही मध्य में बहती है और यहाँ इसे लोग महावा के नाम से पुकारते हैं।

हसनपुर के दक्षिण में कुन्डो के निकट ऊपर वाला दलदल समदा झील के रूप में परिवर्तित हो जाता है, क्योंकि कलेला छोइया का जल आकर इसमें एकत्रित होता है। यहीं से पूर्वी बागड़ या टिक्टा निकली है। यह इस दलदल से शीघ्र ही निकल कर जब्दा या झरीवाली झीलों के पश्चिम में बहने लगती है। बाढ़ के समय में इसका पानी इनमें मिल जाता है। खरामानी के निकट सैयदनगली से निकल कर एक छोइया इसमें मिली है। बहुत सी छोटी छोटी धारायें जिनके बहुधा नाम भी नहीं है, आकर महावा और टिक्टा में मिली हैं। बाढ़ के समय में गंगा का जल, इन दोनों को अन्तर्गत करता हुआ झीलों तक पहुँच जाता है। इससे इस भू-भाग की खरीफ फ़सल को बहुत हानि पहुँचती है। गंगा का खादर इस जिले में एक चालीस मील लम्बी संकुचित पट्टी में स्थित है। यह उत्तर में दो मील चौड़ा है। वहाँ से बढ़ते बढ़ते दक्षिण में आठ मील चौड़ा हो गया है। इसका क्षेत्रफल लगभग ३६९ मील है। नदी के तट पर एक बड़ी उपजाऊ पट्टी है, जिस

पर झाऊ के घने जंगल उगे हैं। यह जङ्गल वार्षिक बाढ़ में गंगा द्वारा छोड़े गये रेत पर बड़ी शीघ्रता से उग आते हैं। इसके बाद खुला खादर मिलता है, जो जल की अनेक धाराओं से भली भांति सुसज्जित है। यह सब प्रदेश बाढ़ के अंतर्गत पड़ता है। जिससे यहाँ की पृथ्वी की उपज को बहुत हानि पहुँचती है। परिणाम स्वरूप जन संख्या बहुत कम है। खेत कहीं कहीं ही देखने को मिलते हैं। जङ्गली सुअर और हिरण के झुन्ड के झुन्ड फसल की बर्बादी किया करते हैं। बहुत से भाग में व्यर्थ घास उगी हुई है। बबूल या कीकर के भी बन हैं, जो पतेल के समान मूल्यवान हैं। इसके बाद एक ऊँची पट्टी पड़ती है। जिसे महावा नदी ने दो भागों में विभाजित कर दिया है। यहाँ पृथ्वी शुष्क, कठोर और निकम्मी है। इस पर ढाक के घने बन और खजूर के वृक्ष उगे हुये हैं। दक्षिण की धरती कुछ अच्छी है। इसी से यहाँ कुछ गांव आबाद हैं। किन्तु अन्य स्थानों में केवल खानाबदोश ही पाये जाते हैं। इनकी जीविका का साधन कृषि न होकर ढोर चराना ही है। यह लोग यहाँ रेह आदि एकत्रित करके निम्नकोटि का शीशा भी बनाते हैं, जिसकी चूड़ियाँ बनती हैं। इसके भी पूर्व में बांगर के नीचे नीचे एक जलाशयों की पंक्ति चली गई है। यह नदी के रूप में सम्बन्धित हो जाते हैं। किन्तु अधिकतर यह झीलों के ही रूप में रहते हैं। बांगर का पानी बह कर इनमें आता है, और बाढ़ के समय गंगा भी सम्पूर्ण खादर को डुबोती हुई यहाँ तक पहुँच जाती है। इसी से खरीफ की फसल का भविष्य हमेशा दुविधा में रहता है। और पृथ्वी को भी नुकसान पहुँचने का भय हमेशा बना रहता है। सूखे वर्षों में रबी की फ़सल नई ज़मीन और दलदल की पट्टी में उग आती है। यदि साल अच्छी हुई तो समस्त भाग की फ़सल अच्छी हो जाती है। उत्तरी खादर के घास के मैदान मूल्यवान हैं। यहाँ ज़मीन्दारों को चरवाही से अच्छी आमदनी रहती है। यह लोग लकड़ी ईंधन और घास बेंच कर भी धन कमाते हैं।

बदायूँ

गंगा इस ज़िले की सीमा पर लगभग तिरानवे मील तक बहती है। इसका बहाव राजपुरा पर्गना में होता है। वहाँ से यह आसदपुर, सहसवान, उझानी, ऊसेहाट होती हुई उस स्थान पर इस जिले को छोड़ती है, जहाँ फर्रुखाबाद, शाहजहाँपुर और बदायूँ जिले मिलते हैं। यह अपना पेंदा बराबर परिवर्तित किया करती है, जिससे इस ज़िले का क्षेत्रफल बराबर बदला करता है। यहाँ इसमें बहुत से द्वीप निकल आते हैं। यहाँ पर तटों की यह विशेषता है कि यदि एक ओर ऊँचा है तो दूसरी ओर ढाल। नारोरा पर गंगा का बांध बंध जाने से और उसी के सिलसिले में जो और बांध बांधे गये हैं, उनके कारण से बाढ़ के समय में आसदपुर पर्गने में कम नुकसान पहुँचता है। बबराला के निकट और कछला पर दो पक्के पुल बंधे हुये हैं। इनमें से एक के निकट से आरम्भ होकर एक बांध छै मील तक गया है। इससे इसके पीछे वाला प्रदेश सुरक्षित हो गया है। और यहाँ हरे हरे भरे खेत लहलहाते हुये दिखाई पड़ते हैं। इस के अतिरिक्त नदी तट के अन्य स्थानों का भाग्य हमेशा दुविधा में रहता है और यद्यपि बेला बहुत उपजाऊ है पर यदि गंगा पूर्व की ओर आने लगे तो यह गुण शीघ्र ही नष्ट हो सकता है।

बूढ़ और गंगा के बीच में खादर की तराई है। इसकी पूर्वी सीमा पर उथले जलाशय हैं। उत्तर में छोइया है। दक्षिण में सहसवान पर्गना में यह महावा में मिल जाती है। वहाँ से इसके स्थान पर भी झीलों की एक पंक्ति रह जाती है। पहिले कडवारों अथवा छोटी छोटी धाराओं द्वारा इनका जल गंगा में पहुँचता था, किन्तु अब इन सब में रेती भर गई है। दलदल बहुत हो गये हैं। कृषि और आबादी बहुत कम हो गई है। इसके बाद ही खादिर का मुख्य भाग है। इसके ऊँचे भाग में जहाँ पृथ्वी अच्छी है और कुएँ खोदे जा सकते हैं, खेती होती है और पैदावार भी अच्छी है। फिर भी कहीं कहीं ऊसर दिखलाई पड़ता है और गन्नौर तहसील के अन्तर्गत एक बड़े भाग पर ढाक का बन है। गन्नौर और सहसवान में इस भाग में बहुत सी छोटी छोटी धारायें बहती हैं। इनका मार्ग अति विषम और अस्थिर है। जब ये अपने किनारों को तोड़ कर बह निकलती है या

स्थान परिवर्तन करती हैं तो बहुत हानि होती है। इनमें मुख्य महावा है।

महावा का उद्गम ज़िला मुरादाबाद में है। यह इस ज़िले में राजपुरा पर्गना में प्रवेश करती है। यहाँ गंगा इससे केवल दो मील दूर रह जाती है, और वर्षा में दोनों का जल एक भी हो जाता है। किन्तु राजपुरा ग्राम के निकट यह पूर्व की ओर मुड़ जाती है। सहसवान में इसमें छोइया आकर मिलती है। यहाँ से दक्षिण बहती हुई उझियानी पर्गना में यह गंगा से मिल जाती है।

महावा संगम के बाद खादर की पृथ्वी में उन्नति अवश्य देखने को मिलती है। हरे भरे लहलहाते हुये खेत बराबर देखने में आते हैं, यद्यपि इनके बीच बीच में ऊसर और ढाक के बन भी मिलते हैं। यह दृश्य ऊसेहाट और उझियानी दोनों ही पर्गनों में दिखाई पड़ता है। नदी के समीप की नई ज़मीन को बेला कहते हैं। गंगा की धार के पश्चिम की ओर हटने के कारण इसका विकास बड़ी तीव्र गति से हुआ है। बेला अधिकतर सहसवान और गन्नौर में ही देखने में आता है। क्योंकि ज़िले के दक्षिण भाग में गंगा उत्तर की ओर बढ़ रही है, जिससे यह दक्षिण का समस्त भाग बेला के रूप में परिवर्तित होता जा रहा है। इस संकरी पट्टी में मटियार की एक पतली तह रेत के ऊपर फैली हुई है। इसके बीच बीच में उजाड़ स्थान हैं, जिनमें रेत के टीले या झाऊ के घने जंगल नजर आते हैं। पृथ्वी बड़ी उपजाऊ है, और उस पर कीमती फसलें उग सकती हैं। किन्तु दूसरी बाढ़ में यदि इस पर नई मिट्टी पड़ जाय तो यह उपजाऊ नहीं रहती है।

खादर बनैले पशुओं से पूर्ण है। जङ्गली सुअर, भेड़िये, हिरण, नीलगाय, गीदड़, लोमड़ियाँ और खरहे विशेष हैं।

इस ज़िले में कछला नामक स्थान पर गंगा का एक बड़ा मेला लगता है। बदायूँ से यह १७ मील पर स्थित है। बरेली-मथुरा जाने वाली सड़क यहाँ होकर निकली है। एक सड़क सहसवान से भी आती है। बदायूँ से कासगंज जाने वाली रेल का स्टेशन और पुल भी यहीं है। यहाँ पुलिस का नाका, डाकखाना, सराय, कांजीघर और अफ़ीम की कोठी है। यह स्थान खरी (sulphate of soda) के धन्धे के लिये प्रसिद्ध है। यह फ़र्रुखाबाद आदि स्थानों को यहाँ से भेजा जाता है। गंगा दशहरा पर यहाँ एक बड़ा मेला लगता है।

गंगा के इसी तट पर कछला से छः मील पर ककोरा नामक स्थान है। यहाँ पर कार्तिक-पूर्णिमा को एक बड़ा मेला है। जो समीपवर्ती कादिरचौक आदि अन्य ग्रामों में भी फैल जाता है। इस मेले में लगभग तीन लाख मनुष्य भाग लेते हैं। अधिकतर यात्री मथुरा, फ़र्रुखाबाद, दिल्ली, रुहेलखंड और दोआब से आते हैं। इस मेले में वस्त्र, धातु और चमड़े का सामान, गाड़ियों और मवेशियों का खूब व्यापार होता है।

एटा

गंगा लगभग ३२ मील तक इस ज़िले की उत्तरी सीमा पर बहती है। पुरानी बांगर से इसकी दूरी तीन मील से दस मील तक रहती है। किम्बदन्ती के अनुसार स्थान-परिवर्तन आठ या नौ सौ वर्ष पूर्व हुआ होगा। किन्तु ऐसा मालूम पड़ता है। कि यह बात अकबर के समय के बाद हुई है। धारा अब फिर अपने पुराने स्थान पर आ रही है, और इस सम्बन्ध में काफी कटाव हुआ है, जो अब भी जारी है। गंगा पर कछलाघाट और कादिरगंज में नावों के पुल हैं जो वर्षा में तोड़ दिये जाते हैं। पहिले इस ज़िले से रुई, नील और तेलहन नावों पर लाद कर बाहर भेजा जाता था किन्तु व्यापार के लिये अब यह मार्ग बन्द सा हो गया है। मल्लाह, कहार, धींवर आदि जातियाँ जो पहिले इस व्यवसाय को करती थीं, अब खेती करने लगी हैं या मछली पकड़ कर जीविका उपार्जन करती हैं।

गंगा के पूर्व पेंदे में अब बूढ़ गंगा नामक एक धारा बहती है। इसका स्थान भी बांगर से दूर ही रहता है। बांगर को यहाँ के लोग पहाड़ के नाम से पुकारते हैं। इसकी औसत ऊंचाई २० .फ़ुट है। कहीं कहीं ३० या ४० .फ़ुट तक हो गई है। किन्तु सब स्थानों पर एक सी नहीं है। कहीं कहीं तो ढालू होते होते बिलकुल तराई में मिल जाती है। पर कहीं कहीं फिर उठ कर दीवाल के समान हो जाती है या किसी

दुर्ग की मीनार के समान प्रतीत होने लगती है। बूढ़ गंगा बहुत धीमी चाल से टेढ़ी मेढ़ी होकर बहती है। बहुधा इसके मार्ग में रेत के टीले या नरकुल के समूह बाधा डाले रहते हैं। इस कारण जब कभी वर्षा अधिक हो जाती है, तो इसका जल चारों ओर फैल जाता है, और अधिक समय तक टिक कर हानि पहुँचाता है। नहर विभाग ने इसके सुधार के लिये अच्छा उद्योग किया है। इसे खोद कर गहरा और सीधा किया गया है। प्रति वर्ष इसकी सफ़ाई की जाती है, जिससे नरकुल आदि नहीं उगने पाते हैं।

गङ्गा और पहाड़ (बांगर) के बीच के इलाके को तराई के नाम से पुकारते हैं। यह कहीं कहीं दस मील तक चौड़ी है। इसका क्षेत्रफल ३९९ वर्गमील है। इस प्रदेश के अंतर्गत फैजपुर-बदरिया, निधपुर, सोरों का आधा भाग, पटियाली का एक तिहाई, पचलाना, साहाबार, आजम नगर पर्गनों के भी कुछ भाग आ जाते हैं। यहाँ की पृथ्वी बहुत उपजाऊ है। इस में हरा भाग (बनस्पति सम्बन्धी भाग) बहुत है। इसी कारण यहाँ के किसान क़ीमती फसलें उगाते हैं। गेहूँ तो लगातार बोते हैं। तराई का सब से बहुमूल्य भाग गङ्गातट पर ही स्थित है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें ऊख के लिये सिंचाई तक की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इससे कुछ ही हारती हुई जमीन बूढ़गङ्गा के तट पर है। तट से दूर जाने पर धीरे धीरे जमीन की अच्छाई भी कम होती जाती है। बूढ़ गङ्गा के दक्षिण में पृथ्वी बहुत निम्नकोटि के रेत या ऊसर की है किन्तु पहाड़ (बांगर) के निकट पृथ्वी फिर अच्छी हो चलती है। यहाँ ऊख और गेहूँ के खेत फिर दिखलाई पड़ने लगते हैं।

ऊपर यह उपजाऊ मिट्टी खोद कर देखो जाय तो नीचे रेत ही रेत मिलता है। इससे जहाँ ऊपर का पर्त गहरा है वहाँ ही पृथ्वी अधिक उपजाऊ है। जमीन चौरस कहीं भी नहीं है। इस से अधिकतर मिट्टी आकर गड्ढे आदि नीचे स्थानों ही में जमा हुई है।

जहाँ पर खेती नहीं होती है वह स्थान पशु चराने के काम में आते हैं। यह कार्य अहीर या गड़रिया ही करते हैं इन लोगों को यहाँ चरवैया, चौपैया या ग्वाला के नाम से पुकारते हैं। उजाड़ स्थानों में ढाक के बन है। गङ्गा और बूढ़ गङ्गा की पटरियों में नरकुल खूब होता है। गांव वाले इनके ऊपर की घास, जिसको गांडर के नाम से पुकारते हैं, और सेंठा को छप्पर आदि छाने के काम में लाते हैं। दलदलों में खस नामक घास भी पाई जाती है। इसे इत्र निकालने और टट्टियां बनाने के काम में लाते हैं। यह कार्य सम्पूर्णतया कंजर लोगों के हाथ में है।

इस जिले में गङ्गा से चार मील पर बूढ़ गङ्गा के तट पर सोरों नामक एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। सम्पूर्ण भारत से यात्री मथुरा जाकर यहाँ आते हैं। वे बूढ़ गङ्गा और गढ़ियाघाट पर गङ्गा स्नान भी करते हैं। सब से प्रसिद्ध मेला पूर्णिमा का अगहन में होता है। बूढ़ गङ्गा यहाँ पर हरिपदी नामक एक तालाब बनाती है। इस में यद्यपि बहुत समय से मनुष्यों की अस्थियां पड़ती चली आ रही हैं, किन्तु वे सब तीसरे ही दिन जलरूप हो जाती हैं। यात्री लोग इसका जल भर भर कर ले जाते हैं। इसमें १८ पक्के घाट बने हुये हैं। बहुत से मन्दिर भी बने हुए हैं और पीपल के बृक्ष भी हैं। यहां लगभग तीस धर्मशालायें हैं, जिन्हें ग्वालियर और भरतपुर के धनाढ्य व्यक्तियों ने ही अधिकतर बनाया है। इस छोटे से नगर की प्रायः सभी सड़कें और गलियां पक्की हैं।

सोरों का असली नाम ऊकलक्षेत्र था। जब विष्णु भगवान ने बाराह अवतार लेकर हिरण्यकश्यप का बध किया तब से इसका नाम शूकर क्षेत्र पड़ गया है। पुराने नगर के स्थान पर एक टीला है, जिसे लोग किला के नाम से पुकारते हैं। कहते हैं कि अभी ढाई सौ वर्ष भी न हुये होंगे जब गङ्गा जी इसी के नीचे बहती थीं। अब इस पर केवल शेख जमाल का मक़बरा और सीताराम जी का मन्दिर ही बाक़ी है। पर इसके ऊपर बड़ी बड़ी ईंटें बिखरी हुई हैं और दीवालों के चिन्ह सब स्थानों पर मिलते हैं। जनश्रुति के आधार पर इसका निर्माण राजा सोमदत्त ने किया था। किन्तु इसकी नींव राजा वेणु चक्रवर्ती के हाथों पड़ी बतलाई जाती है। यद्यपि कई एक मन्दिर बहुत

प्राचीन बतलाये जाते हैं, किन्तु बाराहजी और सीताराम जी के स्थान ही मुख्य हैं। यह कहा जाता है कि सीताराम जी के मन्दिर को औरंगजेब ने नष्ट कर दिया था। इसका जीर्णोद्धार सन् १८६० ई० में एक वणिक् सज्जन ने कराया था। इसके एक शिला लेख पर ११२४ सम्बत् पड़ा हुआ है, जिससे इसकी प्राचीनता निर्विवाद है।

गङ्गातट पर एक और ऐतिहासिक स्थान कादिरगञ्ज नामक है। इसका पुराना नाम चिल्ला छीन है। यहाँ टैला ठाकुर निवास करते थे। शुजात खां ने यहाँ एक दुर्ग निर्माण कराया, जिसका दरवाजा अब भी देखने को मिलता है। इसी ने इसका नाम बदल कर अपने एक पूर्वज कादिरदाद खां के नाम पर कादिरगंज रख दिया। शुजात खां डोरी के युद्ध में रुहेला सरदार हाफिज रहमत खां से लड़ते हुये मारा गया। उसका मकबरा यहाँ बना हुआ है।

शाहजहाँपुर

गंगा इस जिले की सीमा पर लगभग १६ मील तक बहती है। नदी की गहरी धार शाहजहाँपुर की सीमा के बाहर पड़ती है, किन्तु उसकी कई शाखायें और छूटी हुई धारायें इस जिले के अंतर्गत हैं। गंगा का प्रभाव इस जिले पर नहीं के बराबर है। कोई भी बड़ा ग्राम या नगर इसके तट पर नहीं है। इसके तट पर रेत के उजाड़ खंड हैं। इनमें लम्बी घास और झाऊ के जंगल हैं। केवल भरतपुर में गंगा पार जाने के लिये नाव का प्रबन्ध है। यहाँ एक मन्दिर, एक डाकखाना और एक स्कूल है। यहाँ ढाई घाट के नाम से एक बड़ा प्रसिद्ध मेला लगता है, जिसमें लगभग पचास सहस्र मनुष्य आते हैं। यह कार्तिकी पूर्णिमा के अवसर पर होता है। इस जिले में इससे बड़ा दूसरा मेला नहीं लगता है।

फर्रुखाबाद

गंगा सबसे प्रथम इस जिले की उत्तरी सीमा पर बहती है। वहाँ यह इस जिले को बदायूँ और शाहजहाँपुर के जिलों से पृथक करती है, किन्तु उस स्थान से जहाँ कम्पिल, शम्साबाद पश्चिमी और अमृतपुर के पर्गने मिलते हैं, गंगा दक्षिण की ओर मुड़ जाती है। और अलीगढ़ तहसील को जिले के मुख्य भाग से पृथक करती है। सिंगीरामपुर के निकट यह फिर सीमा पर आ जाती है। वहाँ से यह फर्रुखाबाद और हरदोई के जिलों को पृथक करती हुई बहती है। इस जिले की अन्य सब नदियाँ इसकी सहायक हैं। वर्तमान तट पर कुसुमखोर और दाईपुर दो ही मुख्य स्थान हैं। फतेहगढ़ से गहरीधार दो मील दूर है, यद्यपि वर्षा में जल निकट आ जाता है। फ़र्रुखाबाद भी घटियाघाट से दो मील है, जहाँ से पार जाने के लिये नाव मिलती है। किन्तु पुराने उच्चतट पर जो गंगा का पहिला किनारा था, कन्नौज, कम्पिल, चिलसारा, शम्साबाद, और कायमगंज आदि नगर स्थित हैं। यद्यपि गंगा अपना स्थान बराबर परिवर्तित किया करती है, किन्तु इसमें यह विशेषता पाई जाती है कि वह जिस ओर को चल पड़ती है, उसी ओर वर्षों तक धीरे धीरे बढ़ती चली जाती है। कई सौ वर्षों तक कन्नौज का परित्याग किये रहने के बाद अब मालूम पड़ता है कि गंगा फिर उसके उच्चतट के नीचे बहेगी। पार जाने के लिये नाव का प्रबन्ध बहुत से स्थानों पर है। घटियाघाट पर तो एक नावों का पुल भी प्रति वर्ष बनता है।

गंगा जब एक स्थान का परित्याग कर देती है, तो वहाँ छोटी मोटी धारा बहती रहती है। उसे ही बूढ़ गंगा के नाम से लोग पुकारते हैं। ऐसी ही एक धारा कम्पिल तक आकर दो भागों में विभाजित हो जाती है। इनमें से एक तो उत्तर की ओर बहती हुई गंगा में मिल जाती है, किन्तु दूसरी धारा शम्साबाद से छः मील पश्चिम अजीजाबाद के निकट गंगा से मिली है। दूसरी धारा बहुत उथली है, यहाँ तक कि कहीं कहीं तो यह बिलकुल मालूम ही नहीं पड़ती है।

गंगा तट की नीची जमीन को इस जिले में तराई के नाम से पुकारते हैं। गंगा की धार और उस ऊँचे तट (जहाँ कि किसी जमाने में गंगा बहती थी,) के बीच की समस्त पृथ्वी इसमें आ जाती है। फर्रुखाबाद से इब्राहीमपुर तक गंगा अब इस तट के निकट ही बहती है। इससे तराई का इलाका दो भागों में विभाजित हो जाता है। एक भाग जो फ़र्रुखाबाद से

ऊपर पड़ता है और दूसरा जो इब्राहीमपुर से नीचे पड़ता है। उत्तरी भाग जिसका अधिकांश कायमगंज तहसील के अंतर्गत है एक त्रिकोण के आकार में बना हुआ है। इसकी चौड़ाई सात मील से अधिक कहीं भी नहीं है और इसका क्षेत्रफल १६६ वर्गमील है। यह फ़र्रुखाबाद के निकट आकर समाप्त हो जाती है, जहाँ से गंगा उच्च तट के समीप ही बहने लगती है। कन्नौज से छः मील उत्तर इब्राहीमपुर के निकट गंगा फिर उच्च तट से दूर जाने लगती है। धार और इसके बीच में आठ वर्गमील का एक तराई का टुकड़ा आ जाता है। काली नदी इसके उत्तर में बहती है और फीरोजपुर कटरी के निकट गंगा मिल जाती है।

तराई का एक और भाग गंगा पार अलीगढ़ तहसील में है। इसका क्षेत्रफल १८८ वर्गमील है। इस में अमृतपुर, खरबातमऊ और परमनगर के पर्गने आ जाते हैं। इसका कोई भाग ऐसा नहीं जहाँ बाढ़ के समय गंगा का जल न पहुँच सके। जब वर्षा अधिक होती है तो इसका अधिकांश पानी से दो तीन दिन तक डूबा रहता है। तब यहाँ बहुत सा रेत जमा हो जाता है।

तराई में यद्यपि ढाक के जंगल अब बहुत नहीं हैं, किन्तु लोगों ने यहाँ बाग़ खूब लगा रक्खे हैं। इससे यह भाग बड़ा सुहावना और सायादार प्रतीत होता है। यहाँ के उच्च तट पर तम्बाखू खूब बोई जाती है। इसके लिये यह जमीन बड़ी ही उपयुक्त समझी जाती है। तराई में तरबूज़ भी खूब बोये जाते हैं। इनके लिये फतेहगढ़ प्रसिद्ध है।

इस ज़िले में सबसे पहला प्रसिद्ध स्थान कम्पिल है। इसे कम्पिल ऋषि ने बसाया था। जनश्रुति के अनुसार यह राजा ब्रह्मदत्त की राजधानी थी। महाभारत में इसका वर्णन आया है। यह दक्षिण पांचाल की राजधानी थी। राजा द्रुपद की कन्या द्रौपदी का स्वयंवर यहीं हुआ था। यहाँ वाले लक्ष्यभेद का स्थान राजा द्रुपद का क़िला और द्रौपदीकुंड अब भी दिखलाते हैं।

यहाँ एक थाना, एक डाकघर एक स्कूल और एक कांजीघर है। यहाँ से कायमगंज, पटियाली, अलीगंज और सूरजपुर के घाट को सड़कें जाती हैं। ग्राम के उत्तर में बूढ़ गंगा के तट पर विश्रांतियों की एक श्रेणी अब भी मौजूद है। यहाँ रामेश्वरनाथ और कालेश्वर नाथ महादेव के प्रसिद्ध मन्दिर हैं।

शम्साबाद कम्पिल से छः मील पड़ता है। यह एक ऊँचे टीले पर बसा है, जिसके नीचे पहले गंगा बहती थी और अब भी थोड़ी दूर पर बूढ़ गंगा बहती है। यहाँ की खास सड़क ईंटों से पटी हुई है। इसके दोनों ओर दुकानें और मकान हैं। एक ओर नाज की मन्डी भी है। इसमें इमली और नीम के वृक्षों के कारण खूब छाया रहती है। इस नगर में कच्चे पक्के सब तरह के मकान बने हुये हैं। कुछ नवाब और पठानों ने तो बहुत अच्छे मकान बनवाये हैं।

खोर का पुराना नगर, जिसके स्थान पर शम्साबाद बसाया गया है, यहाँ से आध मील पर स्थित है। खोर को तेरहवीं शताब्दी में राठौर राजा जयसिंह देव ने बसाया था। तब से अकबर के शासनकाल तक गंगा इसके नीचे ही बहती रही है। सन् १८८८ ई० में शम्सउद्दीन बादशाह ने जल के मार्ग से आकर इस पर चढ़ाई की और इसे जीत कर शम्साबाद बसाया। खोर का अवशेष अब एक टीला ही रह गया है, जो कोट के नाम से पुकारा जाता है। यह लगभग तीस फुट ऊँचा है। इस पर अज़ीज़उल्ला और सय्यद सालिम नामक मुसलमान सन्तों के मक़बरे हैं।

फ़र्रुखाबाद नवाब मुहम्मद खाँ ने फर्रुखसियर बादशाह के नाम पर बसाया था। इसके चारों ओर एक दीवाल बनाई गई थी। इसके अन्दर जाने के लिये दस दरवाजे हैं। उत्तर में गंगा, पैन, कुतुब, दक्षिण-पश्चिम में मऊ, जसमई, खंडिया और दक्षिण-पूर्व में मदार, लाल, कादिरी और अमेठी दर्वाज़े हैं। दिवालों के घेरे के अन्दर केवल मकान ही मकान नहीं हैं। १८५९ एकड़ के क्षेत्रफल में केवल ९७५ एकड़ पर ही मकान बने हैं। बाक़ी भाग खेत, बाग़ या खुले मैदान हैं। यहाँ का पानी बहुत अच्छा है और लगभग प्रत्येक घर में एक कुआँ है। यहाँ पक्के घाट जिन्हें यहाँ वाले विश्रान्ति के नाम से पुकारते हैं

दर्शनीय हैं। विशेषकर शाह बिहारीलाल की विश्रान्ति तो बहुत अच्छी बनी हुई है। साध लोगों के छापे हुये पर्दे और लिहाफ यहाँ से समस्त भारत में और बाहर भी भेजे जाते हैं। पीतल और लोहे के बर्तनों का काम भी अच्छा होता है।

फरुखाबाद से तीन मील दक्षिण में फतेहगढ़ है। यह फरुखाबाद का ही एक भाग है। यहां सरकारी दफ्तर और छावनी है। इनमें काम करने वालों के मकान भी बने हुए हैं। एक बाजार भी है, किन्तु यहाँ का व्यापार कुछ भी उन्नतिशील नहीं है।

फतेहगढ़ से ग्यारह मील दक्षिण सिंघीरामपुर है। यह एक सुप्रसिद्ध तीर्थ है, जहां कार्तिकी पूर्णिमा और गंगा दशहरा का मेला लगता है। पहिले इस में दूर दूर से आकर लोग बड़ी संख्या में भाग लेते थे, किन्तु अब उतनी भीड़ नहीं लगती है। यहाँ पर ग्वालियर के राव साहब की दो विश्रांतियां और एक खदीपुर महराज की विश्रान्ति अब भी बनी हुई है। एक शृंगी ऋषि का मन्दिर है जिसमें बहुत से लोग दर्शन करने जाते हैं।

कन्नौज इस जिले के बिल्कुल दक्षिण में है। यह नगर किसने और कब बसाया, इसका कुछ भी पता नहीं चलता है। पुराणों में इसकी कथा इस प्रकार है। राजा कुशि यहां राज्य करता था। उसके सौ कन्यायें थीं। उन्होंने महर्षि वायु से विवाह करने से इन्कार कर दिया, जिस पर ऋषि ने श्राप दिया कि तुम सब कुबड़ी हो जाओ। इससे इसका नाम कन्या-कुब्ज या कुब्ज महिलाओं का देश पड़ गया।

एक और कथा के अनुसार इसे चन्द्रवंशी राजा गाधि ने बसाया था और इसका नाम गाधिपुर रक्खा यह एक सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान है। इसका वर्णन विदेशी यात्रियों ने भी किया है। पाँचवीं शताब्दी में चीनी यात्री फाहियान ने लिखा है कि यह नगर गंगातट पर स्थित था और इसमें दो विहार बने हुये थे। सातवीं शताब्दी में ह्वान सांग ने इसका बड़ा विशद वर्णन किया है। हर्षवर्धन यहां राज्य करता था और उसके अधिकार में समस्त उत्तर के देश थे। तीन सौ वर्ष बाद महमूद ने अपने हमले के पहिले इसका वर्णन करते हुये लिखा है कि उसने एक अनुपम नगर देखा जो आकाश में अपना सिर ऊँचा किये हुये खड़ा है। शक्ति और बनावट में इसका मुकाबिला कोई नहीं कर सकता है। गजनी के गवर्नर को एक पत्र में उसने लिखा कि "इसमें एक सहस्र संगमरमर के बड़े दृढ़ महल हैं। मन्दिर भी असंख्य हैं। अवश्य ही इसके बनाने में अरबों दीनार खर्च हुये होंगे। ऐसा ही एक और नगर बनाने में लगभग दो सौ वर्ष लगेंगे"। किन्तु महमूद के हमले के बाद कन्नौज फिर न सम्हल सका और दिन पर दिन उसकी अवनति होती ही गई।

वर्तमान समय में कन्नौज एक छोटा सा नगर है। चारों ओर कोसों तक टीले ही टीले नजर आते हैं। आजकल यह इत्र के व्यवसाय के लिये प्रसिद्ध है। जो यहां से समस्त भारत और बाहर विदेशों को भी भेजा जाता है।

हरदोई

गङ्गा इस जिले की दक्षिणी-पश्चिमी सीमा पर बहती है। इसका प्रवेश कटियारी पर्गना के गदनपुर ग्राम में होता है। हैदराबाद के निकट रामगङ्गा इससे आकर मिली है। इस जिले में गङ्गा पर कोई पुल नहीं है किन्तु नाव का प्रबन्ध कई स्थानों पर है। इस का पेंदा बहुत चौड़ा है और धारा अपना स्थान बराबर परिवर्तन किया करती है। गहरी धार का नियम होने के कारण गांव इस जिले से फरुखाबाद में या फरुखाबाद से इस जिले में परिवर्तित हुआ करते हैं। धारा आजकल फरुखाबाद की तरफ जा रही है, जिससे हरदोई का क्षेत्रफल बढ़ेगा। बाढ़ के समय जल सम्पूर्ण तराई में फैल जाता है। इस से रेत जमा होने लगता है और पृथ्वी की उर्वरा शक्ति नष्ट हो चलती है। बाढ़ के बाद गङ्गा कई सोते छोड़ जाती है जो दूसरी बाढ़ में अधिक हानि पहुँचाने में बड़े सहायक होते हैं। सांड़ी के पश्चिम का समस्त भाग समुद्र के समान मालूम पड़ने लगता है। सोतों में मुख्य गरगुइया है। यह बिलग्राम में उच्च तट के नीचे नीचे ही बहता है। कच्छनदाव पर्गने को कल्यानी नदी तो उन्नाव जिले तक बहती हुई चली जाती है। भरका, करना, गहा और सोता नामक अन्य धारायें हैं। यह सब तराई के अंतर्गत हैं।

जाड़े में सूख जाने के कारण इनका प्रयोग सिंचाई के लिये नहीं हो सकता है।

कानपुर

गङ्गा इस जिले की उत्तरी-पूर्वी और पूर्वी सीमा पर बहती है। इसके तट पर बिल्हौर, शिवराजपुर, कानपुर और नरवल की तहसील और पर्गने हैं। इसका पेंदा चौड़ा और रेतीला है। इसमें गहरी धार अपना स्थान बराबर परिवर्तित किया करती है। प्रति वर्ष रेत के तट बनते हैं और कट जाते हैं। इससे वर्षा में गंगा बहुत चौड़ी हो जाती है, किन्तु जाड़े में फिर सिकुड़ कर छोटी हो जाती है। इस घटने का एक कारण इसके जल का नहरों में बँट जाना भी है। इसी कारण से इसका उपयोग अब व्यापार के लिये अधिक नहीं होता है। यद्यपि छोटी छोटी नावें अब भी चलती हैं। इसके तट पर मटियार की एक पतली पट्टी है, किन्तु आम तौर से रेत ही रेत दिखाई पड़ता है। इसी कारण से कृषि के दृष्टिकोण से इन कटरियों का मूल्य कुछ विशेष नहीं है किन्तु कानपुर तहसील में बिठूर से कानपुर तक का भाग उपजाऊ है। मालूम पड़ता है कि किसी समय गंगा इसमें होकर बहती थी, किन्तु अब यह भाग बाढ़ के समय भी सुरक्षित रहता है। इसे कछार के नाम से पुकारते हैं। यहाँ बिना सिंचाई किये हुये ही अच्छी अच्छी फसलें उग आती हैं।

कटरी के बाद बांगर आ जाता है। किन्तु यह बहुत स्थानों पर कटा हुआ है। इन कटानों से छोटे छोटे नद-नाले प्रान्त का पानी गंगा में बहा लाते हैं। बांगर सब स्थानों पर एक समान ऊँचा नहीं है। शिवराजपुर पर्गने में दुर्गापुर में और जाजमऊ में टीले के रूप में परिवर्तित हो जाता है। किन्तु अन्य स्थानों में यह कहीं कुछ ऊँचा और कहीं कुछ नीचा है। इसके बीच बीच में खेत आ जाते हैं। लगातार कटाव होते रहने के कारण पृथ्वी की उर्वरा शक्ति नष्ट हो गई है। कुछ समय के लिये भी कृषि बन्द कर देने से वह बड़ी कठोर हो जाती है। जल के अधिक गहराई पर होने के कारण सिंचाई भी नहीं हो पाती है।

इस जिले में गंगा की सहायक ईसन और नोन दो ही नदियाँ हैं। ईसन का उद्गम अलीगढ़ जिले के दक्षिण-पूर्व में ही है। वहाँ से यह एटा, मैनपुरी, फर्रुखाबाद के जिलों में बहती हुई इस जिले में उत्तर की ओर से मकनपुर के निकट प्रवेश करती है। यहाँ यह बिल्हौर तहसील में दक्षिण-पूर्व की ओर बहती हुई महगाँवा के निकट बाँगर को काटती हुई गंगा में मिल जाती है। ईसन एक चौड़ी रेतीली घाटी में होकर बहती है। यह प्रति वर्ष खूब कटाव करती है। जिससे इसके तट पर रेत के टोले बन गये हैं। उत्तरी तट पर तो इनका धरातल ठीक है किन्तु दक्षिणी तट पर बहुत ढलवां हैं। इससे पृथ्वी बहुत ऊँची नीची हो गई है। और कहीं पर अन्दर की ओर कई मील तक ऐसी ही चली जाती है।

गंगा की दूसरी सहायक नोन है। इसका यह नाम कदाचित इसके जल के खारी होने के कारण पड़ा है। इस कारण बिल्हौर तहसील के उत्तरी भाग में जहाँ से यह निकली है, रेह की अधिकता है। इस भाग में जिसका प्राचीन नाम झावर गाँव है, दलदल बहुत है। यहीं से जल आवश्यकता से अधिक होने पर बह कर नोन नदी के रूप में आ जाता है। वास्तव में यह नदी के रूप में शिवराजपुर में आ पाती है। ग्रांड ट्रंक रोड पार करने के बाद इसकी घाटी गहरी हो जाती है। इसके किनारे कटी हुई भूमि बहुत है। इनका विस्तार बिठूर के नीचे गङ्गा संगम होने तक बढ़ता ही गया है।

गङ्गा की तीसरी सहायक पांडु नदी है। किन्तु इसका संगम गङ्गा से इस जिले के बाहर फतेहपुर में तीन मील चलकर हुआ है। पांडु का उद्गम फर्रुखाबाद में हुआ है। इस जिले में यह बिल्हौर तहसील के नैला ग्राम में प्रवेश करती है। वहां से बिल्हौर, शिवराजपुर, कानपुर, नरवल तहसीलों में टेढ़ी मेढ़ी बहती हुई फतेहपुर जिले में चली जाती है। वहां से फिर उत्तर-पूर्व को लौट पड़ती है और कई मील तक इस जिले की सीमा पर बहकर फिर पूर्व की ओर घूम कर गङ्गा से मिल जाती है। इस भाग में कई नदियाँ आकर मिली हैं। बिल्हौर में नई, शिवराजपुर में लौखा, कानपुर में भोंनी और नरवल में फगइया और भोंनरी हैं। इसका पेंदा अधिक गहरा हो जाता है और इसका प्रभाव निकटवर्ती जमीन पर भी पड़ता है। शुरू शुरू में इसका स्थान

स्थिर है किन्तु कानपुर के उत्तर में पहुँच कर जमीन बहुत रेतीली हो जाती है। यहाँ की मिट्टी का रंग कुछ लाल है। नरवल में यह बात कुछ अधिक हो जाती है। अन्तिम कुछ मीलों तक पड़ोस की पृथ्वी से इसका धरातल कुछ अधिक नीचा हो गया है। यहाँ इसके तटों की पृथ्वी उपज और कृषि के लिये सर्वथा अनुपयुक्त है।

इस ज़िले में सबसे पहिला स्थान गङ्गा तट पर नाना मऊ है। बिल्हौर से यह चार मील है। एक कच्ची सड़क द्वारा यह उससे सम्बन्धित भी है। गङ्गा पार जाने के लिये नाव मिलती है। पार बांगर मऊ को एक सड़क जाती है। अकबर के शासनकाल में यह एक परगने की राजधानी था। यहां का श्मशान घाट प्रसिद्ध है। जैसा कि निम्नलिखित किंवदन्ती से मालूम होता है—

"देशभर का मुर्दा नानामऊ का घाट"

इसके बाद सरैयाँ घाट मिलता है। यह पक्का बना होने के कारण प्रसिद्ध है। आम तौर से गङ्गा तट के घाट कच्चे हो हैं। इसके निकट खेरेश्वर महादेव का प्राचीन मन्दिर है। यहाँ मेला लगता है।

यहाँ से पाँच मील पर बन्दी माता घाट है। यहां बन्दी माता का प्राचीन मन्दिर है।

फिर बिठूर मिलता है। यह एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। कहा जाता है ब्रह्मा ने सृष्टि का निर्माण करके यहाँ अश्वमेध यज्ञ किया था। वह स्थान अब भी ब्रह्मावर्त घाट के नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ पर रामायण के बाल्मीक ऋषि निवास करते थे। सीताजी ने ऋषि के आश्रम में यहीं पदार्पण किया था और लवकुश का जन्म यहीं हुआ था। कहा जाता है कि रमेल (रणमेल) ग्राम में राम और लवकुश का फिर से मेल हुआ था। यहाँ कपासेश्वर जो काकपक्षेश्वर (श्रीरामजी का एक नाम का अपभ्रंश मालूम पड़ता है,) का मन्दिर है।

वर्तमान काल में सिंहासनच्युत करके बाजीराव पेशवा यहीं रक्खे गये थे। यहाँ कई पक्के घाट हैं, किन्तु सब भग्नावस्था में हैं, केवल राजा टिकैत राय के घाट का जीर्णोद्धार हुआ है।

बिठूर के बाद कानपुर का सुप्रसिद्ध व्यापारिक नगर पड़ता है। इसने इतनी शीघ्रता से उन्नति की है, कि अब इसे उत्तर-भारत की औद्योगिक राजधानी कहते हैं। यह ई० आई० आर० की प्रधान शाखा पर स्थित है। जी० आई० पी० आर० और बी० बी० एण्ड सी० आई० आर० का भी स्टेशन है। सुप्रसिद्ध ग्रांड ट्रङ्क रोड यहाँ से गुजरती है। उरई और लखनऊ को भी पक्की सड़कें यहाँ से जाती हैं। इन्हीं सब सुविधाओं के कारण यह इतना उन्नति शील हो गया है। यहाँ से रुई, खाद्य पदार्थ मसाले, चमड़े का सामान, विलायती वस्तुएँ और कपड़ा बाहर भेजा जाता है। इस नगर में कपड़ा बुनने, सूत कातने, चमड़े की वस्तुएँ बनाने और चीनी के बड़े बड़े कारखाने हैं।

गङ्गा तट पर यहाँ कई घाट बने हुये हैं। इनमें सरसैया घाट मुख्य है। अन्य कर्वला, महसोनिया गऊघाट, राजाघाट, तिदनरिया, बनिया, तिवारी, बारी, सुखघाट, भैरोंघाट, श्मशानघाट, मैगजीन घाट अस्पतालघाट, परमिटघाट और गोराघाट हैं।

उन्नाव

उन्नाव में केवल गंगा ही एक बड़ी नदी है जो इसकी पश्चिमी और दक्षिणी सीमा पर बहती है। किन्तु इसका प्रयोग न सिंचाई न व्यापार के लिये ही होता है। कानपुर के निकट इस पर रेल और सड़क का पुल बना हुआ है। पार जाने के लिये नाव का प्रबन्ध कई स्थानों पर है। किन्तु इनका प्रयोग अधिकतर पैदल यात्री ही करते हैं। इनमें से किसी को भी हम व्यापार का मार्ग नहीं कह सकते हैं। सिंचाई के लिये इनका उपयोग न हो सकने का कारण तटों का ऊंचा होना है। इससे पानी को खेतों तक पहुँचाने के लिये कई बार उठाने की आवश्यकता पड़ती है। खेत भी गहरी धार से दूर पड़ते हैं। जिससे पानी ले जाने के लिये रेत पर रास्ता बनाना पड़ता है। इस विधि से रेत में बहुत सा जल नष्ट हो जाता है। गहरी धार अपना स्थान बराबर परिवर्तित किया करती है। इससे उसके तटवर्ती खेत भी स्थिर नहीं रह पाते हैं यह कठिनाई दक्षिणी भागों में अधिक है। यह सत्य है कि गङ्गा के छोड़े हुये सोतों से तराई की उपजाऊ भूमि में खेत सींचे जा सकते हैं। किन्तु

इनकी संख्या कुछ अधिक नहीं है। गङ्गा की गति उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व को ओर है। किन्तु कई स्थानों पर वह तेजी से मोड़ खाती है। ऐसे मोड़ सफीपुर तहसील में जाजमऊ और औरंगाबाद पर है, उन्नाव में शंकरपुर पर और डौंडिया खेरा में शेरपुर पर है।

गङ्गा तट पर मटियार भूमि बराबर चली गई है किन्तु उसमें कटाव हर साल होता रहता है। इसके बाद ही एक नीची भूमि का प्रदेश है। इसमें कुछ आबादी भी है। किन्तु वार्षिक बाढ़ के प्रभाव के कारण अधिकांश उजाड़ पड़ा है।

बाढ़ से अधिक हानि खरीफ की फसल को पहुँचती है। रबी की फ़सल इस प्रदेश में भी अच्छी होती है। यह बात बांगरमऊ और फतेहपुर चौरासी दोनों ही पर्गनों में देखने में आती है। इसका कारण यह है कि इसके लिये सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। यदि आवश्यकता हुई भी तो पानी बहुत नज़दीक मिल जाता है। इसी तरह की तराई परियर और सिकंदरपुर के पर्गनों में भी पाई जाती है। परियर का अधिक भाग गंगा की तराई ही में स्थित है। इसमें गङ्गा के कई सोते हैं, और परिवर्तन बराबर हुआ करता है। यही बात सिकंदरपुर के बाबत भी कही जा सकती है। किन्तु उन्नाव पर्गने में तराई फिर सँकरी हो गई है। इसी कारण से कदाचित रेल का पुल यहां बना है। रेल के पुल के बाद फिर तराई चौड़ी होने लगती है। उन्नाव और हरहा के उजाड़-खंडों में घास, झाऊ और बबूल के बन हैं। खरीफ की फसल का भाग हमेशा संशय में रहता है। बैसवाड़े पर्गने में भी आबादी कम है। बबूल के बन खड़े हुये हैं। बाढ़ का कोप इस प्रदेश पर हुआ ही करता है।

तराई उच्चतट के समीप जाकर समाप्त हो जाता है। इनके नीचे नीचे जलाशयों का एक सिलसिला चला गया है। कल्यानी इनमें होकर सफीपुर और मोरहो में बही है। यह नदी गङ्गा में मरौंदा के निकट मिल गई है।

इस जिले में ऊसर जमीन बहुत पाई जाती है। सम्पूर्ण क्षेत्रफल का लगभग पंचमांश ऊसर ही है। इसी से कदाचित यहां बाग बगीचे बहुत हैं। तराई में शृगाल, भेड़िये, जंगली सुअर और सांप खूब पाये जाते हैं।

इस जिले के दक्षिण में डौंडियाखेरा नामक ग्राम गङ्गातट पर स्थित है। इसे संग्रामपुर के नाम से भी पुकारते हैं। इसका इतिहास मनोरंजक है। जिस प्रदेश के अंतर्गत डौंडियाखेरा पड़ता है। इसका प्राचीन नाम बैसवाड़ा (बैस क्षत्रियों का प्रदेश) है। बैस क्षत्रिय राजा शालिवाहन के वंशधर हैं। इस राजा ने उज्जैन के सुप्रसिद्ध राजा विक्रमादित्य को हराकर अपना सम्वत् चलाया था जो शाक सम्वत् के नाम से आज भी प्रसिद्ध है। शालिवाहन से बारहवीं पीढ़ी में राजा अभयचन्द्र और पृथ्वीचन्द हुए। एक बार ये शिवराजपुर के घाट पर गङ्गा स्नान के लिये गये। यहां अरगल की रानी भी स्नान के लिये आई। शिवराजपुर के हाकिम ने उसके खेमें पर धावा किया रानी ने बैस बन्धुओं से सहायता मांगी जिसे देना उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। युद्ध में पृथ्वी चन्द मारे गये किन्तु रानी कुशल पूर्वक अर्गल पहुँच गई। राजा ने कृतज्ञता पूर्वक अपनी कन्या का विवाह अभयचन्द के साथ कर दिया और दहेज में पांच गांव दिये। राजा अभयचन्द ने अपने राज्य को बढ़ाना आरम्भ कर दिया। डौंडियाखेरा के सामने गङ्गा के किनारे अभयपुर नामक ग्राम भी बसाया जो अब भी है। उसने फिर गङ्गा पार कर डौंडियाखेरा के भार लोगों को युद्ध में परास्त कर निकाल दिया और इस ग्राम का नाम संग्रामपुर रक्खा। अभयचन्द से दसवीं पीढ़ी में बाबू रामबख्स डौंडियाखेरा में हुये, इन्हें ब्रिटिश प्रजा के बध करने के अपराध में फांसी दे दी गई। इस वंश के कई वंशज रायबरेली और हैदरगढ़ में ताल्लुकेदार हैं। बैस लोग अपना मूल स्थान डौंडियाखेरा बतलाते हैं। अवध में यह सबसे उन्नतिशील, धनाढ्य और बढ़िया वस्त्र पहिनने वाले हैं। डौंडियाखेरा में बाबू रामबख्स के किले के खंडहर अब भी देखने में आते हैं।

डौंडियाखेरा से तीन मील बकसर है। इसे बकस राक्षस ने बसाया था। कहा जाता है बकस का बध श्रीकृष्ण भगवान ने द्वापर में स्वयं अपने हाथों किया था। यह राक्षस नागेश्वरनाथ महादेव का बड़ा भक्त था। इसने उनका एक मन्दिर भी स्थापित किया था।

उस समय इस ग्राम का नाम बकसर राम था। वैस राजा अभयचन्द ने वक्रेश्वर महादेव के नाम पर इसका नाम बदलकर बकसर रख दिया। यहां श्री चन्द्रिकादेवी का मन्दिर है। चैत्र और आश्विन की अष्टमी को बड़ा मेला लगता है। शिवरात्री पर भी मेला लगता है। कार्तिकी पूर्णिमा को लगभग एक सहस्र मनुष्य स्नान के लिये आते हैं।

रायबरेली

रायबरेली की सीमा पर गङ्गा ५४ मील तक बहती है। गङ्गा के पेंदे की औसत चौड़ाई दो मील है, पर पश्चिम में दस मील तक यह अधिक चौड़ी है। इसमें बारहों महीने नाव चल सकती है और थोड़ा सा व्यापार इस मार्ग से होता भी है, किन्तु वह पहिले की अपेक्षा बहुत कम है। गङ्गा पर इस जिले में एक भी पुल नहीं है। पार जाने के लिये नाव का प्रबन्ध कुछ स्थानों पर अवश्य है।

गङ्गा इस जिले में सरेनी पर्गना के मालिनपुर ग्राम में प्रवेश करती है। वहां से यह दक्षिण-पूर्व में वैरूआ की ओर बहती है। उत्तर की ओर मुड़कर उत्तर-पूर्व की ओर खजूर गांव और डलमऊ को बहती चली जाती हैं, किन्तु गुआना के निकट दक्षिण की ओर घूम जाती है और कटरा बहादुरगंज में इस जिले के बाहर हो जाती है।

गङ्गा की सहायक नदियों में सब से प्रथम छोब है। यह इटौरा बुजुर्ग के जलविभाजक के दक्षिण से निकली है। सोलानी और डलमऊ की सीमा पर बहती हुई शहजादपुर के निकट गङ्गा से मिल जाती है। दूसरी सहायक लोनी है। इसका उद्गम उन्नाव जिले में है। वहाँ से यह दक्षिण पूर्व में खीरों और मिमरी पर्गना की सीमा पर बहती हुई डलमऊ के निकट गंगा से मिल जाती है।

गङ्गा की तटवर्ती भूमि को इस जिले में कछार के नाम से पुकारते हैं। यह प्राचीन उच्च तट और गङ्गा के बीच में पड़ती है। इसकी चौड़ाई आमतौर से दो मील है, किन्तु जहाँ गङ्गा प्राचीन तट के समीप बहती है, वहाँ यह लोप हो जाती है। ऐसा सालों पर्गना के पश्चिमार्द्ध तथा कुछ अन्य स्थानों में हुआ है। कछार दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

एक तो गङ्गा के तटवर्ती चौरस मैदान जो बीच में सोते आ जाने से उच्च तट से पृथक हो गये हैं। इन सोतों में कहीं कहीं रेत भर गया है, और कहीं अब भी जल है। वर्षा में यह भाग जलमग्न रहता है। इसलिये इस पर केवल रबी की फसल ही हो सकती है। बाढ़ के क्षेत्र के अन्तर्गत होने के कारण यहां की भूमि बराबर परिवर्तित हुआ करती है। बहुधा पहिले की उपजाऊ भूमि पर रेत जमा हो जाती है या रेत को चिकनी मिट्टी की एक तह आकर ढक देती है। किन्तु इस तरह के परिवर्तन बहुत शीघ्रता के साथ नहीं होते हैं। आम तौर से कछार के एक अच्छे भाग में कई वर्ष तक खेती होती रहती है। नई भूमि पर कई वर्ष तक खेती हो ही नहीं सकती है। जमा की हुई भूमि अक्सर चिकनी मिट्टी ही होती है। जब यह हल चलाने योग्य हो जाती है तो इस पर खेती होने लगती है। इसी तरह और भी नीची भूमि पर खेती होने लगती है। किन्तु स्थायी रूप से कोई मनुष्य अपनी पूंजी इसमें नहीं लगाता है।

कछार का दूसरा भाग इस धारा और उच्च तट के बीच में स्थित है। इनके अधिकांश पर बाढ़ का प्रभाव नहीं पड़ता है। इसी से इसमें खेती बराबर होती रहती है। रबी की फसल तो हर साल बोई जाती है और थोड़ी बहुत खरीफ भी हो जाती है। इस भूमि का लगान भी अधिक देना पड़ता है क्योंकि इसमें सिंचाई की भी आवश्यकता नहीं पड़ती है।

गंगा तट पर खजूरगांव एक अच्छा नगर है। यह इसी नाम के एक ताल्लुके का सदर मुकाम है। गंगा पार जाने के लिये यहाँ एक नाव का प्रबन्ध रहता है।

यहां से पाँच मील पर डलमऊ है। यह डलमऊ तहसील का सदर मुकाम है। रायबरेली से फतेहपुर जाने वाली सड़क यहां से निकली है। यहां की अन्य सड़कें सालों, इलाहाबाद, लालगंज और उन्नाव को जाती है। नगर एक ऊंचे टीले पर स्थित है। वर्षा ऋतु को छोड़कर वर्ष भर यह स्थान बड़ा स्वास्थ्यकर रहता है। यहां तीन बाजार हैं—चरायमंडी, टिकैतगंज और ग्लीनगंज। यहाँ से चमड़ा, तेलहन और गल्ला कानपुर भेजा जाता है। कार्तिकी पूर्णिमा को यहाँ गंगा स्नान का बड़ा मेला लगता है। इसमें लगभग

डेढ़ लाख मनुष्य भाग लेते हैं। जनश्रुति के अनुसार डलमऊ को राठौर राजा डालदेव ने बसाया था।

फतेहपुर

गंगा इस जिले में सबसे प्रथम बिंदकी पर्गना के उत्तरी भाग में प्रवेश करती है। वहां दक्षिण-पूर्व की ओर एक चौड़े पेंदे में होकर बहती है। खुसरोपुर के निकट उत्तर-पूर्व की ओर १४ मील के लिये घूम जाती है। फिर राजघाट से दक्षिण-पूर्व की ओर बहती हुई गौंटी के निकट इस जिले से बाहर हो जाती है। इस भाग में गंगा के तट पहिले की अपेक्षा अधिक स्पष्ट है। खादर की चौड़ाई भी कम है। जलाला से आगे इलाहाबाद तक इसकी चौड़ाई दो से पांच मील तक रहती है। इस भाग का क्षेत्रफल लगभग दो सौ नव मील है। नदी के निकट की भूमि अधिकतर रेतीली है। इसमें सिंचाई नहीं होती है। परिवर्तन भी हुआ करते हैं किन्तु उतने परिमाण में नहीं जितने कि ऊपर के जिलों में होते हैं। कहीं कहीं धारा के बीच में द्वीप बन गये हैं। किन्तु यह उजाड़ ही है। सुअर, नीलगाय और हिरन आदि जंगली पशुओं से पूर्ण हैं। नदी का धरातल ऊंचा होने के कारण कटी हुई भूमि कम परिणाम में है और वह ढालू भी कम है। इस समस्त भाग में कुयें से सिंचाई हो सकती है। इस प्रदेश में ढाक, बबूल, रियोंज और छेकर के जंगल हैं। करैल, हिंगोट और करौंदा की झाड़ियां भी हैं। सरपत घास बहुत होता है। इन बनों में तेंदुये, भेड़िये, शृगाल और नील गायें पाई जाती हैं। यहां भेड़, बकरियाँ बहुत पाली जाते हैं।

गंगा तट पर शिवराजपुर एक अच्छा स्थान है। यहाँ से मौहर और बिंदकी को पक्की सड़कें जाती हैं। एक कच्ची सड़क औंग, देवमई और कोड़ा को गई है। आबादी अधिकतर गंगा तट पर ही है। लगभग एक मील तक मन्दिरों और घाटों की श्रेणी चली गई है। किन्तु इनमें से कोई भी दो सौ वर्ष से अधिक प्राचीन नहीं है। लगभग सभी जीर्णावस्था में हैं। सभी ईंट और गारे के बनाये गये हैं। केवल एक नक्काशी किये हुये लाल पत्थर का है। इस के पास राजा हिम्मत बहादुर गोसाईं का बनवाया हुआ जगन्नाथ का मन्दिर है। कार्तिकी पूर्णिमा को यहां बड़ा मेला लगता है।

इलाहाबाद

फतेहपुर जिले के उत्तरी सिरे को पार करने के बाद गंगा नदी २३ मील तक इलाहाबाद जिले की सिराथू और इलाहाबाद तहसीलों की उत्तरी सीमा बनाती है। पहले कुछ दूर तक रायबरेली और फिर परतावगढ़ जिले को गंगा नदी इलाहाबाद से अलग करती है। पट्टी नागौर के पास गंगा नदी इलाहाबाद जिले में प्रवेश करती है। गंगा नदी का पेंदा सब कहीं चौड़ा है। यह इस चौड़े पेंदे में अक्सर अपना मार्ग बदलती रहती है। अफजलपुर सातों के बाद गंगा-तट पर कड़ा और शाहजादपुर के पुराने कस्बे पड़ते हैं। इस के आगे गंगा का मार्ग बहुत मोड़दार हो जाता है। गंगा से कुछ दूरी पर कोहखिराज का गाँव (लगान देने वाला) कोहइनाम (लगान न देने वाले) गांव से मिल गया। गदर में कोई बागी लोग हो गये। तब उन का गांव ज़ब्त कर लिया गया। यहां से गंगा के उस पार नौबस्ता जाने को नाव मिलती है। कोहखिराज और बनेढी के आगे गंगा उत्तर में सोराँव तहसील को दक्षिण को इलाहाबाद तहसील से अलग करती है। उत्तर की ओर गंगा तट पर सिगरौर (शृंगवेरपुर) पुराना स्थान है। ऊंचे तट पर एक पाठशाला बनी हुई है। पास ही एक पुराना खम्भा बना हुआ है जिसके ऊपर से शायद पुराने समय में इलाहाबाद शहर को झंडा और नगाड़े द्वारा सन्देश भेजा जाता था। सिगरौर के मरघट घाट में मगर बहुत हैं। लेकिन वे घाट पर स्नान करने वाले यात्रियों को नहीं छेड़ते हैं।

फाफामऊ के पास गंगा अचानक कुछ उत्तर-पूर्व की ओर मुड़ती है। फाफामऊ में ही ईस्ट इंडियन रेलवे का गंगा के ऊपर पुल बना है। यहां पर सड़क का भी पुल है। फाफामऊ से एक लाइन रायबरेली दूसरी प्रतापगढ़ को और तीसरी जौनपुर-बनारस को गई है। फाफामऊ के पास से गंगा फिर संगम और किले के पास तक दक्षिण की ओर मुड़ती है। गंगा और यमुना का संगम पहले किले के ठीक पास था। अब किले से कुछ दूर हट गया है। संगम के

पास गंगा की धार बहुत तेज हो गई है। गङ्गा का सफेद मटीला जल यमुना के गहरे नीले जल से एकदम भिन्न मालूम होता है। कुछ दूर तक दोनों जल एक दूसरे से लड़ते झगड़ते अलग मालूम होते हैं। अंत में गंगा के जल को प्रधानता हो जाती है। संगम के पास गंगा के उस पार झूसी या प्रतिष्ठानपुर इलाहाबाद से भी पुराना स्थान है। यहां गंगा तट पर साधुओं को कुटियां और पाठशाला हैं। यमुना पार अरैल है। यहाँ शिवरात्री को मेला लगता है। संगम सदियों से भारतवर्ष भर में प्रसिद्ध रहा है। भारतवर्ष के दूर दूर भागों में बसे हुये हिन्दू प्रयाग के संगम पर स्नान को लालायित रहते हैं। प्रत्येक वर्ष मकर संक्रान्ति के अवसर पर यहां मेला होता है। हर छठे वर्ष अर्द्ध कुम्भी और बारहवें वर्ष कुम्भ के अवसर पर स्नान करने वाले यात्रियों की संख्या कई लाख हो जाती है। राजा हर्ष के समय में यहां पर करोड़ों रुपयों का दान होता था। आजकल देश में दरिद्रता होने पर भी यहां हर साल हजारों रुपयों का दान होता है। इलाहाबाद से झूसी जाने के लिये गङ्गा के ऊपर बङ्गाल नार्थ वेस्टर्न रेलवे का पुल बना है। नावों का पुल बाढ़ घटने पर हर साल बनता है और वर्षा की बाढ़ आने के पहले ही तोड़ दिया जाता है।

यमुना के ऊपर इलाहाबाद से नैनी और आगे हावड़ा जाने वाली ईस्ट इण्डियन रेलवे का पुल सब से अधिक सुन्दर और मजबूत है। पुल दुहरा है। इसके ऊपर वाले खंड पर रेलवे जाती है। एक (पश्चिम की ओर वाली) लाइन पर रेल गाड़ी नैनी से इलाहाबाद को आती है। दूसरी पर इलाहाबाद से नैनी को जाती है। नीचे वाले खंड में दुहरी सड़क है। पुल से संगम का दृश्य बड़ा मनोहर लगता है। सूर्योदय के समय यह दृश्य और भी अधिक सुन्दर हो जाता है। सूर्यास्त के समय यमुना की ओर वाला भाग बहुत सुहावना लगता है। इसी ओर करेला बाग के पास पानी में उतरने वाले हवाई नावें उतरती हैं। संगम के आगे गङ्गा फिर दक्षिण-पूर्व की ओर मुड़ती है। गङ्गा के उत्तर में फूलपुर और हंडिया तहसील हैं। दक्षिण की ओर करछना और मेजा है।

टोंस के संगम के पास सिरसा नगर है। सिरसा और इलाहाबाद के बीच नावें अक्सर भारी सामान लाती रहती हैं। सिरसा के सामने गङ्गा के बायें किनारे पर लच्छागिर एक पुराना प्रसिद्ध स्थान है। इस ओर गङ्गा के किनारों पर रेतीले टीले हैं। बाढ़ के दिनों में धार अक्सर अपना स्थान बदल देती है। इस पार और उस पार के बीच में धार का धुरा (सीमा) माना जाता है। इससे गांव वालों में हद बन्दी के ऊपर झगड़ा भी हो जाता है। जमनीपुर को इस तरह के झगड़े के कारण आराजी मुतनाजा (झगड़े का क्षेत्र) कहते हैं। बाढ़ के दिनों में गङ्गा का पानी दूर तक फैल जाता है। समद्र तल से इसकी उँचाई २४५ फुट हो जाती है। एक बाढ़ में यह उंचाई २८० फुट के ऊपर हो गई। बाढ़ घटने पर गङ्गा की चौड़ाई सिकुड़ कर बहुत थोड़ी रह जाती है। समुद्रतल से इसकी ऊंचाई केवल २३७ फुट रह जाती है। कई स्थानों पर गहराई इतनी कम हो जाती है कि आदमी बिना नाव की सहायता के ही पैदल इसे पार कर जाते हैं। कुटवा, चक सराय दौलत अली, अकबरपुर, शहजादपुर, कोहइनाम, संजैती, पट्टी नरवर, कोराई उजहनी, उजहनी पट्टी कासिम, उमरपुर निरावन, दारागञ्ज, अरैल, लवाइन, मनैया, डीहा, लकटहा, सिरसा, बिजौर, मदरा मकुन्दपुर, परनीपुर, चौखटा और डींगरपुर में गङ्गा पार करने के घाट हैं। यहाँ गङ्गा पार करने के लिये नाव मिलती है।

गंगा में मिलने वाले नाले भी अपना स्थान बदलते रहते हैं। एक नाले का नाम इसी से बैरगिया पड़ा। इनमें केवल बरसात में पानी रहता है। और ऋतुओं में वे अक्सर सूखे पड़े रहते हैं।

इलाहाबाद जिले में ७८ मील बहने के बाद गंगा नदी मिर्ज़ापुर जिले में प्रवेश करती है।

मिर्ज़ापुर

इस जिले में गंगा पहले पहल भदोही पर्गना के करौंडिया ग्राम में प्रवेश करती है। यहां पर एक चक्कर खाकर दो मील लम्बा प्रायद्वीप बनाती है। वहां से यह कुछ टेढ़ी होकर पूर्व की ओर बहती है विंध्याचल होती हुई मिर्ज़ापुर से उत्तर की ओर घूम जाती है। कुछ दूर जाकर दक्षिण की ओर घूमती

है किन्तु चार ही मील आकर फिर पूर्व की ओर बहने लगती है। चुनार से इसका बहाव उत्तर-पश्चिम को हो जाता है और बनारस से छः मील इधर ही इस जिले की सीमा का अन्त हो जाता है। यदि एक सिरे से दूसरे सिरे तक नापा जाय तो गंगा की लम्बाई इस जिले में केवल ५६ मील है किन्तु मोड़ों के कारण ८४ मील हो जाती है।

नदी का पेंदा बिलकुल रेत और कंकड़ का है दक्षिणी तट ढालू है। यह कंकड़ की तह पर स्थित है, जिस पर साधारण दुमट जमीन का एक कगार है। किन्तु यह नालों द्वारा जो इस ओर से आकर इसमें मिले हैं टूटा हुआ है। इनमें से मुख्य जिरगो है जो चुनार के निकट मिला है। बिलवा, दहवा, खजूरी लिगडा और करनौटी हैं। बहुत साल से गंगा किनारे को तोड़ रही है। किन्तु कोई बहुत उद्दंड या शीघ्र तोड़ नहीं हुआ है। पश्चिमी तट उपजाऊ मिट्टी का बना हुआ है। जिसमें होकर एक सोता आकर यहीं मिला है। हर साल इस पर आकर उपजाऊ मिट्टी जमा होती है जिस पर पानी के स्थान तक खेती होती है जिसमें जाड़े की फसलें और बोरो धान उगाया जाता है।

बरसात में बाढ़ का जल ३८ से ४० फुट तक ऊंचा उठ जाता है। वर्षा ऋतु में चढ़ाव-उतार का दैनिक परिमाण जार्डिन स्किनर ऐन्ड कम्पनी अपनी बरिया घाट वाली फैक्टरी में नोट करती है। गंगा की धार जो जाड़े और गरमी में केवल पाव मील चौड़ी रहती है वर्षा में एक चौड़ी और तेज धार हो जाती है। साधारणतया इसका इतना विस्तार नहीं होता है कि पास पड़ोस के गांव डूब जाँय। किन्तु सन् १८६१ और सन् १८७५ में जो बाढ़ें आई थीं उनमें गंगा ५३ फुट ९ इंच और ५१ फुट १० इंच तक बढ़ गई थी किन्तु उस साल से सबसे ऊंचा स्थान ४८ फुट रहा है—इन सब समयों पर उत्तर की ओर का देश जलमग्न हो गया था। पशु और सम्पत्ति की बहुत हानि हुई थी। गंगा पर सब आकार की देशी नावें चल सकती हैं किन्तु गरमी में नाव चलाना कठिन और दुःखदाई हो जाता है। इस समय गहरी धार नाव चलाने योग्य उस रुपये से रक्खी जाती है जो राजघाट बनारस में चुंगी वसूल करने वाला कलेक्टर देता है। वर्षा में कोई कठिनाई नहीं होती है।

बनारस

गंगा बनारस जिले में बेतावर नामक ग्राम में प्रवेश करती है। यहीं सुभा नाला आकर इसमें मिला है। यहां से सात मील तक गंगा बनारस और मिर्जापुर की सीमा पर बहती हैं। यहां से बनारस और चन्दौली तहसीलों की सीमा बनती हुई गुमती संगम तक जाती है। नदी की प्रगति अर्द्धगोता का वृत्त बनाती हुई है।

इसके तट बाहर की ओर ऊँचे हैं। किन्तु अन्दर की ओर रेती अधिक है। जिस पर झोपड़ा बनाने की घास के सिवा कुछ भी नहीं होता है। कहीं कहीं पर बाढ़ में उपजाऊ मिट्टी आकर जमा हो गई है। जहां कहीं रेत के नीचे मिट्टी है वहां खरबूजे बोये जाते हैं। जिले के प्रथम भाग में इसकी गति उत्तर की ओर है यहाँ दाँया उच्च तट कंकड़ का है। जिसमें कटाव कम होता है मुख्य धार इसके निकट ही बहती है। इससे हवा तेज चलने पर नाविक भय खाते हैं। और कई दिन तक नावें रोके पड़े रहते हैं। बायाँ तट जो देहर अमानत के दक्षिण में मुन्डादेव तक ढालू और अपरिवर्तनशील है। अब रेती में परिवर्तित हो जाता है। वर्षा में यह सब जलमग्न हो जाता है। रामनगर के बाद गंगा अपना दूसरा बड़ा मोड़ उत्तर-पूर्व की ओर खाती है। यहां से गंगा बायें तट को ओर चली जाती है। यहां धार चौड़ी और गहरी है, और असी संगम से वह ऊंचा कगार उठने लगता है। जिस पर बनारस के घर और महल स्थित हैं। दांयी ओर रेती का वह मैदान पड़ता है, जो रेती और उच्च बाढ़ तक फैला हुआ है। रेत के पुल से नदी तट तक पूर्व ही को ओर बहता है। धारा उत्तर या बांये तट तक ही रहती है। यह तट बरना संगम से कुछ दूर आगे तक काफी ऊंचा रहता है। कंकड़ की बहुत सी उन भीतों के कारण इसमें परिवर्तन होने की सम्भावना नहीं है, जिनमें से कुछ जलमग्न हैं। यह इस स्थान को आने जाने के लिये बड़ा भयानक बना देती है।

तातेपुर के निकट धार फिर दूसरे तट की ओर

जाने लगती है और यह तट नीचा और रेतीला हो जाता है। किन्तु दक्षिण को ओर का तट पानी सोखने वाली धरती में परिवर्तित होने लगता है। किन्तु यह कुछ विशेष ऊंचा नहीं होता है और बाढ़ का जल इससे ऊँचा उठ जाता है। कैली में गंगा फिर उत्तर को ओर मुड़ती है, और बलुआ तक इसी ओर बहती चली जाती है। कैली से कन्बर तक लगभग पांच मील दायां तट उसी सोखने वाली मिट्टी का रहता है, किन्तु फिर यह ऊँची कंकड़ की भीत में परिवर्तित होने लगता है। जिनसे नावों को फिर एक अदृश्य भय का सामना करना पड़ता है। किन्तु बलुआ से कन्बर धारा और उच्च तट के मध्य में एक उपजाऊ मिट्टी की अच्छी पट्टी है, जो यहां कुछ दूर तक अन्दर होती जाती है। इस मोड़ के अन्दर जाल्हूपुर परगना में नीची भूमि का एक कई मील चौड़ा फैलाव है। इस के बीच में से एक धार बही है जो कैली मोड़ द्वारा बनाये हुये कोण को काटती हुई वर्षा में चार ग्राम का एक टापू छोड़ती है, जिसमें से मुख्य मुकुटपुर है। यह द्वीप बहुत समय का मालूम पड़ता है। कम से कम १८२२ से इसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। जब इसका वर्णन बनारस के कलेक्टर ने फोर्ट विलियम के मैरीन बोर्ड को एक पत्र लिख कर किया था। उस समय और अब भी यह धारा वर्ष के अधिक भाग में सूखी ही रहती है किन्तु वर्षा में इसमें नावें चलती हैं। बाढ़ में इसका बहुत सा भाग जलमग्न हो जाता है, किन्तु सम्पूर्ण तो कदाचित् ही होता हो। किन्तु ऐसा कभी नहीं हुआ कि गाँव डूब गये हों। यह धारा गंगा से बलुआ के कुछ ऊपर फिर मिल जाती है। बलुआ से गंगा की गति उत्तर पश्चिम हो जाती है। क्योंकि कंकड़ का एक ऊँचा तट इसे उस ओर लौटाता है। वर्षा में इसका कुछ भाग डूब जाने के कारण, नावों को भय रहता है। विशेष कर इस लिये कि पानी भी कुछ अधिक गहरा नहीं है। बायां तट नीचा और रेतीला ही रहता है यह हाल जाल्हूपुर और कटिहर तक रहता है। पिछले वर्षों में यहाँ जमीन को काफी नुक़सान पहुँचा है। नदी उत्तर की ओर मुड़ती है। और फिर उत्तर पूर्व की ओर, और कटिहर के नीचे का नीचा मैदान जहां हर साल बाढ़ में अच्छी मिट्टी जमा होती है। यहां से ऊँचे और रेत के तट में परिवर्तित होने लगता है; जिसके बीच में कंकड़ भी है। उच्च तट के नीचे जदा कदा एक खादिर की पट्टी भी मिलती है, जिसमें जाड़े में कृषि भी होती है। किन्तु वर्षा में डूब जाती है। मोड़ की धार के दूसरी ओर बारा पर्गना में तट नीचा और रेतीला है, यहां बाढ़ में पानी भर आता है। बारा पर्गना के उत्तर में कुछ मील तक गंगा बनारस और गाजीपुर की सीमा के बीच में बहती है। और सैदपुर ग्राम में उस जिले में प्रवेश कर जाती है। धार की गति इस जिले में गर्मी में दो मील प्रति घंटा से भी कम और वर्षा में पाँच मील के औसत तक रहती है, इसकी कमी वेशी गहराई पर निर्भर है। वार्षिक बाढ़ में यह २८ फुट तक पहुँच गई है, किन्तु कुछ अवसरों पर तो इससे बहुत ज्यादा हो गई है। बाढ़ आने से कोई विशेष हानि नहीं होती है खादिर के किसान तो उगी उगाई कृषि के भी नष्ट कर देने पर इसका स्वागत करते हैं। क्योंकि उससे जो लाभ होता है उसके सन्मुख यह क्षणिक हानि कुछ भी नहीं है।

गाजीपुर

गंगा इस जिले का स्पर्श सैदपुर पर्गना के धुर दक्षिण-पश्चिम में करती है और कुछ मील तक बनारस और गाजीपुर की सीमा बनती है। पहिले दो मीलों के पश्चात् यह अपना रुख औरिहार की ओर बदल देती है। दक्षिण पूर्व की ओर मुड़ती हुई अपना यह रुख धानापुर के निकट एक स्थान तक रखती है। यहाँ यह पांच मील के लिये उत्तर पूर्व की ओर मुड़ती है। सैदपुर में नारी पचडियोरा के निकट धारा उत्तर तट की ओर लौटती है। वहां से एक तेज मोड़ लेकर दक्षिण पूर्व की ओर, चौचकपुर और पहाड़पुर के निकट बहती हुई, साधारणतः दायें किनारे की ओर बहती है। कारन्दा के धुर दक्षिण में नदी एक बड़ा मोड़ खाती हुई पहले उत्तर में जमनिया की ओर बहती है फिर उत्तर-पश्चिम में मैनपुर और गंगी संगम तक। इस प्रकार यह कारन्दा के तीन ओर की सीमायें बनाती है। मुख्य धारा यहां बांयी ओर रहती है। किन्तु तट न तो पुख्ता न ऊँचा है। मैनपुर से गंगा उत्तर की ओर हो जाती

है। और उस कंकड़ की भीत के निकट बहती है। जिस पर गाजीपुर स्थित है। किन्तु गाजीपुर से कुछ मील आगे धारा दक्षिण पूर्व की ओर नीची मिट्टी के एक चौड़े मैदान में होकर बहती है। बहुत वर्षों तक पानी तीन धाराओं में विभक्त होकर बड़े बड़े टापू बनाता हुआ बहता था। जो शेरपुर खेतीपुर तालुके के थे। यह धारायें बारा के निकट मिल जाती थीं। किन्तु पानी अब सब दायीं ओर की धारा ही में आ गया है और बाकी दोनों रेत से भर गये हैं। इस तरह जमनिया से बारा तक नदी एक बड़ा घेरा बनाती है जिसमें जमनिया परगना आ जाता है और जिसके केन्द्र में गाजीपुर का नगर स्थित है। बारा से धारा कम चौड़ी होने लगती है। और पूर्व की ओर शाहाबाद में चौसा तक बहती है। यहां से यह उत्तर पूर्व में बक्सर की ओर बढ़ती है, और इस जिले के मुहम्मदाबाद परगने को बिहार प्रान्त की पृथ्वी से पृथक करती है। रसूलपुर पर यह बलिया में प्रवेश कर जाती है। इस जिले में इसकी कुल लम्बाई ६४ मील है।

बलिया

गंगा इस जिले का स्पर्श गढ़ा परगना के धुर दक्षिण करती है। वहां यह कस्ताडीह और बक्सर के बीच में बहती है यह दोनों कंकड़ की ऊँची भीतों पर स्थित है। इसके उपरान्त गंगा का मार्ग उपजाऊ प्रदेशों में है। जिनका बराबर कटाव हो रहा है और पुनर्निर्माण भी होता है। आगे ६४ मील पर दीनापुर तक एक भी स्थायी स्थान नहीं है। बक्सर से यहां तक नदी एक सीधी पंक्ति में जाती है। नदी द्वारा जो परिवर्तन किये गये हैं वे बड़े विशाल रूप में हैं। वर्तमान समय के एक नकशे से पचास वर्ष पहिले के नकशे से तुलना करने पर इस जिले के दक्षिण में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुये हैं। पुराने स्थान सब बह गये हैं, और प्राकृतिक विशेषतायें अब नहीं पहिचानी जा सकती हैं। नदी का गिराव थोड़ा है, और तट जो मिट्टी से ढके हुये अस्थिर रेत के हैं कुछ इञ्च से कुछ फिट तक घने हैं, धारा का ठीक प्रकार से मुकाबिला करने में असमर्थ हैं। बक्सर से पूर्व की ओर गङ्गा मोड़ों का एक समूह है, जिनमें से प्रत्येक उसी दशा में कुछ वर्षों तक स्थिर रहता है। यद्यपि इनकी सीमायें कई मील तक घटा बढ़ा करती हैं। स्थायी तट जो जल्दी से नहीं कट सकते, एक दूसरे से एक से बीस मील तक के अन्तर पर स्थित हैं इन दोनों सीमाओं के बीच में धार का स्थान ऐसे ही परिवर्तित हुआ करता है जैसे हवा में उड़ते हुये झण्डे की तहें। एक ओर तो नदी उन उपजाऊ निर्माणों को काटती है जहां वह मनुष्य के स्मरण में पहिले कभी नहीं आई, और बड़ी निर्दयता से ग्रामों और उद्यानों को उजाड़ रही है तो दूसरी ओर वह एक नये दियारे को फेंक रही है। एक स्थान पर यह बलिया की ओर बढ़ रही है तो थोड़ा नीचे घूम जाती है और शाहाबाद में काटती हुई उत्तर में नई जमीन के विस्तृत मैदान जमा रही है। यह परिवर्तन दोआबा परगना में विशेष तथा बड़े हैं, लगभग यह सम्पूर्ण वर्षा में जलमग्न हो जाता है। जाड़े में यही भूखंड खेतों से लहलहा उठता है, जिसमें न तो ग्राम न सीमा वाले वृक्षों के समूह ही दृष्टिगोचर होते हैं। ऐसे समय में (जब यह स्थान बहुत विस्तृत हैं, या ऐसी भूमि से बहुत दूर हों जो नहीं डूबती) ग्रामों का कोई अस्तित्व नहीं है।

शाहाबाद

गङ्गा इसकी उत्तरी सीमा पर बहती है और इसे गाजीपुर बलिया और सारन जिलों से पृथक करती है। यह शाहाबाद का स्पर्श चौसा के निकट उस स्थान पर करती है जहाँ इसका कर्मनासा से संगम होता है। वहां से यह उत्तर-पूर्व में बक्सर की ओर बढ़ती है बलिया पहुँच कर यह दक्षिण पूर्व की ओर मुड़ती है। सपाही के निकट यह फिर उत्तर-पूर्व की ओर मुड़ जाती है और हल्दी के सामने से इसकी गति पूर्व की ओर हो जाती है। यह गति इसकी सोन संगम तक रहती है जहां यह इस जिले का परित्याग करती है। इसकी दक्षिण की सहायक कर्मनाशा, थोरा, थूरी, गङ्गी और सोन हैं जिनमें से पहिला और अन्तिम ही अलग वर्णन करने के योग्य है। गङ्गा अपने इस भाग में अपने स्थान को बराबर बदलती रहती है बड़े बड़े भूखंड मिट्टी जमा होने से बनते हैं। कभी कभी तो यह स्थायी हो जाते हैं किन्तु साधारणतः दूसरे साल बह जाते हैं।

बिहार के इस खंड का वर्णन चीनी यात्री ह्वान सांग ने किया है। वह भारत में सातवीं शताब्दी में आया था। उससे पता चलता है कि गङ्गा उस समय आजकल से कहीं अधिक दक्षिण में बहती थी। मासर का नगर जिसे वह गङ्गा के तट पर बतलाता है, अब नौ मील की दूरी पर है किन्तु पुराने पेन्दे का उच्च तट अब भी स्थित है, और वह बसर भोजपुर, बिलौरी, बिहिया आरा और कोयलवार के निकट अब भी है। सन् १८६० से गङ्गा धीरे धीरे फिर दक्षिण की ओर बढ़ रही है। बक्सर तहसील में जहाँ तट कड़ी मिट्टी के बने हुये हैं साधारणतया ऊँचे हैं किन्तु नीचे की ओर जहाँ धारा उनमें टक्कर मारती है वे ढालू हो गये हैं। गर्मी में धारा का विस्तार पौन मील का रह जाता है किन्तु वर्षा में यह इसका कई गुना हो जाता है। गङ्गा पर खूब व्यौपार होता है, किन्तु दक्षिण तट पर बक्सर और चौसा दो ही मुख्य स्थान हैं।

पटना

गङ्गा इस जिले की उत्तरी सीमा पर बहती है जो सोन संगम से दुनारा ग्राम तक है। इसकी लम्बाई ९३ मील है। गंगा की धारा बराबर बदलती रहती है। उसमें एक वर्ष द्वीप बन जाते हैं जो दूसरे वर्ष बह जाते हैं। इससे इसके प्रत्येक वर्णन को दूसरे वर्ष ठीक करने की आवश्यकता रहती है।

गङ्गा एक पवित्र नदी है। पटना में हिन्दू उसकी पूजा फूल, मिठाई और बकरों से करते हैं—बकरे कभी कभी जीवित ही गंगा में फेंक दिये जाते हैं और उन्हें मल्लाह उठा ले जाते हैं। धनवान उसमें एक ओर से दूसरी ओर तक कपड़ा बांधते हैं। यह सब गंगा पुत्रों को मिलता है। कुछ साधू महात्मा जलशयन करते हैं जो माघ के महीने में होता है। चार बांस गङ्गा में गाड़ दिये जाते हैं जिनके ऊपर एक छोटा सा चबूतरा बना होता है। इस पर साधू रात भर बिल्कुल नग्न होकर माघ के कड़कड़ाते हुये जाड़े में बैठ कर तपस्या करते हैं।

सारन

गङ्गा इस जिले की दक्षिणी सीमा पर बहती है। यह छपरा के कुछ नीचे घाघरा संगम से सोनपुर के निकट गंडक संगम तक है। जाड़े में इसकी चौड़ाई औसत से एक मील होती है। किन्तु वर्षा में तो कहीं कहीं यह नौ दस मील तक चौड़ी हो जाती है। सन् १८४९ से इसमें बड़े बड़े परिवर्तन हुये हैं जब इसका माप पटना से घाघरा संगम तक हुआ था। बहुत से रेत के तट हैं और धारा में काफी बड़े बड़े टापू हैं जिनका वर्णन करना असंभव और व्यर्थ है क्योंकि वे अक्सर लुप्त हो जाते हैं या फिर बन जाते हैं। सोनपुर से छपरा तक तट ऊँचे और बाढ़ से ऊपर रहते हैं किन्तु इनके पीछे का भाग नीचा है इन तटों के बीच के नालों से बाढ़ का पानी इस भूखंड में जाकर चौर और दलदलों में भर जाता है जो इस जिले में इतने विशेष रूप से हैं। महेन्द्रपुर, शेरपुर और पन्दपुर पर पार करने के लिये नाव मिलती है। बी० एन० ई० आर० के सम्बन्ध में पहलेजा घाट और दीघा घाट के बीच में स्टीमर भी चलता है।

मुजफ़्फ़रपुर

गङ्गा इस जिले की दक्षिणी सीमा पर लगभग बीस मील तक बहती है। हाजीपुर के निकट सिकमारीपुर के पास बड़ी गंडक का संगम है। ई० आई० आर० पर बख्त्यारपुर से धुर उत्तर की ओर यह एक ऐसा स्थान है जहाँ बिना नाव के नदी को पार नहीं कर सकते। धारा एक मील चौड़ी रहती है। किन्तु वर्षा में इसका विस्तार बहुत अधिक हो जाता है।

मुंगेर

गङ्गा इस जिले में ६२ मील बहती है। यह इसका स्पर्श सबसे प्रथम बछवारा रेलवे स्टेशन से कुछ मील पश्चिम में करती है। यह स्थान पटना जिले के बाढ़ के बिल्कुल सम्मुख पड़ता है। वहाँ से इसकी गति ३० मील पर सूरजगढ़ तक दक्षिण-पूर्व की रहती है। मुंगेर के पठार के पास यह एक तेज घेरा डालती है। वहाँ से यह बारह मील के लिये दक्षिण की ओर मुड़ती है और फर वहाँ से पाँच मील के लिये पूर्व की ओर मुड़ती है। जिसके बाद यह इस जिले को त्याग कर भागलपुर में चली जाती है। इस जिले में यह साल भर गहरी और चौड़ी रहती है। वर्षा में यह उत्तर में फरकिया परगने में

बीस मील तक अपना पानी नीचे के भूखंडों पर फैला देती है। कहते हैं पश्चिम में वर्तमान धारा के स्थान से पुराने समय में धारा दस मील उत्तर थी। पूर्व में यह कई बार उस चट्टान के (जिस पर मुंगेर का किला है) पश्चिम और पूर्व की ओर बदल चुकी है। इसमें इसने दियरा के बड़े बड़े खंडों का निर्माण किया है या उन्हें बहा ले गई है। किन्तु बहुत समय से धारा दुर्ग के उत्तर भाग के पास ही रही है।

भागलपुर

गङ्गा भागलपुर जिले में सबसे प्रथम तुलसीपुर में प्रवेश करती है और मुंगेर के फरकिया परगने और भागलपुर के जहाँगीरा परगने के बीच में बहती है। इस जिले में इसका ठीक प्रकार से प्रवेश सुल्तानगंज ग्राम के सामने होता है। यहाँ से आगे यह दो चक्कर खाती है। पहला तो भागलपुर के नगर के उत्तर में और दूसरा कोलगाँव के दक्षिण में जहां यह एक पहाड़ियों की श्रेणियों से मिलती है जो इसे उत्तर की ओर लगभग आठमील के लिये मोड़ देती है। जब यह पत्थर घाट पहुँचती है तो इसमें कोसी और उत्तर की सब सम्मिलित नदियों का पानी आकर मिलता है। गङ्गा में इस सम्पूर्ण जिले में नावें चल सकती हैं। काफी बड़े स्टीमर भी चल सकते हैं। पेंदे की औसत चौड़ाई तीन मील है किन्तु गर्मी में केवल आध मील रह जाती है। वर्षा में समग्र तट जलमग्न हो जाता है। पाँच से दस मील तक उत्तर में और एक से दो तक दक्षिण में जल फैल जाता है।

माल्दा

राज महल की पहाड़ियों से निकल कर गंगा माल्दा जिले में प्रवेश करती है। राजमहल से दो मील नीचे गंगा में से छोटा भागीरथी नामक एक धारा निकलती है। यह गंगा का एक पूर्व मार्ग मालूम पड़ती है और गंगा के समान ही पवित्र मानी जाती है। थोड़ी दूर और नीचे गंगा में से पगला नामक एक नदी और निकलती है इसमें छोटी भागीरथी जाकर मिल जाती है। जहां से गंगा इस जिले का परित्याग करती है उससे थोड़ा ऊपर ही इसमें से एक नदी भागीरथी नामक निकलती है। मुख्य धार की पवित्रता इस स्थान के बाद कम मानी जाने लगती है। पूर्वी बंगाल से नावें गंगा का पवित्र जल लेने के लिये तांतेपुर आती हैं। क्योंकि पवित्र नदी से यही स्थान उन्हें सबसे निकट पड़ता है।

मुर्शिदाबाद

भागीरथी—भागीरथी गंगा से फरक्का नामक स्थान से पच्चीस मील दक्षिण बूरपुर नामक ग्राम के पास पृथक होती है। लगभग दो मील तक सूती के निकट विश्वनाथपुर तक साथ हो जाती है। किन्तु विश्वनाथपुर के आगे टेढ़ी मेढ़ी होकर दक्षिण की ओर जाती है। यह इस जिले का परित्याग पलासी के ऊपर बोधूपारा नामक ग्राम पर करती है। यह इस जिले को दो भागों में विभक्त करती है। इसके तटों पर विशेष कर पूर्वी पर ही इस जिले के सब ऐतिहासिक और समृद्ध नगर स्थित हैं। साल में चार महीने (जब यह पानी से भरी रहती है) बड़ी सुन्दर प्रतीत होती है।

पद्मा—पद्मा इस जिले के धुर उत्तर में प्रवेश करती है। वहां से दक्षिण-पूर्व में बहती हुई इसे माल्दा और राजशाही जिलों से पृथक करती है। धारा की गति जाड़े में तीन मील प्रति घंटा और वर्षा में छः मील प्रति घंटा हो जाती है। कहीं कहीं पर (जहां गंगा मोड़ पर आती है) यह गति बहुत बढ़ जाती है। नावें और स्टीमर धार के विरोध में चलने में काफी कठिनाई का अनुभव करते हैं। आधी मई से आधे अगस्त तक मुख्य धार का पानी बत्तीस फुट तक ऊंचा हो जाता है। फिर तट के भाग साफ़ किये जाते हैं, आबाद होते हैं। खेती होने लगती है। बन्दोबस्त होता है। दस बारह साल तक मालगुजारी वसूल होती है। फिर एक साल बाढ़ में सब जलमग्न हो जाता है।

महानन्दा संगम के कई मील नीचे तक पद्मा के तट सख्त मिट्टी के बने हुये हैं। जिन पर पानी का प्रभाव कम पड़ता है। किन्तु रामपुर बोआलिया के कुछ मील उत्तर-पश्चिम से जमीन रेतीली हो जाती है और बहुत जल्दी कट जाती है। पहले नगर में पानी काफी भर जाता था और पचीस वर्ष पहले सिविल स्टेशन का एक अच्छा भाग बह गया

था। अब नगर को बचाने के लिये बांध बना हुआ है। भागीरथी के उद्गम से मेघना-संगम तक इसका नाम पद्मा रहता है। लगभग चार सौ वर्ष पहिले तक गंगा की मुख्य धार भागीरथी में होकर बहती थी। इस धारा में मिट्टी भर जाने पर उसने दूसरा मार्ग जलंग, मतभंगा और गरई में पाया। इस कारण पद्मा का वर्तमान मार्ग अभी हाल ही का है। पद्मा एक छोटी नदी का नाम है जो बारिन्द में गोदागरी के निकट से निकलती है। संभव है कि गङ्गा ने इस धार और नाम का उपयोग अपने लिये किया है। इस भाग में गंगा पवित्र नदी नहीं है। लोग लकीर के फकीर तो होते ही हैं इस कारण प्राचीन मार्ग को ही पवित्र मानते हैं। यह होते हुये भी गंगा की शान में कुछ भी कमी नहीं आती है। न तो वह वर्षा में एक नाशकारी धार ही हो जाती है और न गर्मी में उसमें कोई विशेष कमी ही होती है।

ढाका

गंगा इस जिले की सबसे बड़ी नदी है। यह ब्रह्मपुरा और पद्मा के संगम से बनी है। नीचे इसका नाम कोर्तिनास पड़ गया है। क्योंकि इससे बहुत हानि फरीदपुर जिले में पहुँची है। ब्रह्मपुत्र सांपू है और इसका उद्गम तिब्बत में है। जहां से इन्डस और सतलज निकली है। वे छोटे नाले जिन पर राजकारी स्थित है अब भी ब्रह्मपुत्र के नाम से विख्यात हैं।

टिपरा

गंगा का नाम यहां मेघना पड़ जाता है। यह इस जिले में चान्दपुर पर प्रवेश करती है इसकी धारा बहुत तेज़ है और गहरी भी है कभी कभी तो यह आधी दर्जन धाराओं में विभक्त हो जाती है इसमें बड़ी से बड़ी नावें और स्टीमर भी चल सकते हैं। चान्दपुर के निकट धारा सात मील चौड़ी हो जाती है। चान्दपुर और हिनैचपुर बड़ी बड़ी बाजारें हैं।



बङ्गाल में गङ्गा

राजमहल की पहाड़ियों से निकल कर बंगाल में प्रवेश करते ही गङ्गा की रूपरेखा में असीम परिवर्तन आ जाते हैं, उसकी विशेषतायें इतनी बदल जाती हैं, कि उनका वर्णन एक अलग लेख में करना ही श्रेयस्कर प्रतीत होता है। वास्तव में बात यह है कि चार पाँच हज़ार वर्ष पूर्व गङ्गा-सागर-संगम राजमहल की पहाड़ियों के निकट ही होता था। उस समय पश्चिमी बंगाल का कोई अस्तित्त्व न था। पूर्वी बङ्गाल का प्रदेश अवश्य था। जहाँ आजकल कलकत्ता नगर है यहाँ कुछ पहाड़ियाँ थीं।

धीरे धीरे गङ्गा की लाई हुई मिट्टी के जमा होने से डेल्टा बनना आरम्भ हुआ। यहीं इस प्रदेश के जन्म का इतिहास शुरू होता है। फिर भी ईसा की सातवीं शताब्दीं तक खुलना, जैसौर, सुन्दरबन और कलकत्ता पूर्ण रूप से अस्तित्त्व में नहीं आये थे। यद्यपि कलकत्ते के निकट की पहाड़ियों का भूगर्भ में विलीन होना आरम्भ होगया था।

इन सब बातों का पता हमें वर्तमान समय की वैज्ञानिक खोजों से चला है। इन खोजों का सारांश सन् १९०१ की मनुष्यगणना की रिपोर्ट के सातवें खंड प्रथम भाग में श्रीयुत ए० के० राय लिखित नोट में पायेंगे। हिन्दुओं के प्राचीन ग्रन्थों का अवलोकन करने पर हमें बाराहमिहिर रचित बृहत्संहिता में इस प्रदेश का नाम 'समतात' (ज्वारभाटे से बना हुआ प्रदेश) लिखा हुआ मिलता है। लेखक का अभिप्राय यह है कि यह देश नदी द्वारा लाई गई मिट्टी के जमा होने से बना है। बङ्गाल के सामाजिक इतिहास से भी इस सिद्धांत का कोई खंडन नहीं होता है। वास्तव में यह इतिहास सातवीं और नवीं शताब्दी के मध्य में से ही महाराज आदिसूर के काल से आरम्भ होता है।

वर्तमान ऐतिहासिक काल में आने से इस प्रदेश की प्रदक्षिणा का वृत्तान्त रेनल साहब ने सन् १७९० ई० के लगभग प्रकाशित किया था। यहाँ का क्रमबद्ध विवरण सब से प्रथम हमें इसी पुस्तक में मिलती है। यद्यपि उस समय से इस समय तक भी गङ्गा में कई विशेष परिवर्तन हो चुके हैं।

रेनल साहिब के समय में गङ्गा जो राजमहल से निकल उस मार्ग से होकर समुद्र में गिरती थी, जहाँ आजकल छोटी भागीरथी नामक एक साधारण सी नदी रह गई है। इसके तट पर निम्नलिखित नगरों का वर्णन रेनल साहब ने किया है।

गौड़ या लखनौती :—यह बङ्गाल की प्राचीन राजधानी है। यह राजमहल से पच्चीस मील नीचे स्थित है। ईसा से ७३० वर्ष पूर्व भी यह बङ्गाल की राजधानी थी। मुग़ल सम्राट अकबर ने इसका जीर्णोद्धार तथा पुनर्निर्माण किया। और इसका नाम जन्नताबाद रख दिया। वर्तमान समय में यह गङ्गा से कम से कम बारह मील दूर पड़ता है।

टांडा :—सन् १५४० ई० के लगभग शेरशाह के शासनकाल में बङ्गाल की राजधानी रहा। पीछे अकबर के समय में भी १५५९ ई० तक इसका यही स्थान रहा। यह गौड़ के बहुत निकट स्थित है।

सतगाँव :—अब यह हुगली के तट पर एक छोटा सा ग्राम है। १५६६ ई० के लगभग यह एक बड़ा व्यापारिक नगर था योरुप के व्यापारियों की फैक्ट्रियाँ इसी नगर में थीं।

बंगाला :—इस नाम का एक नगर गङ्गा के पूर्वी मुहाने पर होना लिखा है। सम्भवतः किसी बाढ़ में यह जलमग्न हो गया।

आजकल गङ्गा के इस मार्ग के छोड़ देने के कारण यह सब स्थान गङ्गा तट से बहुत दूर पड़ते हैं। आज गङ्गा तार्तीपुर के कुछ आगे वर्तमान भागीरथी के मार्ग से होकर बहती है। किन्तु यह भी एक छोटी ही धार है। गङ्गा की मुख्य धार तो पद्मा के नाम से बहती हुई पूर्वी बङ्गाल की ओर जाती है। परन्तु बंगाली लोग भागीरथी ही को पवित्र नदी मानते हैं।

पद्मा को वे एक साधारण नदी के समान समझते हैं। पूर्वी बंगाल से नावें गङ्गाजल लेने के लिये बराबर तांतीपुर आया करती हैं। क्योंकि यही स्थान उन्हें सबसे निकट पड़ता है। बंगाली छोटी भागीरथी को पवित्र मानते हैं।

जिस प्रकार से गङ्गा से छोटी भागीरथी और भागीरथी आदि शाखायें निकली हैं, या उसके पूर्व मार्ग का अवशेष है, इसी प्रकार सैकड़ों अन्य धारायें भी इस प्रदेश में हैं। वे या तो गंगा से ही या उसकी किसी धारा से या अन्य किसी धारा से निकली है। यह अपने उद्गम से निकल कर उसी धारा में या किसी अन्य धारा में या समुद्र में जाकर मिल जाती है, या कभी कभी सूख भी जाती है।

बंगाल प्रान्त में इनका जाल सा बिछा हुआ मालूम पड़ता है। इस जलद्वारा आने जाने और माल लेजाने की बड़ी सुविधा रहती है। रेनल साहेब के जमाने में इस कार्य से लगभग तीन लाख मल्लाहों का निर्वाह होता था।

फिर भी यह मानना पड़ेगा कि भागीरथी के ही तट पर बंगाल के मुख्य तीर्थ जैसे महेश वाली, त्रिवेनी आदि, तथा कलकत्ता, कासिमबाज़ार, श्रीरामपुर, अजीमगंज आदि नगर बसे हुये हैं। इसके तट एक ओर ढालू और एक ओर रेत की पहाड़ियां से बनाते हुये हैं। धारा अपना स्थान बराबर बदला करती है, जिससे नये नये तटों का निर्माण हुआ करता है। वर्षा के चार महीनों में जब यह जल से पूर्ण होती है तो बड़ी सुहावनी मालूम पड़ती है।

नदिया जिले में जलंगी संगम के पश्चात् इसका नाम हुगली पड़ जाता है। हुगली की वर्तमान धार किदरपुर के आगे कुछ काल पूर्व की धारा से भिन्न है। असली धार किदरपुर से वर्तमान टोली नाले में होकर गरिया तक जाती थी। वहाँ से दक्षिण-पूर्व की ओर होती हुई समुद्र को जाती है। अब यह सूख गई है। स्थान स्थान पर केवल कुछ झीलें सी अवश्य बनी हुई हैं। इन्हें आदि गंगा, बूद गङ्गा या गंगा नाला के नाम से पुकारते हैं। हिन्दू लोग हुगली को नदीवत् समझ कर केवल इसे ही पवित्र मानते हैं और यहीं अपने शवों को जलाते हैं।

यहाँ पर यह प्रश्न उठ सकता है, कि बंगाल में ही गंगा अपना स्थान इतना अधिक क्यों परिवर्तन करती है, अन्य स्थानों पर क्यों नहीं। इसका कारण इस देश की एक भौगोलिक विशेषता ही है। यहाँ का ढाल उत्तर से दक्षिण न होकर उत्तर-पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर है। पिछले चार सौ वर्षों में भागीरथी और वर्तमान मार्ग को छोड़ कर गंगा कम से कम छः भिन्न मार्गों से समुद्र में प्रवेश कर चुकी है।

पद्मा के तटों का यह हाल है कि अनेक स्थानों पर मिट्टी जमा हो जाती है, द्वीप बन जाते हैं, इन पर घने बन उग आते हैं जिन्हें काट कर साफ़ किया जाता है और गाँव बसाये जाते हैं। किन्तु यह सब भूखंड एक रात के तूफ़ान ही में जलमग्न हो जाता है, दूसरे दिन उसका कहीं निशान तक नहीं मिलता है। गोआलन्डो जैसी बड़ी मण्डी की स्थिति इतनी नाजुक है कि इस वर्ष नगर एक स्थान पर स्थित है, तो दूसरे वर्ष उसका पड़ाव सात मील दक्षिण होना कोई आश्चर्य की बात नहीं। फ़रीदपुर जिले में गंगा ने इतने अधिक सुन्दर भवनों को नष्ट कर दिया है, कि इसका नाम ही कीर्तिनाश पड़ गया है। इसके आगे धारा लगभग आठ मील चौड़ी हो गई है।

किन्तु धारा में जल की प्रचुरता होने के कारण स्टीमर इसमें बड़ी सरलता पूर्वक चलते हैं। इसी से राजशाही जिले के निकट आपको इतने अधिक जल देखने को मिलेंगे कि आपके आश्चर्य का ठिकाना न रहेगा। संसार भर में जलद्वारा जितना अधिक व्यापार पद्मा पर होता है, उतना और कहीं नहीं।



एक बड़े भाग में मैं घोर नास्तिक रहा हूँ। गंगा के प्रेम का मुझे किसी ने मन्त्र नहीं दिया है। यह अगाध सम्पत्ति तो मैं रास्ते में पड़ी हुई वस्तु के समान पा गया हूँ। सबसे प्रथम मैं यहां रोग से अधिक परिग्रस्त होने के कारण न मालूम किस तरह विचार आया था। किन्तु जल में पैर रखते ही मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि मुझमें एक नया जीवन सा आ रहा है। उसी क्षण से मेरा कुछ ऐसा सम्बन्ध स्थापित हुआ कि उसे न रात, न ओलों की झड़ी, न रोग न आंधी, कोई नहीं तोड़ सकता। हमारे मुख से भी सहसा निकल पड़ा कि :—

शरीरे जरजरीभूते व्याधिग्रस्ते कलेवरे।
औषधि जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरि ॥

सचमुच गंगाजल में कुछ ऐसी तासीर है। रोगी और दुर्बल मनुष्य को टानिक पीने की आवश्यकता नहीं रहती है। गङ्गाजल पीने और गङ्गाजल में स्नान करने ही से शरीर में अपूर्व शक्ति और क्षमता आ जाती है। गङ्गाजल पीने से अजीर्ण रोग, अजीर्ण ज्वर तथा संग्रहणी, राजयक्ष्मा, दमा आदि रोग नष्ट हो जाते हैं, और गङ्गाजल से स्नान करने से मस्तक के समस्त रोग तथा चर्म रोग अच्छे होते हैं। प्लेग, हैजा, मलेरिया आदि कठिन रोगों के कीटाणु गंगाजल में लाके छोड़ने से केवल छः घंटे में मर जाते हैं। इस परिणाम पर वैज्ञानिक पहुँच चुके हैं। डा० हैकिन्स का कथन है :—

"For ages the Hindus had absolute faith that the water of the ganges was utterly pure, could not be defiled by any contact whatsoever, and infaliably made pure and clean whatsoever thing touched it. They still believed it and that is why they bathe in it and drink it. The Hindus have been laughed at for many generations, but the laughter will need to modify itself a great deal from now."

(युगों से हिन्दुओं का पूर्ण विश्वास रहा है कि गङ्गाजल एक दम पवित्र है। इसे कोई चीज अपवित्र नहीं कर सकती। जिस वस्तु को यह छूता है उसे यह अचूक ढंग से पवित्र कर देता है। उनका इस समय भी यही विश्वास है। इसी से वे इस जल में स्नान करते हैं और इसे पीते हैं। कई पीढ़ियों तक लोग हिन्दुओं की हँसी उड़ाते रहे। लेकिन अब से आगे इस हँसी को बहुत कुछ रुकना पड़ेगा।)

अब हमें इसके आगे शेष नहीं रह जाता है। इसका सार आपको गोस्वामी जी की एक चौपाई में मिल जायेगा।

"गङ्ग सकल मुद मङ्गल मूला।
सब सुखकरनि हरनि सब सूला ॥"



निवेदन

संबत् १९८९ (सन् १९३३) के माघ मास में श्री गंगाजी के पवित्र तट पर मेरे हृदय में श्री गंगाजी और श्री नर्मदाजी के सम्बन्ध में पुस्तकें लिखने की प्रेरणा हुई। मैंने इस कार्य में हिन्दी प्रेमी सज्जनों से सहायता लेने का निश्चय किया। पत्र संपादकों की कृपा से मेरी सूचना प्रायः सभी पत्रों में प्रकाशित हुई और उसके द्वारा बहुत सी सामग्री भी प्राप्त हुई। श्री नर्मदाजी के सम्बन्ध में पुस्तक सन् १९३० में प्रकाशित भी हो गई*। परन्तु श्री गंगाजी के सम्बन्ध में पूरी सामग्री इकट्ठी न होने के कारण पुस्तक का लिखना अभी तक आरम्भ न हो सका।

(२)

श्रीगंगाजी के सम्बन्ध में मैंने सर्वे आफ इण्डिया विभाग में गंगोत्री से लेकर गंगासागर सङ्गम तक के नकशे मंगवाए और ऊपर से ३५ नकशे तैयार किये गये। ये नकशे भूगोल के आगामी अंक में दिये जावेंगे। मेरी यह इच्छा थी कि मैं गंगोत्री से लेकर गंगासागर संगम तक यात्रा करूं और सब स्थानों को स्वयं देखकर उनका वर्णन लिखूं। परन्तु गृहस्थी के कई झंझटों के कारण यह इच्छा अभी तक पूर्ण न हो सकी। मैंने मेरे मित्र श्री मुनीश्वरानंद सक्सेना एम० बी० काम० को प्रयाग से हरिद्वार तक नाव यात्रा करने के लिये भेजा। उनको भी बिठूर के पास से ही लौट आना पड़ा। इसके बाद मैंने श्री श्याम मनोहर जी मिश्र एम० ए० को बिठूर से हरिद्वार तक यात्रा के लिये भेजा। श्री मिश्र जी ने इस यात्रा को किसी प्रकार पूर्ण की। हरिद्वार से बद्रीनाथ और केदारनाथ तक यात्रा मैंने स्वयं की और गङ्गोत्री तक यात्रा मेरे पूज्य पिताजी स्वर्गीय पंडित बलरामजी दुबे ने की। इन सब यात्राओं द्वारा जो सामग्री प्राप्त हुई है उसका उपयोग इस अंक में किया गया है। अभी प्रयाग से गङ्गा-सागर तक यात्रा शेष है। यही कारण है कि इधर के स्थानों के बहुत कम चित्र इस अंक में दिये जा सके हैं। इस अंक में जो सामग्री दी गई है उसको एकत्रित करने का श्रेय पंडित श्याम मनोहर मिश्र एम० ए०, श्री मुनीश्वरानन्द सक्सेना एम० ए० और पंडित रामनारायणजी मिश्र बी० ए० को है। मैं तो इसकी त्रुटियों के लिये जिम्मेदार हूँ। यह संभव है कि इसमें कुछ स्थानों का वर्णन गलत या अपूर्ण छप गया हो। यदि कोई सज्जन इन त्रुटियों के सम्बन्ध में मेरा ध्यान आकर्षित करने की कृपा करेंगे तो मैं उनका बहुत आभारी होऊंगा और उनकी सूचनाओं का उपयोग श्री गङ्गा जी के सम्बन्ध में जो पुस्तक लिख रहा हूँ उसमें करूंगा। यह भी संभव है कि इस अंक में ऐसे कई स्थानों का वर्णन नहीं दिया गया है। जिसका दिया जाना आवश्यक है। यदि कोई गंगा प्रेमी सज्जन ऐसे किसी स्थान का वर्णन मेरे पास लिख भेजने की कृपा करेंगे तो मैं उसका उपयोग अपनी पुस्तक में अवश्य करूँगा।

भूगोल के प्रेमी पाठकों से मेरा निवेदन यह है कि यदि उनके पास श्री गङ्गा जी के किनारे के किसी दर्शनीय स्थान (मन्दिर, घाट, प्राकृतिक दृश्य) का फोटो हो तो उसे मेरे पास अवश्य भेज देने की कृपा करें।

इस अंक में जो कुछ त्रुटि रह गई है उसके लिये मैं भूगोल के पाठकों से क्षमा मांगता हूँ।

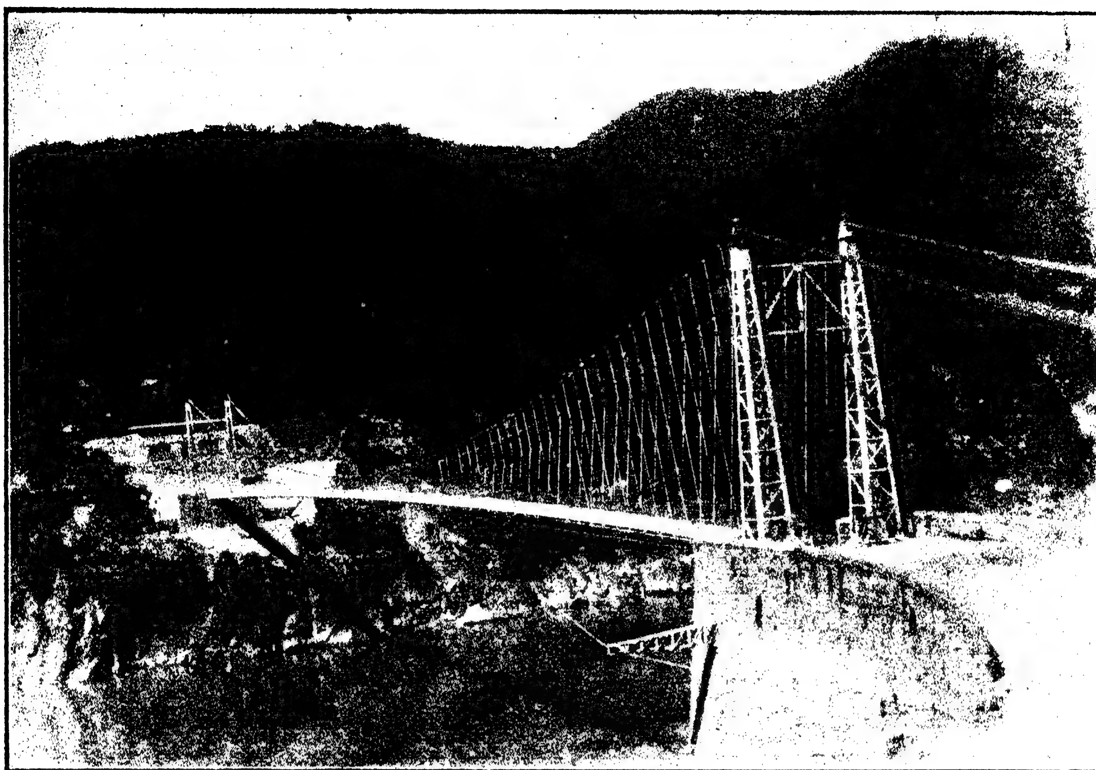
दयाशंकर दुबे

धर्मग्रन्थावली कार्यालय
दारागंज, प्रयाग

अर्थशास्त्र-अध्यापक,
प्रयाग-विश्वविद्यालय।

*यह पुस्तक 'नर्मदा रहस्य' के नाम से प्रकाशित हुई है। इसमें २२८ पृष्ठ, १५० चित्र और १४ नकशे हैं। यह मैनेजर, धर्मग्रंथावली दारागंज से ३) में प्राप्त हो सकती है।

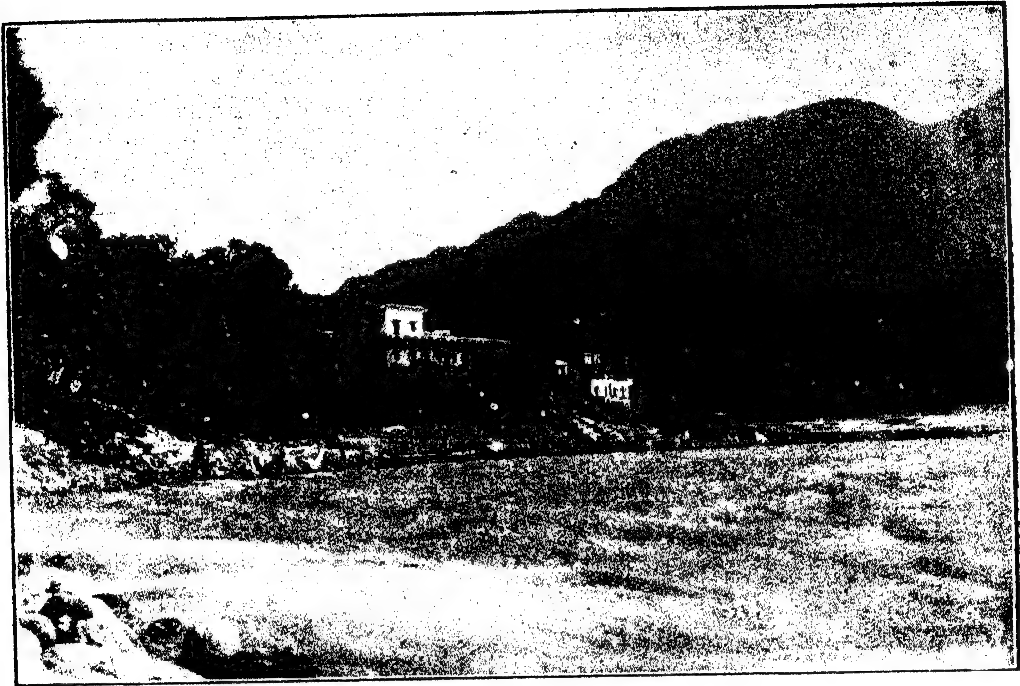




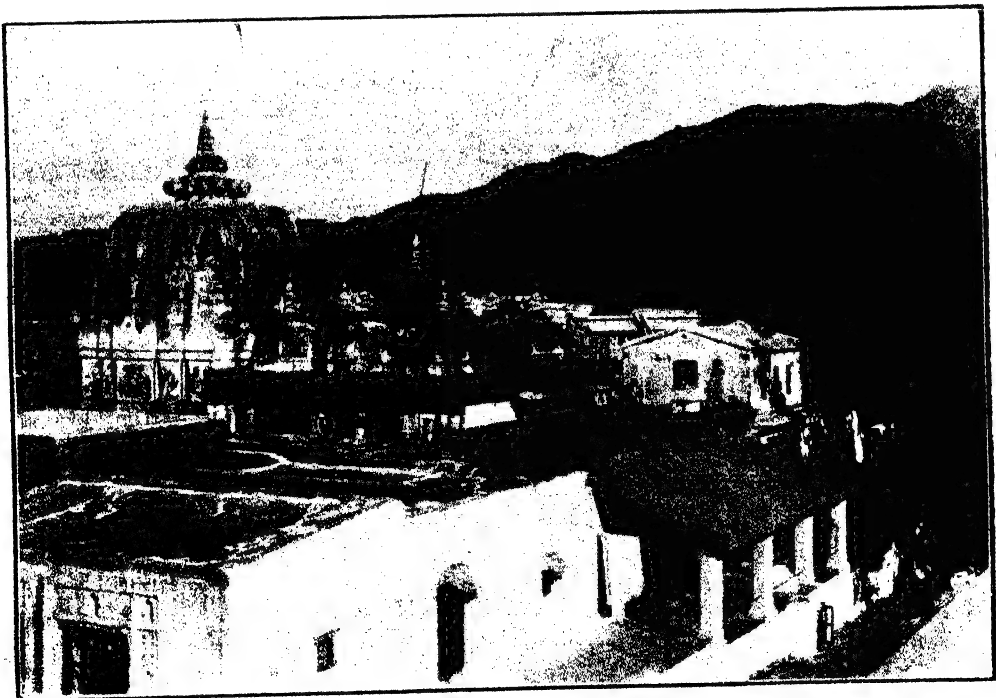
१—लक्ष्मण झूले का पुल



२—स्वर्गाश्रम का दृश्य



३—श्रीरामजानकी का मन्दिर



४—भरतजी का शिखरदार मन्दिर



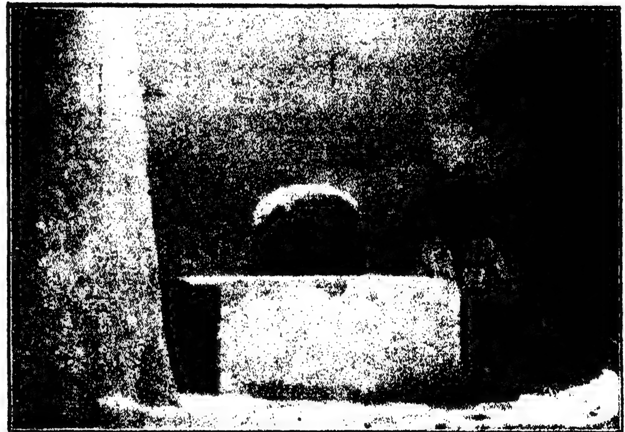
५—दक्ष प्रजापति का मन्दिर



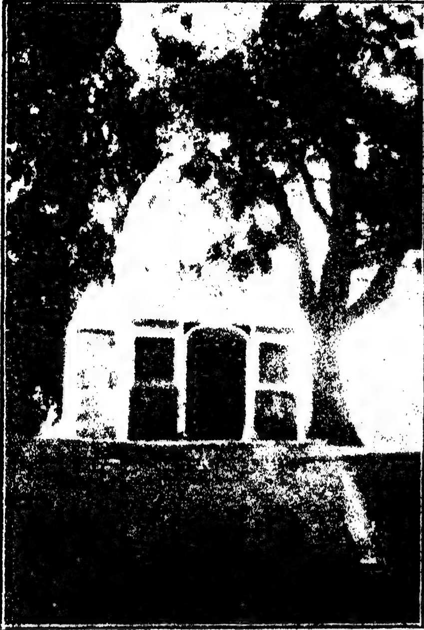
७—नृग कूप



६—मुक्तेश्वर महादेव



८—झारखण्डेश्वर महादेव



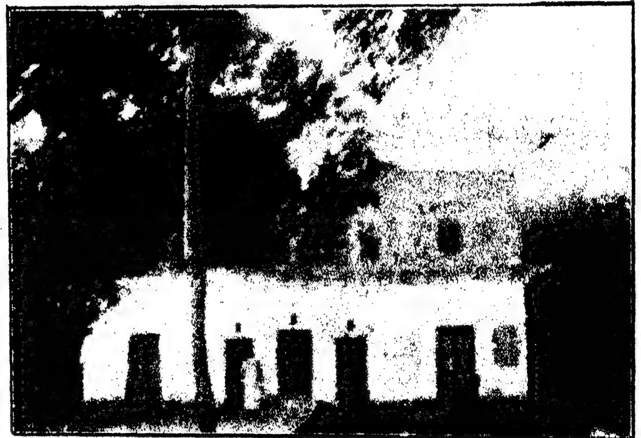
९—नर्मदेश्वर महादेव का मन्दिर



१०—कल्याणी देवी का मन्दिर



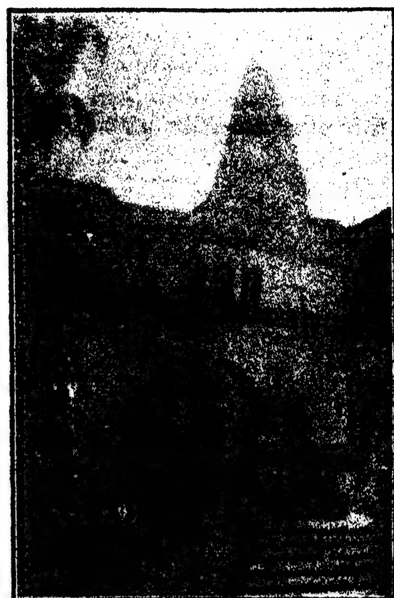
११ कर्णवास का मन्दिर



१२ श्रीभूतेश्वर का प्राचीन मन्दिर



१३—श्रीबनखण्डेश्वर का प्राचीन मन्दिर



१५—रावसाहेब की विश्रान्ति



१४—राहजी की विश्रान्ति



१६—गौरीशंकर का मन्दिर



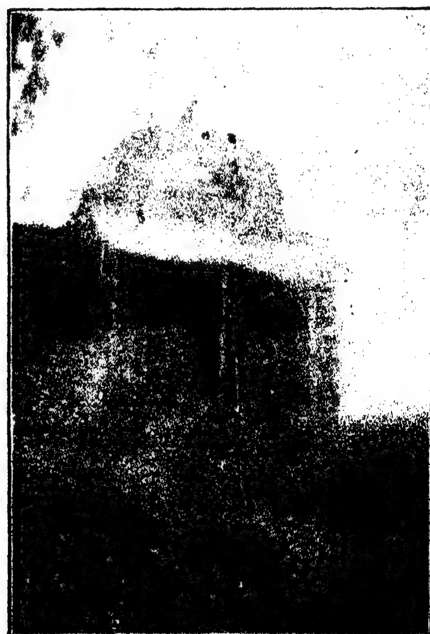
१७—अजयपाल का मन्दिर



१९—चिन्तामणि का स्थान



१८—फूलमती देवी का मन्दिर



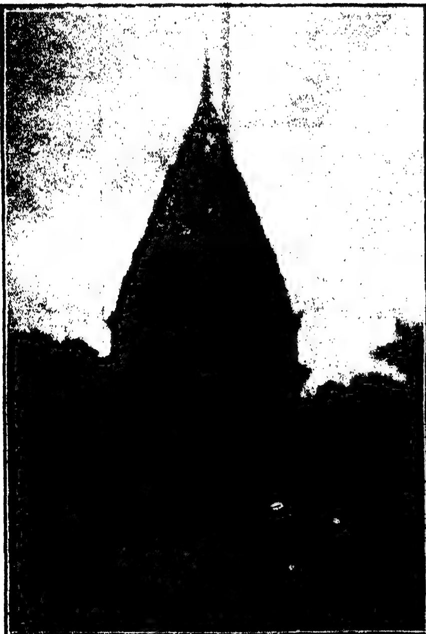
२०—शृंगी ऋषि का मन्दिर



२१—बलखण्डेश्वर महादेव, महावीरजी का मन्दिर



२३—वीरेश्वर महादेव का मन्दिर



२२ नीलकण्ठेश्वर महादेव का मन्दिर



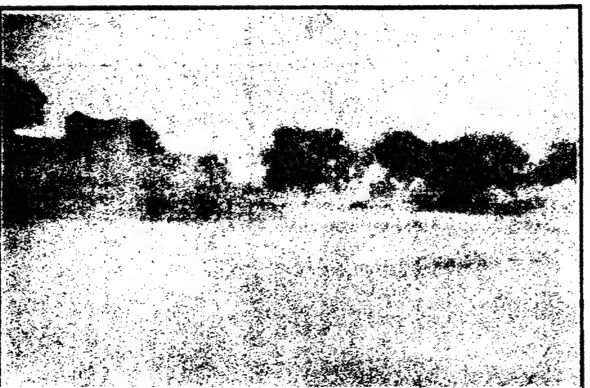
२४—अश्वत्थामा का मन्दिर



२५—दूरदर का प्राचीन मन्दिर



२७—ब्रह्मावर्त की खूँटी



२६—बन्दीमाता का मन्दिर



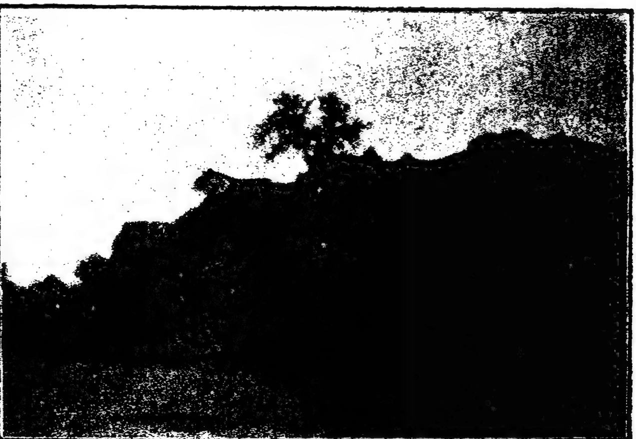
२८—सीताकुण्ड, सीता रसोई, मीनार



२९—ध्रुव का किला नं० १



३१—काँच का मन्दिर



३०—ध्रुव का किला नं० २



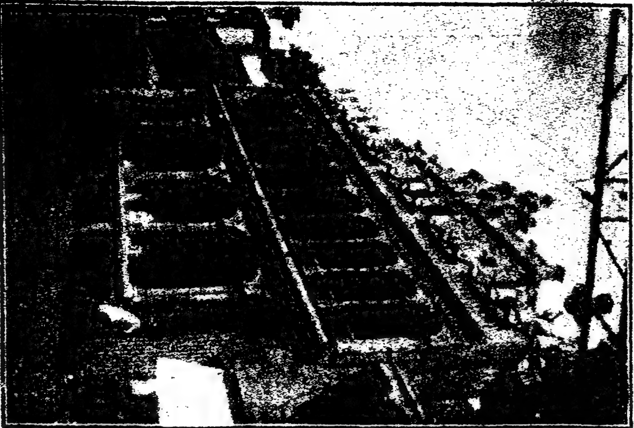
३२—कांच का मन्दिर



३३—प्राणनारायण का शिवालय



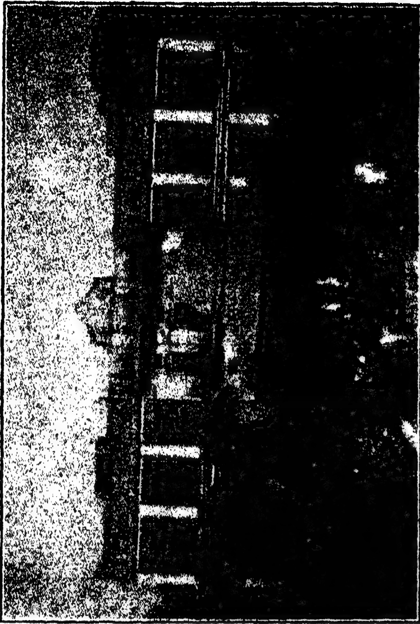
३४—कैलास का शिवालय



३५—संगमलाल का शिवालय



३६—सिद्धनाथ का मन्दिर



३७—सरसैयाघाट की धर्मशाला



३८—सरसैयाघाट की धर्मशाला



३९—जुगीलाल कमलापत का मन्दिर



४०—जगेश्वरीघाट



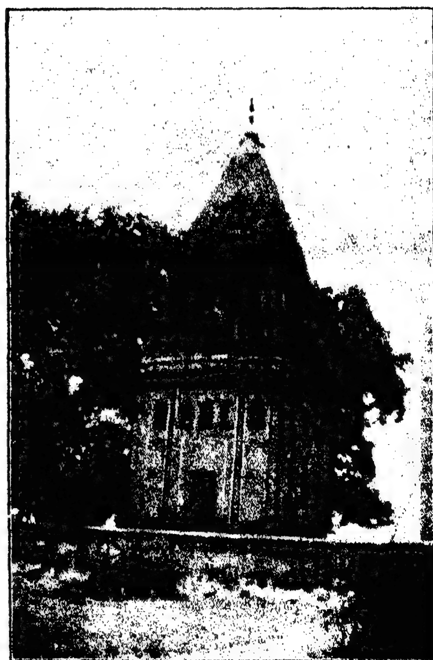
४१—टिकायतराय का घाट



४२—रेल का पुल



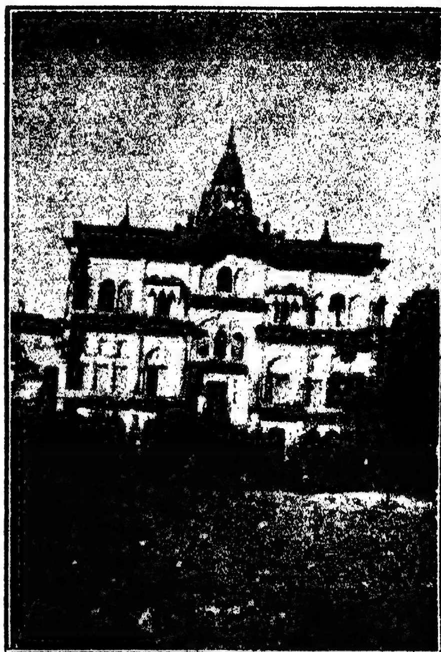
४३—गंगा नहर



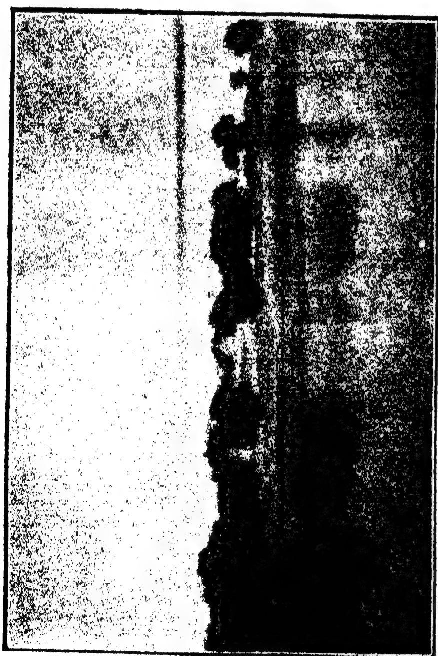
४४—रामेश्वर का मन्दिर



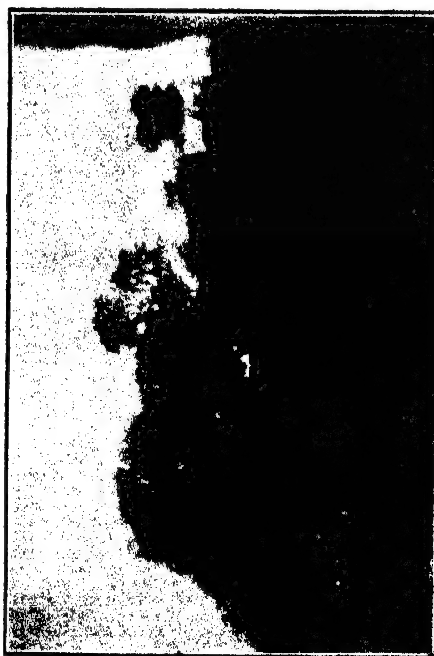
४५—गंगेश्वर का मन्दिर



४६—रसिकबिहारी का मन्दिर



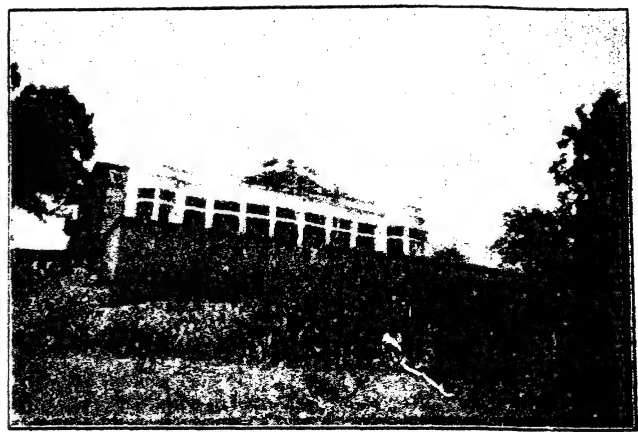
४७—गंगा मन्दिर



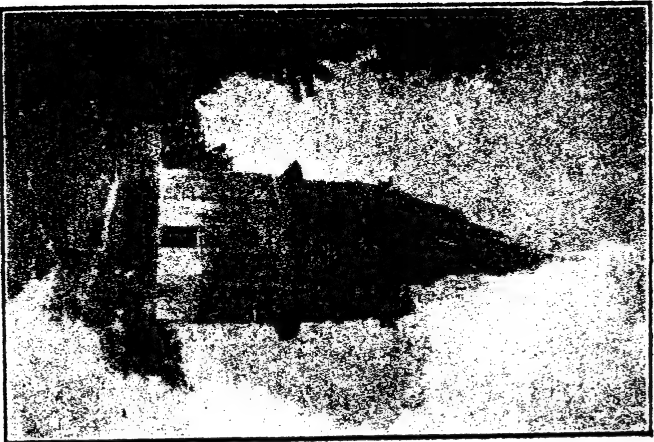
४८—ब्रह्मशिला



४९— लखना देवी का मन्दिर



५०—महेश्वरी ठाकुरद्वार



५१—चिन्तामणि महाजन का शिवालय



५२—राजा साहब की कोठी



५२—शीतला देवी का मन्दिर



५३—ऊमनोघाट का मन्दिर



५४—हनुमानजी का मन्दिर



५५—चरणपादुका का प्रसिद्ध मन्दिर



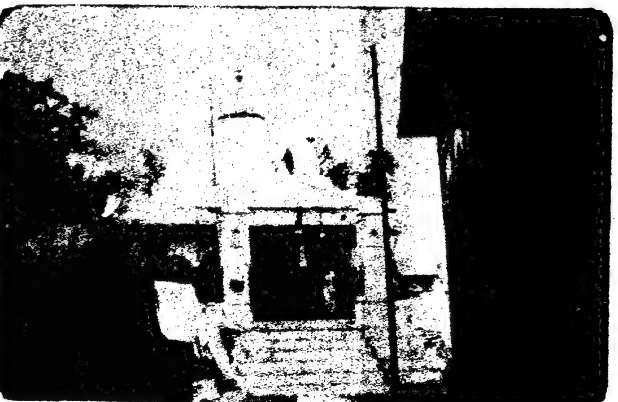
५७—भूरेनाथ कामारी



५८—हार्डिंज पुल



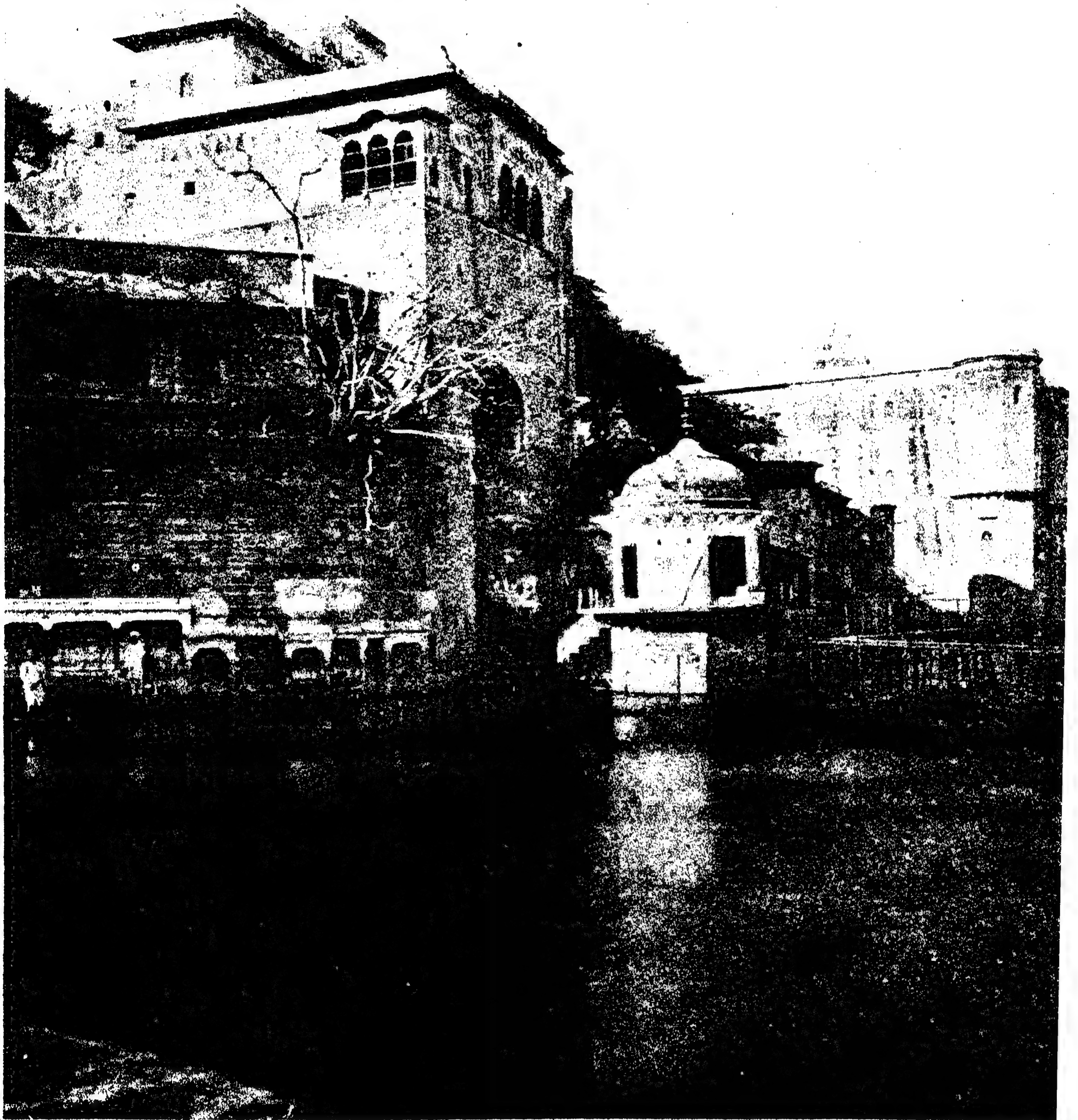
५९—शिवकुटी



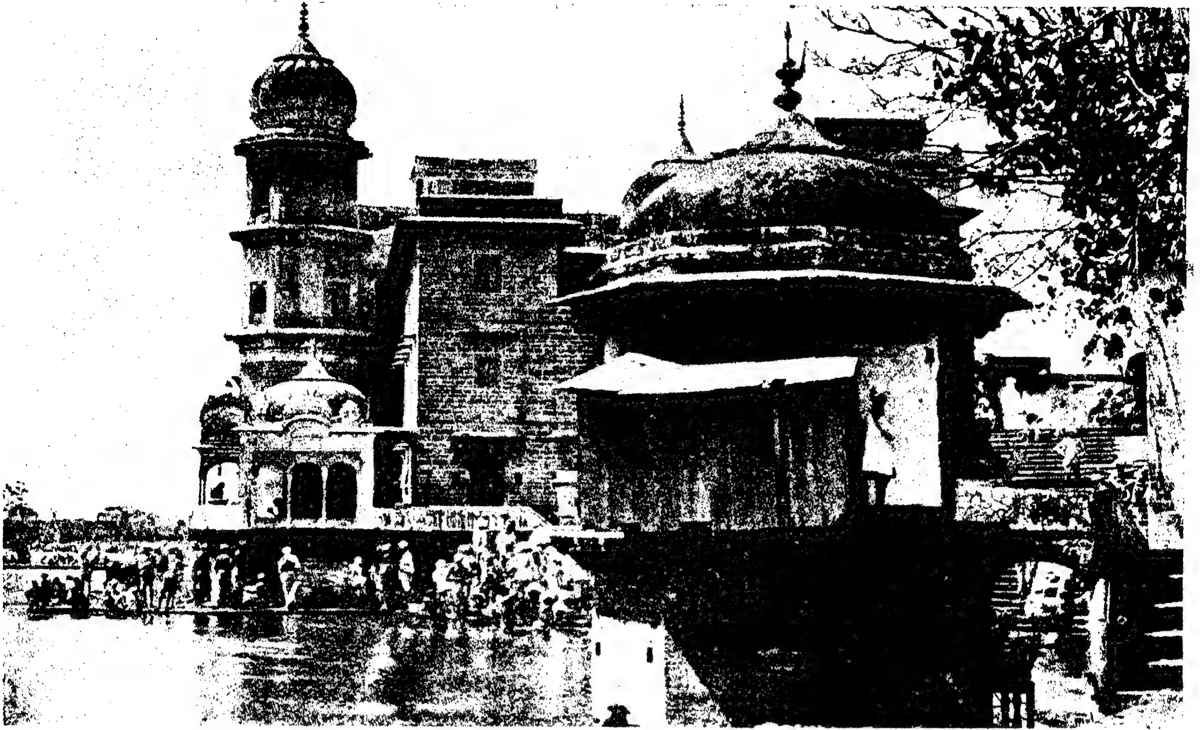
६०—भरद्वाज आश्रम



केदारनाथ के पास गंगा का निकास



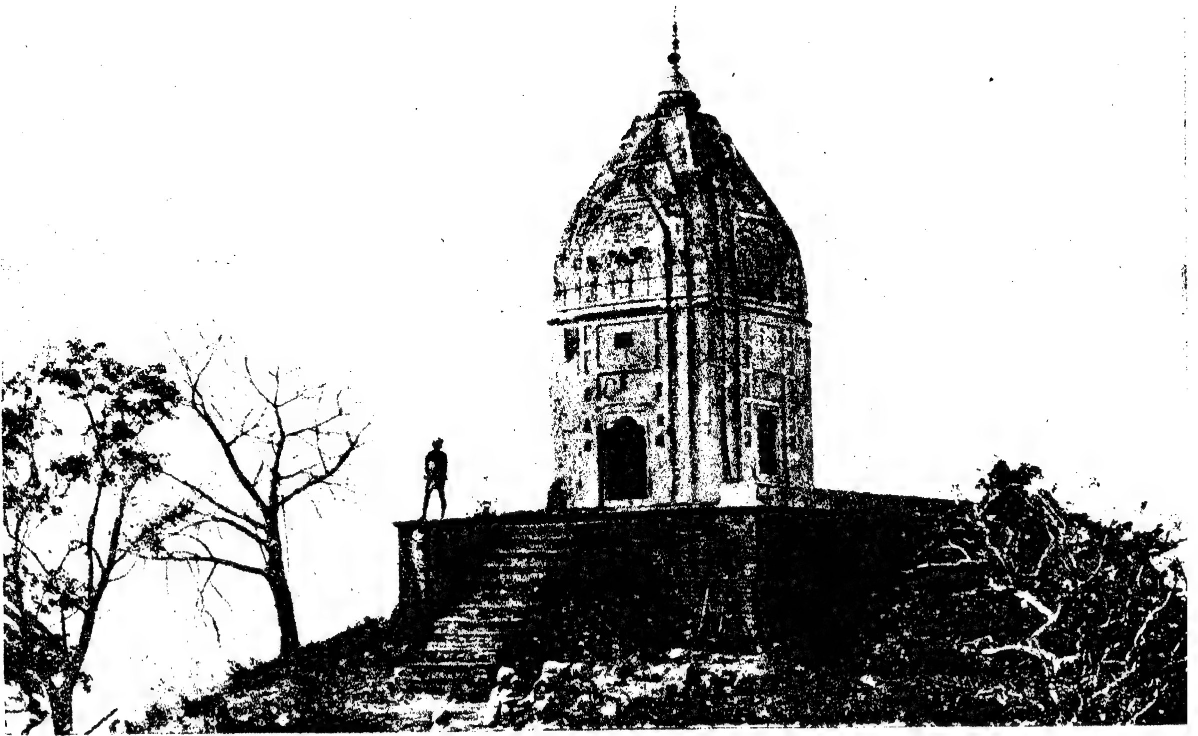
हरद्वार में गंगा का पवित्र घाट



हरद्वार में हरि की पैड़ी



हरद्वार का एक विशेष दृश्य



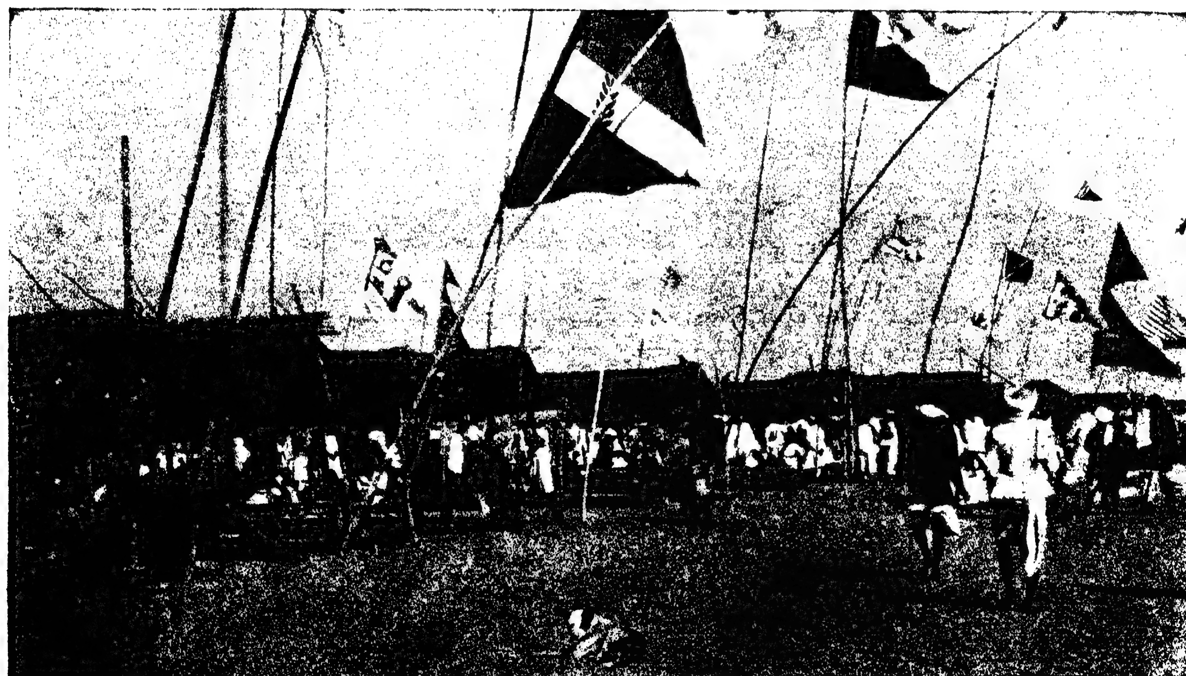
हरद्वार में चांडी देवी का मन्दिर



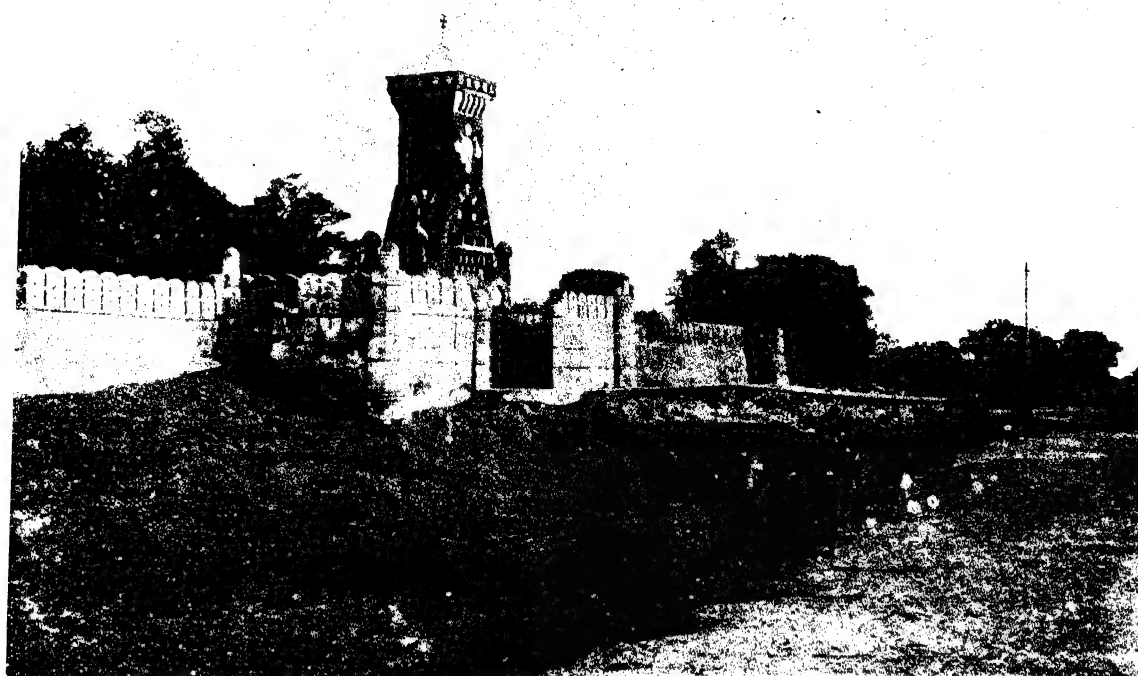
गंगाजी के किनारे हरद्वार का एक दृश्य



प्रयाग में संगम पर स्नान



प्रयाग में संगम पर पंडों के झण्डे



मुंगेर का एक क़िला



गंगा के किनारे बनारस का एक घाट

गंगा-तट के प्रसिद्ध स्थानों की सूची

गौमुख

गंगा जी का मूल स्रोत इसी स्थान से प्रकट होता है। यह स्थान बर्फ़ान की जड़ में है। राजा भगीरथ ने गंगा का प्रथम दर्शन यहीं प्राप्त किया था। यात्री लोगों का इस स्थान तक पहुंचना बड़ा कठिन है, क्योंकि यहां जाने को न तो कोई सड़क है और न दुकान, धर्मशाला इत्यादि। श्रावण से कार्तिक तक यहाँ पर यात्री पहुँच सकते हैं, क्योंकि उस समय बर्फ के पिघल जाने से मार्ग निकल आता है। पाण्डव लोग स्वर्गारोहण के लिये यहीं तक आये थे। चार पाण्डवों ने यहां शरीर त्याग किया था। उनकी आत्मा स्वर्ग को गई। धर्मराज युधिष्ठिर सदेह स्वर्ग को गये। गंगोत्री यहां से दस मील है।

श्री-गंगोत्री तीर्थ

यह स्थान गंगा जी के दक्षिण तट समुद्र पृष्ठ से १००२० फुट की ऊंचाई पर है। यहां कुछ धर्मशालायें, साधुगणों के निवास के आश्रम, मकानात, दुकानें और कुछ मन्दिर हैं। यात्रा के समय अर्थात् ज्येष्ठ से क्वार तक यहां पर सदावर्त भी मिलता है। गङ्गोत्री के पास गङ्गा जी की चौड़ाई अनुमान से ४५ फुट है। गहराई ३ फुट से अधिक नहीं है। गङ्गोत्री के सामने नदी पार भोजपत्र और देवदारू के सघन बन हैं, जो बहुत शोभा देते हैं।

यहाँ का प्रधान मन्दिर गङ्गा जी का है, जो एक शिला के ऊपर बना है। पुराना मन्दिर जो शंकराचार्य जी के समय का था, डेढ़ सौ वर्ष हुये जब उसका जीर्णोद्धार होकर वर्तमान मन्दिर बना था यह १५ फुट के करीब ऊंचा है। अन्दर गङ्गा जी, राजा भगीरथ, यमुना, सरस्वती और शंकराचार्य की मूर्तियाँ हैं। गङ्गा जी की मूर्ति सोने की है। उसका मुकुट और छत्र भी सोने का है। गहने और कपड़े कीमती हैं। द्वार पर एक मनुष्य चांदी का निशान लिये खड़ा रहता है। यह मन्दिर भी टूट गया है और जयपुर नरेश की ओर से नया मन्दिर बन रहा है। गङ्गा जी के मन्दिर के पास एक मन्दिर भैरव जी का है। ब्रह्मकुण्ड, विष्णुकुण्ड इत्यादि तीर्थ स्थान हैं। गङ्गोत्री से एक कोस पर पातङ्गवी स्थान है। पूर्वकाल में स्वर्गारोहण के समय पांडवों ने यहाँ पर बारह वर्ष तक शिवजी का पूजन और तप किया था।

यहाँ के पण्डे बहुत सीधे होते हैं। यहाँ पर मुण्डन कराया जाता है। गङ्गा में सूर्य कुण्ड पर स्नान भी होता है। यहाँ पर जल बेहद ठंडा होता है। भगीरथ शिला पर पिण्डदान दिया जाता है। श्राद्ध का सामान पण्डे ला देते हैं। गङ्गोत्री में श्रीगङ्गाजी को विष्णु तुलसी चढ़ाई जाती है, यह एक प्रकार की सुगन्धित वनस्पति है। सूर्यकुण्ड से यात्री लोग जल भरते हैं। क्योंकि यहाँ केवल स्वच्छ गङ्गाजल ही है। कोई बस्ती नहीं है। सिर्फ १५,१६ पण्डे थोड़े दिन के लिये यहाँ आकर रहने लगते हैं। गङ्गोत्री की धर्मशालायें आदि जाड़े के मौसम में बर्फ से ढक जाती हैं। इस लिये चलमूर्तियां झप्पान की सवारी से धराली के पास मार्कण्डेय में पहुँचा दी जाती हैं। वहां उनकी छः महीने तक पूजा हुआ करती है। पण्डे जब यहां से चलमूर्तियां लेकर जाने लगते हैं तब एक बड़े से दीपक में खड़ी बत्ती जलाकर और उसमें सवा मन घी और तेल डालकर पट बन्द कर के चले जाते हैं। तेल इस लिये मिला देते हैं कि सरदी के कारण घी जमने न पावे। चारों ओर से बरफ कटने पर पन्डे जब अक्षय तृतीया को पट खोलते हैं तब दीपक जलता हुआ मिलता है।

गौरीकुण्ड

गङ्गोत्री तीर्थ से एक मील नीचे है। यहां पर गङ्गा जी के बीच में एक प्राकृतिक शिला का शिवरूप लिंग है, जिस पर श्री गङ्गा जी गिरती हैं। यहां तक गङ्गा जी अचढ़ गङ्गा कहलाती हैं। गङ्गा के किनारे महादेव का मन्दिर है। यहाँ तक गंगा जी में कोई दूसरी नदी नहीं मिली है। केदार गङ्गा का जल भूरे रंग का है। केदार गङ्गा और भागीरथी गङ्गा दोनों मिलकर गौरीकुण्ड में गिरती हैं। यह कुण्ड बहुत गहरा है। यहाँ पर एक पुल भी है।

भैरों घाटी चट्टी

गौरीकुण्ड से यह चार मील पर गङ्गा के दायें तट पर स्थित है। यहां श्री भैरों जी का छोटा सा मन्दिर अहल्याबाई होलकर का बनवाया हुआ है। भैरों जी का दर्शन कर रोट चढ़ाया जाता है। गेहूँ के आटे गुड़ और घी से रोट बनाया जाता है। यहां धर्मशाला और बनिये की दुकान हैं। पर पानी का सुभीता नहीं है। यहाँ से गङ्गा जी एक मील नीचे बहती हैं। यहां पर एक लोहासार पानी का स्रोत

है, जो इस्पात की खान से निकलता है। उसके पास ही केसरिया रंग की मिट्टी है। कहते हैं कि इस जल को नित्य विधिपूर्वक सेवन करने से समस्त उदर रोग निवृत्त होते हैं। भैरों घाटी के चढ़ाई और उतार में प्रति मील ४० मिनट के हिसाब से यात्री चल सकता है। अन्य चढ़ाई और उतार का हिसाब फी मील २० मिनट तक का है। यहाँ पर ठण्ड का क्या कहना है फिर ऊपर से कभी पानी बरस जाता है।

यहां से आध मील पर जाड़गङ्गा के पास पाग नाम का पड़ाव है। वहाँ पर जाड़गङ्गा के ऊपर भैरों घाटी नाम का पुल २५० फुट लम्बा गङ्गा जी से ३५० फुट की ऊंचाई पर है। इस पुल पर चलने में बड़ा भय मालूम होता है। कोई कोई कुलियों की पीठ में आँख बन्द करके और कोई छाती के बल चल कर पुल पार करते हैं। घोड़े, गाय, इत्यादि पशु इस पुल पर नहीं जा सकते।

इस भय के कारण अब एक नई सड़क यहाँ से एक मील नीचे जाँगला से नीचे ही नीचे बनी है। जिसमें जांगला पर नीचे एक छोटा लकड़ी का पुल है, जिसको पार कर चढ़ाई चढ़कर वह सड़क भैरों घाटी से कुछ आगे पुरानी सड़क से मिल जाती है। इस सड़क में मनुष्य और पशु सुगमता से जा सकते हैं। यहां गङ्गा जी दो बड़े पहाड़ों के बीच होकर बहती हैं। इस लिये पाट छोटा हो गया है। गहराई बहुत है। इस स्थान को जन्हु ऋषि का आश्रम कहते हैं। लेकिन ऋषि की कुटी का पता नहीं चलता। यहाँ कोई रहता भी नहीं। यह स्थान गङ्गा के बायें तट पर है। यहां केवल एक दुकान है। और लकड़ी का बना एक डाक बंगला है।

धराली

जांगला से चार मील गङ्गा के बांये तट पर स्थित है। यहां गङ्गा के किनारे तिमंजिला धर्मशाला और बनिया की दुकान है। तट पर आमने सामने महादेव पार्वती के मन्दिर हैं। किन्तु मन्दिरों में जल भरा रहने के कारण दर्शन नहीं होते। गङ्गा जी का छोटा सा पक्का घाट भी है। गङ्गा जी की यहां तीन धारायें हैं। जलवायु ठंडा है। धराली के उस पार मार्कण्डेय आश्रम है और गङ्गा जी का मन्दिर है। छः महीने तक गङ्गा जी की चल मूर्ति यहां पूजी जाती है। यहां कुछ पंडे लोगों के घर हैं। पासही मुखवा नाम के ग्राम में गंगा जी के पंडे पुजारी रहते हैं। धराली में सुरागायें हैं जो देखने में रीछ के बराबर होती हैं। बदन में खूब बाल और घोड़े की जैसी पूंछ होती है।

यहां से आगे ढलुआ उतार है। मार्ग वृक्षों के बीच में होने के कारण सायादार है और स्थान स्थान पर शीतल जल के स्रोत हैं। यहां से चार मील पर हरसिल नामक ग्राम है। जिसमें पांच मील इधर ही अराया की धर्मशाला और बनिये की दुकान गंगा जी के तट पर है। यहां लकड़ी के पुल द्वारा गंगा को पार करना पड़ता है। हरसिल में गंगा के किनारे लक्ष्मीनारायण का मन्दिर है। यहां सेवों का बाग है।

सूकीचट्टी

यह स्थान धराली से सात मील गंगा के दायें तट पर स्थित है। इसके एक मील पीछे ही झाला नाम का गांव है। उसके भी एक मील इधर एक नदी मिलती है। जिसे लकड़ी के कच्चे पुलों द्वारा तीन बार पार किया जाता है। नदी से आध मील पर बर्फ की एक छोटी सी चट्टान तय करनी पड़ती है। इसकी चौड़ाई तो कम है। पर लम्बाई ४० फुट से कम न होगी।

गंगा जी यहां से कुछ हट कर हैं। यहां पर सूर्यकुण्ड और धर्मशाला है। सूर्यकुण्ड चारों ओर से पक्का बँधा है। सूर्यनारायण की छोटी सी पुरानी मूर्ति भी है। काली कमली वाले का धर्मशाला एक तो यों ही छोटा है। इस पर एक कमरे को चौकीदार ने घेर रक्खा है। फिर पशु भी इसमें आकर रहते और पेशाब तथा गोबर करते हैं। गोशाला का रुप धर्मशाला को प्राप्त हो गया है। नीचे के कमरों में मवेशियों के गोबर और मूत्र की बदबू आती है। स्थान ठंडा है। आगे सूखी खाल में एक पहाड़ी बटिया जो यमुनोत्तरी सड़क के खरमाली नाम के पड़ाव से आती है मिलती है।

गंगणाणी चट्टी

सूकी से चार मील पर लुहारीनाग में एक धर्मशाला है। उससे ढाई मील पर नदी के इस पार आना होता है। और एक मील आगे फिर नदी के उस पार जाना होता है। मार्ग पथरीला तथा उतार चढ़ाव का और खतरनाक भी है। गंगा और पहाड़ के किनारे रास्ता भी नहीं है। गंगा जी के दोनों किनारे जो पहाड़ हैं वे बर्फ से ढके रहते हैं। ठंडी ठंडी हवा सर सर चलती है। आगे बगोला घाट पर एक दुकान है।

गंगराणी सूकी से आठ मील गंगा के दायें तट पर स्थित है। सड़क के पास ही एक झरना है, जो ४०, ५० फुट से गिरता है। यहां एक दुकान या ललिता प्रसाद,

हरिप्रसाद पीलीभीत वालों की बनवाई हुई धर्मशाला है। इस स्थान से पूर्व में गंगा जी से उस पार कुछ दूर गांव के नीचे एक गरम जल का सोता है। इस कुण्ड का नाम ऋषि कुण्ड है। गरम जल में १३२° अंश की उष्णता है। यह जल कुछ शीतल जल में मिलकर एक कुंड में जाता है। उसी में यात्री लोग स्नान करते हैं। यहां पर स्नान करने से पितरों की आवागमन से निवृत्ति होती है। कहते हैं वायुजन्य पीड़ा में नियम पूर्वक तीन पक्ष तक नित्य दो तीन घंटे इस जल में रहने से पीड़ा दूर हो जाती है। गंगराणी से इस स्थान में जाने के लिये काठ का पुल बना हुआ है।

गरम कुंड में स्नान करने से रक्त विकार के रोगियों को आराम पहुँचता है इसके जल से गन्धक की बू निकलती है।

भूखी

गंगराणी से पांच मील है। भटवाड़ी यहां से चार मील रह जाती है। इस स्थान में गंगाजी में एक पुल है। उसमें होकर सड़क गंगा पार गई है। वहां पर दो धर्मशालायें और एक दुकान है। यहां से तीन मील पीछे अर्थात् गंगराणी से एक मील पर सड़क फिर एक पुल द्वारा गंगाजी के इस पार आ जाती है।

भटवारी

यह गङ्गराणी से दस मील पर गङ्गा के दायें तट पर स्थित है। यहां पर बाबा काली कमली वाले की दो धर्मशालायें गंगा किनारे हैं। बनिये की दूकान है। भास्करेश्वर महादेव का प्राचीन मन्दिर है। यहां से श्री केदारनाथ और बदरीनाथ को जाने का रास्ता है। इस लिये केदारनाथ जाने को गंगोत्री से फिर यहां वापिस आना पड़ता है। यहां टिहरी राज्य के जंगलात महकमे का एक बँगला भी है। यहां का जल शीतल और स्थान ठंडा है।

मनूहानाम पड़ाव में एक दुकान है। वहां गंगाजी में एक लोहे का पुल है। उससे पार होकर सड़क त्रिजुगी नारायण को गई है, जो यहां से ५४ मील दूर है।

मुनेरी

भटवाड़ी से साढ़े आठ मील पर मनेरी नामक ग्राम गंगा के बांये तट पर पड़ता है। यहां गंगा किनारे बाबा काली कमली वाले की दो धर्मशालायें हैं। बनिये की दूकान भी हैं। यहां तीन झरने हैं जो बड़ी ऊँचाई से गिरते हैं। गंगा जी का जल बहुत ठंडा है।

यहां से साढ़े सात मील पर इसके पास रियासत का बिनसी गाड एक डाक बंगला है। यह स्थान गरम और जल शीतल है।

इसके आध मील पर नगाणी चट्टी है। यहां असी गंगा और गंगा जी से संगम हुआ है।

उत्तर काशी या बाड़ाहाट

मुनेरी से साढ़े नौ मील पर गंगा जी के दाहिने तट पर एक सुरम्य नगर है। जहां सब प्रकार की देशी और पर्वतीय व्यापारिक वस्तुयें मिल सकती हैं। यहां का जलवायु शीतल है। स्थान न तो बहुत गरम है, न ठंडा है। यहां सब जाति तथा पेशे के लोग रहते हैं। किन्तु मदिरा-मांस की दुकान नहीं रह सकती। यहां के निवासियों में अधिकांश ब्राह्मण और गुसाईं हैं। यहां बहुत से मन्दिर, धर्मशालायें कुटिया तथा घाट बने हैं। कुछ मन्दिरों में संगमरमर का काम है। टिहरी दर्बार की ओर से यहां शफाखाना, पुलिसचौकी पाठशाला और एक डिपुटी कलेक्टर की कचहरी है। यहां मकर संक्रान्ति को बड़ा मेला होता है। जो पांच दिन तक रहता है। उस मेले में सब प्रकार की व्यापारिक वस्तुओं का क्रय-विक्रय होता है। ऊनी वस्त्र और घोड़े इस मेले में बहुत बिकते हैं। कहते हैं कि यह स्थान पूर्व काल में किसी राजा की राजधानी था, यहां नदी पार जाने को नदी के ऊपर रस्सियों का एक झूला (पुल) बना है।

उत्तर काशी में प्रधान मन्दिर श्री विश्वनाथ जी का है। सम्बत् १६१४ में इसका जीर्णोद्धार गढ़वाल नरेश ने किया था। इस मन्दिर के सामने एक त्रिशूल बहुत प्राचीन समय का स्थापित है। यह त्रिशूल नीचे पीतल और ऊपर लोहे का है। मन्दिर में विश्वनाथ जी का एक लिंग है। वहां नित्य पूजा होती है। यहां के पुजारी गुसाईं सम्प्रदाय के हैं। विश्वनाथ जी के मन्दिर से ४,५ जरीब पर उत्तर की ओर परशुराम जी, स्वामी दत्तात्रेय जी तथा अन्नपूर्णा जी के मन्दिर हैं। इन मन्दिरों के पुजारी ब्राह्मण हैं। विश्वनाथ जी के मन्दिर के पूर्व की ओर दो जरीब के अन्तर पर गोपेश्वर महादेव जी का मन्दिर है, तथा उत्तर की ओर २०,२५ जरीब पर दुर्गादेवी का मन्दिर है। उसके चौथाई मील आगे लक्षेश्वर महादेव जी का मन्दिर है। जनश्रुति है कि इस स्थान पर द्वापर युग में कौरवों ने पांडवों के जलाने के निमित्त लाक्षागृह निर्माण किया था। यहां पर लाख के जले हुये कंकड़ अब भी मिलते हैं। विश्वनाथ जी

के मन्दिर के दक्षिण की ओर जयपुर के महाराना राठौर का बनवाया हुआ शिव-दुर्गा का मन्दिर है, जिसमें सुवर्ण की कलई का त्रिशूल लगा है। और इन मन्दिरों में कहीं कहीं संगमरमर का काम भी बना हुआ है। इसके पूर्व की ओर पापविमोचन मणिकर्णिका नाम का घाट है। यह भी पक्का घाट है। मणिकर्णिका के पूर्व जड़भरत जी का मन्दिर है। इसके पुजारी गोसाईं लोग हैं। नगर के पूर्व की ओर केदारघाट नामक स्थान में मुर्दे जलाये जाते हैं। वारणावत पर्वत के ऊपर विमलेश्वर नामक महादेव हैं। जो लोग इस तीर्थ की पंच कोशी परिक्रमा करते हैं, वे प्रथम गंगा और वरुण नदी के संगम पर स्नान करके गंगाजल लेकर विमलेश्वर महादेव को चढ़ाते हैं। वहां से नागणी नामक स्थान को (जहां असी नदी गंगा में मिलती है) होते हुये लौट आते हैं।

पुराणों में लिखा है कि एक समय राजा कीर्तवीर्य सज-धज कर जमदग्नि ऋषि के आश्रम में गये तो ऋषि ने स्वर्ग से कामधेनु लाकर उसकी सहायता से राजा का अपूर्व स्वागत किया। चलते समय राजा ने उसे ऋषि से मांगा और न देने पर उनका शिर काट कर ले जाना चाहा, किन्तु वह स्वर्ग को चली गई। पीछे जब ऋषि के पुत्र परशुराम जी और माता से यह हाल सुना तो उन्होंने प्रण किया कि मैं कीर्तवीर्य का नाश करूंगा। तब वे गंगा के तीर इस आश्रम में आकर महादेव जी की तपस्या करने लगे और महादेव जी ने प्रसन्न होकर उनको एक फरशा दिया और वरदान दिया कि इस फरशे से तुम अपने शत्रुओं का नाश करोगे। तब उन्होंने कीर्तवीर्य को मार डाला। परशुराम के तप करने के बाद यह स्थान सौम्य वाराणसी प्रसिद्ध हो गया है। यह स्थान वारणावत पर्वत पर वरणा और असी नाम की दो पुरियों के अन्तर्गत है।

नागोर चट्टी

उत्तर काशी से तीन मील पर लक्कड़ घाट चट्टी है। यहां से चार मील आगे नागोर चट्टी है। गंगा के किनारे छोटी सी धर्मशाला है। बनिये की दुकान भी है। एक महात्मा ने यहां एक रमणीक फुलवाड़ी भी लगा रक्खी है, जिसमें नाना प्रकार के फूल खिलते हैं। यहां ब्राह्मी बूटी भी मिलती है।

यहां से दो मील आगे डुंडा चट्टी है। गंगा जी कुछ अन्तर पर हैं। यहां पर दो धर्मशालायें हैं। बनिये की दुकान भी है। यह स्थान गर्म है। पर जल शीतल है।

मार्ग में कोई बड़ी चढ़ाई या उतार नहीं है। रास्ते में स्थान स्थान पर सुन्दर शीतल जल मिलता है।

धरासू

डुंडा से आठ मील पर यह स्थान गंगा के दायें तट पर स्थित है। यहां धरासू गाड नाम का गधेरा गंगा जी में आकर मिलता है। वहां पर कुछ दुकानें और काली कमली वाले की धर्मशाला है। यहां का जल शीतल है। यहां दर्बार की ओर से पुलिस चौकी भी है और शफ़ाखाना भी। इस मुकाम से गंगोत्री और यमुनोत्री की सड़कें अलग अलग होती हैं। यहां एक डाक बंगला टिहरी राज्य के जंगलात महकमे की ओर से बना हुआ है। यहां पर पुल के पार एक मन्दिर भैरोंनाथ जी का है। उसके पुजारी नाथ संप्रदाय के लोग हैं। मन्दिर के पूजा के खर्च को कुछ ज़मीन चढ़ी हुई है। यहां तक मार्ग लता वृक्षों के जंगल में होकर आया है। चढ़ाई उतार नहीं है।

नगुणगाड चट्टी

धरासू से पांच मील दूर गंगा के दायें तट पर नगुण गाड नामक चट्टी है। यहां सब तरह का सुभीता है। गङ्गा जी बहुत ही समीप हैं। इतने समीप किसी भी चट्टी पर नहीं हैं। स्थान गर्म है, पर गङ्गाजल शीतल है। यहां कुछ दुकानें हैं। एक धर्मशाला काली कमली वाले की ओर से बनी हुई है। यहां पर एक विष्णु मन्दिर है। यहां तक मार्ग सीधा है। आगे सड़क में कुछ चढ़ाव उतार हैं।

यहां से दो मील आगे धौली नामक स्थान में भी एक दुकान है।

यहां से आगे तीन मील पर छाम चट्टी है। यहां कुछ दुकानें और एक बड़ा धर्मशाला है। जो नैपाल के भूतपूर्व वजीर महराजदेव शमशेर जंग की तरफ से बनी है। उसकी देखभाल इत्यादि सब उन्हीं की ओर से होती है। स्थान गर्म है। पास ही पानी का नाला है।

भल्याण चट्टी

नगुण चट्टी से दस मील पर गंगा के बांये तट पर भल्याण चट्टी है। मार्ग उतार का है। यहां धर्मशाला और बनिये की दुकान है। स्थान गर्म है।

आगे रास्ते में भी कुछ फासिले पर दुकानें और जल के झरने मिलते हैं। मार्ग सीधा और सड़क अच्छी घोड़े की सवारी चलने लायक है।

यहां से छः मील पर पीपल चट्टी है। आगे कुम्हार चट्टी भी मिलती है।

टिहरी

भल्याण से ग्यारह मील पर दायें तट पर स्थित है। इस स्थान की ऊँचाई समुद्र पृष्ठ से २६०० फुट है। यह स्थान गंगा और भिलगणा नदी के संगम पर एक विशाल नगर है। नगर में सभी जाति के लोग निवास करते हैं, किन्तु ब्राह्मणों की संख्या अधिक है। नगर में सब प्रकार की देशी तथा पर्वतीय वस्तुओं का व्यापार होता है। यहाँ डाकखाना, म्युनिसिपैलिटी, पुलिस चौकी, और जंगलात के दफ्तर हैं। नगर के पश्चिम-दक्षिण की ओर एक ऊँचा टीला है, जिसमें प्राचीन राजाओं के समय के राजभवन हैं। वर्तमान काल के राजभवन, नगर के पूर्व-दक्षिण की ओर के टीले पर हैं। इसी के पास चणाखेत नामक एक समतल भूमि पर दरबार की तमाम सरकारी इमारतें हैं। यह स्थान टिहरी नगर की अपेक्षा कुछ हवादार और सुरम्य है। नगर में बिजली की रोशनी का प्रबन्ध है।

नगर के उत्तर-पश्चिम में भागीरथी तथा भिलगणा के संगम पर गणेश प्रयाग नाम का तीर्थ है। यहां पर एक रक्तवर्ण की शिला है, जिसको गणेश शिला कहते हैं। उसके पास ही प्राचीन काल का बना हुआ गणेश जी का मन्दिर है। इसी स्थान के पास गंगा जी के तट पर राजघाट है। नगर में श्रीलक्ष्मीनारायण, श्रीरामचन्द्र जी, नर्मदेश्वर, दक्षिण कालिका, गुरु रामराय तथा शीतला देवी के मन्दिर हैं। पुराने राजभवन के नीचे पश्चिम ओर गंगाजी के तट पर चट्टान के ऊपर श्रीबदरीनाथ जी का एक विशाल मन्दिर बना है। उसके पास ही अच्छी धर्मशाला है। वहां दरबार की ओर से सदावर्त भी बंटता है। इस मन्दिर की पूजा वैष्णव संप्रदाय के ब्राह्मण किया करते हैं। नगर के सभी मन्दिरों की नित्य पूजा के निमित्त दरबार से व्यय नियुक्त है।

जेलम

यह स्थान टिहरी से ग्यारह मील पर गंगा के बायें तट पर स्थित है। यहां एक सामान्य धर्मशाला है। स्थान गर्म है और जल भी ठण्डा नहीं है। मार्ग कुछ सीधा और कुछ उतार है।

यहां से पांच मील पर कैंथोली नामक पड़ाव है। यह स्थान न तो ठण्डा है न गर्म। यहां पर एक उत्तम ठंडे जल का स्रोत है। कैंथोली के पड़ाव से सड़क छोड़ कर बांई ओर को एक बटिया चन्द्रबदनी देवी को जाती है, जो वहां से तीन मील ऊपर है। मार्ग चढ़ाई का है। वहां पर्वत की चोटी पर चन्द्रबदनी देवी जी का मन्दिर है।

स्कन्द पुराण में लिखा है कि पूर्वकाल में जब महामाया सती जी दक्ष के यज्ञ में भस्म हो गई थीं तब महादेव जी ने इस स्थान पर उनके लिये विलाप किया था। उनके विलाप को सुन कर तमाम देवतागण महादेव जी के पास एकत्रित हो गये और वे सब वहां पर श्रीयोगमाया सती जी की स्तुति करने लगे। देवताओं की स्तुति से प्रसन्न होकर भगवती ने उनको दर्शन दिये। उनका दिव्य शरीर रक्तवर्ण हो रहा था। उनके तीन नेत्र और ललाट पर चन्द्रमा विराजमान था। महामाया के इस रूप को देख कर महादेव का शोक दूर हो गया। तब महादेव और देवतागण अपने अपने स्थानों को चले गये। उस दिन से यहां पूजा होती है।

खरसाड़

टिहरी से चौदह मील पर खाली नामक धर्मशाला है, किन्तु इसमें तकलीफ़ है। क्योंकि बनिये की दूकान नहीं है।

यहां से खरसाड़ दस मील पर है। आगे खांवा गांव से श्री गंगा जी के किनारे किनारे कोटेश्वर महादेव को जाने का रास्ता है। यह रास्ता आगे चल कर प्रधान सड़क में मिल जाता है। खेती बड़ी सुहावनी है। जहां जुताई के लिये बैल नहीं जा सकते वहां किसानों ने कुदाल से खोद कर गेहूँ की खेती की है।

खरसाड़ में धर्मशाला तो है, किन्तु बनिये की दुकान नहीं है। बीच के किसी गांव में न तो खाने पीने का सामान ही मिलता है और न ठहरने का ही सुभीता है।

रोड़

यह स्थान जेलम से दस मील पर है। रोड़ का पड़ाव गरम है। जल का सामान्य नाला है। मार्ग कुछ सीधा और कुछ धीमा उतार है।

यहां से वेड़ाकी चार मील पर है। यह पड़ाव गरम है और पास ही ठंडे जल का स्रोत है।

आगे धौलारघाट नामक झरना है। यह बहुत बड़ा है। इस पर पुल बन गया है। इस झरने में पानी तो कम है, पर धारा तेज है। इस लिये पार जाने में दिक्कत होती है। आगे पांच मील पर देव प्रयाग है।

केदारनाथ

श्रीकेदारनाथ का मन्दिर केदारपुरी में मंदाकिनी गंगा के तट पर स्थित है, जिसे पुल द्वारा पार किया जाता है। मंदाकिनी का उद्गम स्थान यहीं पर है। मन्दिर के चारों ओर खासा मैदान है। किन्तु सारी ज़मीन बर्फ़ से ढकी रहती है। यहाँ पर पक्के मकान हैं और पट्टियों से छाये हुये हैं। यहाँ पर मन्दाकिनी, सरस्वती और दूध गंगा के संगम में स्नान किया जाता है। स्वर्गद्वारी और महोदधि गंगा भी कुछ ऊपर मन्दाकिनी में मिली हैं। धारा बहुत तेज और जल बहुत ठंडा है। स्थान स्थान पर जल बर्फ़ से ढका हुआ है। मन्दाकिनी और सरस्वती के संगम के पास ही संगमेश्वर महादेव का छोटा सा मन्दिर है। पास ही गंगा जी का भी मंदिर है। केदारनाथ के मंदिर के सामने, सभा मंडप में बड़ा सा नदिया है। द्वार पर द्वार-पाल खड़े हैं और दीवार पर चारों तरफ पांचो पाण्डव, द्रौपदी, कुन्ती, पार्वती, लक्ष्मी, आदि की मूर्तियां हैं। बाहर परिक्रमा में अमृतकुण्ड, ईशानकुण्ड, हंसकुण्ड, रेतस कुण्ड और उदर कुण्ड हैं। अमृत और ईशानकुण्ड में आचमन तथा हंसकुण्ड में तर्पण किया जाता है। उदरकुण्ड का जल माता को देने से माता के ऋण से छुटकारा मिलता है। कुंड मकान के अन्दर है और ऊपर सोने का कलश है। यहां पर १५-२० धर्मशालायें हैं, जिनमें से एक इस पुस्तक के लेखक के पूज्य पिता श्रीयुत पंडित बलराम जी दुबे की बनवाई हुई है। इसकी देख रेख वहां का पंडा रुद्रप्रसाद पोस्ती करता है। यह धर्मशाला श्रीकेदारनाथ जी के मंदिर के समीप ही है। इसमें सब यात्री बिना किसी रोक टोक के बिना किसी को कुछ दिये अपनी इच्छानुसार ठहर सकते हैं। यहां पर होलकर सरकार और झुनझुन वाले की तरफ़ से साधु महात्माओं को सदावर्त मिलता है। यात्रियों को श्रीकेदारनाथ पुरी में भोजन करना निषिद्ध लिखा है। इससे बहुधा यात्रीगण यहां उपवास ही रहते हैं। कोई कोई यहां का तीर्थ कम दिन में पूरा करके शाम को रामबाड़ा आ जाते हैं।

श्रीकेदारनाथ जी का लिंग अन्य शिवलिंगों के समान नहीं है। वह त्रिकोणाकार एक बृहत् शिला है। यह चार हाथ लम्बी और डेढ़ हाथ गोलाकार है।

जनश्रुति है कि यह वही शिला है, जिसका श्रीशंकरा-चार्य ने पूजन किया था। केदारनाथ जी का वर्तमान मंदिर श्रीस्वामी शंकराचार्य जी का बनवाया हुआ है। और कहते हैं आदि शंकराचार्य जी ने इसी स्थान पर देह-त्याग किया था। यहां के पुजारी दक्षिणीय हैं, जिन्हें रावल कहते हैं। वे केदारनाथ की आमदनी लेते हैं।

यह एक छोटा सा गाँव है, जो छः महीने आबाद रहता है। यहां डाकघर और तारघर भी हैं। यहां से चार मील ईशानकोण को भैरोंझांप महापंथ नाम की शिला है। कहते हैं उस में प्राण त्याग करने से घोर पापी को भी मोक्ष प्राप्त हो जाता है। पिछले समय में कुछ लोग वहां जाकर चट्टान से गिर कर प्राण त्याग किया करते थे, किन्तु अब यह प्रथा अंग्रेजी राज्य होने से बन्द हो गई।

गौरीकुण्ड

केदारनाथ से सात मील नीचे मन्दाकिनी गंगा के दायें तट पर गौरीकुण्ड स्थित है। रास्ते में मार्ग बिकट है। सड़क तंग तथा पथरीली किन्तु उतार है। केदारनाथ से तीन ही मील पर रामबाड़ा चट्टी है, जिसके पास एक गुफ़ा है। जिसको 'भ्यूं ओड्यार' कहते हैं। इसका अर्थ है भीम गुफ़ा। कहते हैं यहां पर भीमसेन जी की मूर्ति है। उसके आगे देवदेखनी के पास गरुड़ जी की मूर्ति है। वहाँ पर गरुड़ जी के दर्शन होते हैं। यहां से आगे स्वर्गानिशनी चट्टी है, जिसके आगे चीरमासा भैरव का छोटा सा मन्दिर है। इनको चीर चढ़ाया जाता है। जो चीर न चढ़ाया जाय तो कहते हैं यह आधा पुण्य ले लेते हैं।

आगे गौरीकुंड का प्रसिद्ध तीर्थ है। पुराणोक्त कथा है कि इस स्थान पर गौरी जी ने प्रथम रजोस्नान किया था। यहाँ पर शीतल तथा गर्म जल के दो कुण्ड हैं। शीतल जल के कुण्ड को अमृतकुण्ड और तप्त कुण्ड को गौरी-कुण्ड कहते हैं। लोग इन दोनों कुण्डों में स्नान करते हैं। यहाँ पर तर्पण करने का बड़ा पुण्य है। यहां भगवती गौरी माई का मन्दिर भी है, जिसमें उनकी मूर्ति है।

सोन प्रयाग

गौरीकुण्ड से दो मील नीचे है। यहां पर वासुकि गंगा और मन्दाकिनी गंगा का संगम है। लोहे के झूले के पुल द्वारा इनको पार किया जाता है।

इससे दो मील इधर ही विनायक तीर्थ है। यहां पर शिरकटी गणेश की मूर्ति है। महादेव जी ने भ्रम से गणेश का शिर काट डाला, पीछे से हाथी का शिर लगा कर उन्हें

जीवित कर दिया। तब से गणेश श्रीगजानन बन गये। यह स्थान भी इसी लिये तीर्थ बन गया।

त्रिजुगी नारायण

सोन प्रयाग से गंगा तट का रास्ता छोड़ कर ऊपर की ओर रामपुर चट्टी से तीन मील पर त्रिजुगी नारायण का मन्दिर है। मन्दिर के समीप ही बाबा काली कमली वाले की धर्मशाला है। धर्मशाला लम्बी चौड़ी और दो मंजिला है मन्दिर के पास ही ब्रह्मकुण्ड है। इसके पास ही रुद्र कुण्ड, विष्णु कुण्ड और सरस्वती कुण्ड हैं। पहिले ब्रह्म कुंड और फिर रुद्रकुंड में स्नान किया जाता है। रुद्रकुण्ड में गुप्तदान किया जाता है। सरस्वतीकुंड पर तर्पण किया जाता है। यहां पर धर्मशिला है। उस पर शय्यादान किया जाता है। कहते हैं हिमाचल राजा ने अपनी बेटी का ब्याह शिवजी के साथ यहीं पर किया था। रुद्रकुण्ड में महादेव जी गुप्त हुये हैं। और केदारनाथ में जाकर प्रकट हुए।

त्रिजुगी नारायण के दर्शन दूर से होते हैं। मूर्ति अष्टधातु की है और पौन हाथ के करीब ऊँची है। श्री त्रिजुगी नारायण की नाभी से सरस्वती गंगा निकली हैं, जिसका जल पहिले सरस्वती कुण्ड में जाता है। सरस्वती कुण्ड से जल फिर दूसरे कुण्डों में जाता है। श्रीत्रिजुगी नारायण की मूर्ति के सामने चांदी की दूसरी मूर्ति रख दी गई है। इसी मूर्ति के दर्शन होते हैं। अगल बगल में और भी बहुत सी मूर्तियां हैं। यहां पर एक अग्नि कुंड धूनी भी है। लोग कहते हैं कि यह त्रेतायुग से बराबर जल रही है।

मन्दिर के बाहर दरवाज़े पर और प्रदक्षिणा में भी अनेक देव और देवियां हैं। मन्दिर के ऊपर गरुड़ की मूर्ति है और शिखर सोने का है। यहाँ के कुण्डों में पीले रंग के सर्पों का एक जोड़ा है। ये कभी कभी देख भी पड़ते हैं। मन्दिर लकड़ी का है।

यहाँ से एक मील पर शाकम्भरी देवी का मन्दिर है। यहां चीर चढ़ाया जाता है।

देवप्रयाग

देवप्रयाग एक छोटा सा कसबा है। यहाँ सब सामान मिलता है। बद्री नारायण के पंडे यहीं रहते हैं। जिनकी संख्या लगभग ४०० है। यहां श्रीरामचन्द्र जी का बिशाल मन्दिर है। यहां पर द्वारपाल फ़ी आदमी एक पैसा लेता है श्रीरामचन्द्र जी की श्याम मूर्ति बड़ी ऊँची है। इसकी स्थापना श्री शङ्कराचार्य ने की थी। मूर्तियां दर्शनीय हैं। मन्दिर की परिक्रमा में और भी कई देवताओं की मूर्तियां हैं। मार्ग में आदि विश्वेश्वर के दर्शन हैं। हरद्वार यहां से ५७ मील है। टिहरी, ऋषिकेष और श्रीनगर को सड़कें यहीं मिलती हैं। यहां अलखनन्दा और भागीरथी गंगा का सङ्गम है। बस्ती और बाजार अलखनन्दा के दोनों किनारों पर है। बीच में पुल है। संगम पर जाने के लिये झूले के द्वारा अलखनन्दा को पार करना पड़ता है। वहां पर जल बहुत गहरा है और बड़े बेग से बहता है। जल का प्रखर वेग होने के कारण सङ्गम पर मनुष्य आसानी से स्नान नहीं कर सकता। इस लिये पक्के घाट पर बड़ी बड़ी मोटी जंजीरें लटका दी गई हैं, जिनको पकड़ कर लोग स्नान करते हैं। यहां पर पाट भी बहुत चौड़ा हो गया है। यहां बड़ी बड़ी मछलियां हैं। संगम पर पहाड़ काट कर सीढ़ियां बना दी गई हैं। संगम पर मुंडन किया जाता है और वैताल शिला पर पिण्ड दान होता है।

व्यासघाट चट्टी

यहां भागीरथी गंगा और व्यास गंगा का संगम है। व्यास जी का मन्दिर भी है। व्यास जी की मूर्ति पीछे से स्थापित की गई है। किन्तु मुख्य स्थान यहां से चौथाई मील पर है। अब गंगा जी के किनारे किनारे रास्ता है। इस ओर गंगाजी में बहुत जल है। एक मील पर रामघाट है। यहां साखी गोपाल का मन्दिर है। यह उमरासू से पांच मील है और देवप्रयाग आठ मील है। गंगा के बायें तट पर स्थित है। यहां से बानघाट होकर एक सड़क पावड़ी को जाती है।

उमरासू चट्टी

यहां पर झरना है। चट्टियों पर मिट्टी और पटियों की छत है। पास ही में एक छोटी सी नदी गंगा जी में मिली है। उसको लोहे के पुल द्वारा पार किया जाता है। यह देवप्रयाग से तीसरे मील पर है। यह गंगा के बायें तट पर स्थित है।

कांडी चट्टी

इसे स्थानीय साहूकारों ने खूब सजा रक्खा है। यहां के झरने की धारा को दूसरी तरफ काट कर बहाया गया है। इससे चट्टी के दोनों तरफ धारा हो गई है। यहां धर्मशाला भी हैं। कांडी से एक मील पर शुकदेव और

गणेशजी के दर्शन होते हैं। आगे व्यास गंगा मिलती है। इसको पक्के झूले द्वारा पार किया जाता है। यह झूला कलकत्ते के सेठ सूरजमल की कृपा का फल है। यह व्यास घाट से चार मील और देवप्रयाग से बारह मील की दूरी पर गंगा के बायें तट पर स्थित है।

सिमाला चट्टी

यह गंगाजी से दूर है। इस लिये झरने के पानी का उपयोग किया जाता है। इस चट्टी और महादेव के बीच में एक बड़ा सा झरना है, जिस पर पक्का पुल बंधा है। यह कांडी से तीन मील पड़ता है। देवप्रयाग यहां से १५ मील है। यह गंगा के बायें तट पर स्थित है।

महादेव चट्टी

यहां पर महादेव जी का मन्दिर है और बनियों की दुकानें भी हैं। सिमाला से यह चार मील है। यहां से एक मील पहिले ही चढ़ाई और उतार समाप्त होता है। यह स्थान देवप्रयाग से ८६ मील पड़ता है। यह गंगा के बायें किनारे पर है।

बन्दर भेल

यह गङ्गा के बायें किनारे पर है। कुण्ड चट्टी से कुछ आगे बढ़ने पर पहाड़ के शिखर पर से गंगा जी के दर्शन होते हैं। गंगाजी के किनारे किनारे पहाड़ के ऊपर से रास्ता है। बन्दर भेल से हरद्वार ३५ मील पर है। इस चट्टी में बनियों की दुकानें हैं। यह महादेव चट्टी से तीन मील दूर है। रास्ते में थोड़ी चढ़ाई है। फिर आध मील का उतार है। यह स्थान देवप्रयाग से २२ मील पड़ता है। यहां तक मार्ग गंगा के किनारे किनारे रहता है, किन्तु अब पहाड़ के ऊपर से होकर जाता है। गंगा के उस पार का भाग टिहरी राज्य में है। बन्दरभेल से आगे गङ्गा के दोनों ओर बड़ा घना जंगल है। मार्ग निकालने में ही बड़ा परिश्रम करना पड़ता है। कहीं कहीं पर तो विशाल वृक्षों की बड़ी बड़ी शाखायें गङ्गाजल पर झुकी हुई मालूम पड़ती हैं मानो किसी के विश्राम के लिये स्थान अथवा कमरे बनाये गये हों।

कुण्ड चट्टी

यह एक छोटी सी चट्टी है। सरकार की बनवाई हुई पक्की सड़क होने के कारण यात्रियों को तकलीफ़ नहीं होती है। यहां पर चढ़ाई समाप्त होकर उतार आरम्भ होता है। बन्दरभेल से यह ४½ मील और देवप्रयाग से २६½ मील है। गङ्गा के बायें तट पर स्थित है।

फूल चट्टी

यह गंगा के किनारे से कुछ दूर बायें तट पर है, यहां बनिये की दूकान है।

यहां पहाड़ पर ही खेती होती है। अनाज की छोटी छोटी हरी क्यारियां देखने में बहुत भली मालूम होती हैं। ये क्यारियां सीढ़ियों की तरह होती हैं। यहां से फूल नदी बहुत छोटी देख पड़ती है। यह नदी बड़े बड़े दो पहाड़ों के बीच से बहती है। बन्दर भेल से यह ४½ मील पर है। हरद्वार यहां से केवल २२ मील रह जाता है।

गरुड़ चट्टी

यहां पर धर्मशाला है, पर बनिये की दूकान नहीं है। फूल नदी को इसके पास ही पार करना पड़ता है। लछमण झूले की तरह इस पर भी छोटा झूले का पुल है। यह गंगा के बायें तट पर है।

लक्ष्मण झूला

यहाँ पर लछमण जी का प्राचीन मन्दिर बना हुआ है। इस स्थान के बारे में कहा जाता है कि श्रीराम के छोटे भाई लछमण ने यहाँ पर तप किया था। श्रीध्रुवजी की भी दर्शनीय मूर्ति यहाँ विद्यमान है। घाट के नीचे गंगा जी में ध्रुव कुण्ड है। इस स्थान पर गंगा जी की गहराई तो काफ़ी है, किन्तु पाट कम चौड़ा है। ऐसा अनुमान किया जाता है, जब श्रीलछमण जी सन्यास धारण कर हिमालय में तप करने को आये तो उन्होंने गंगा जी को इस स्थान पर रस्सों से पार किया था, तभी से इस स्थान का नाम लछमण झूला पड़ गया है। पहले जब लोग बद्रीनारायण की यात्रा को जाते थे उस समय इस स्थान को रस्सों द्वारा ही पार करते थे। यहाँ पर एक पुल बना दिया गया था। कुछ दिन हुये वह श्रीगंगा जी की बाढ़ में टूट गया। उसके स्थान पर अब लोहे का एक झूलता हुआ बहुत ही सुन्दर पुल राजा सूरजमल सेठ ने बनवा दिया है। इससे यात्रियों का आने जाने में सुविधा हो गई है। पुल को लटकौआ झूला इस लिये कहते हैं कि इसे साधने के लिये बीच में कोई खंभा आदि नहीं है। यहाँ से ऋषीकेश तीन मील है। यह हरिद्वार से पक्की सड़क द्वारा मिला हुआ है। इस लिये कितने ही लोग वहां से तांगे या

मोटर में आकर इस झूले को देख उसी दिन वापस चले जाते हैं। झूले के दोनों ओर बाबा काली कमली वाले की धर्मशालायें हैं। सदावर्त भी मिलता है। गंगा जी के उस पार सूर्यकुण्ड और सीताकुण्ड हैं।

देवप्रयाग से यह स्थान ४० मील दूरी पर है और फूलचट्टी से केवल ४ मील रह जाता है।

ऋषीकेश से यहां आनेवाले पुल पार कर 'स्वर्गाश्रम' होते हुए लौटते हैं। यहां भी शिवजी का एक मन्दिर है, जिसके सामने ईंटों का एक पक्का घाट बना हुआ है। यहाँ पर स्वामी आत्म प्रकाश जी का प्रबन्ध है। इन्हीं की तरफ से घाट पर इस पार आने के लिये दो नौकायें सदैव तैयार रहती हैं। पार आने पर रामाश्रम नामक मठ के दर्शन होते हैं। जहाँ पर स्वर्गीय श्रीरामतीर्थ जी की स्मृति में एक बृहत् पुस्तकालय है। जिसमें प्राचीन ग्रन्थों का अधिक संग्रह है। लक्ष्मण झूला गङ्गा की दाहिनी ओर है।

तपोबन

यह श्रीगङ्गा जी के बायें किनारे पर छोटा सा गांव है। यहाँ श्री लक्ष्मण जी ने तप किया था। यहां लक्ष्मण जी का मन्दिर है। यहीं पर ही लक्ष्मण झूला है। यहां विष्णु भगवान का मन्दिर भी है। जहां पर रामानुज सम्प्रदाय का वैरागी पूजा करता है। यहां बांसमती चावल अच्छा पैदा होता है।

मौनीबाबा की रेती

यहाँ सामान तौला जाता है। यहीं पर सरकारी ठीकेदार रहता है। कड़ी वाले यानी सामान उठाने वाले, यात्रियों को झपान इत्यादि में बैठा कर ले जाने वाले यहीं पर मिलते हैं। पास ही भुवनेश्वर महादेव का मन्दिर है। यह गंगा के दाहिने तट पर है।

ऋषीकेश

हरिद्वार से उत्तर की ओर पक्की सड़क पर १४ मील की दूरी पर ऋषीकेश नाम का प्रसिद्ध स्थान है। लोग इसको हृषीकेष के नाम से भी पुकारते हैं। यह स्थान भी मायाक्षेत्र के अन्दर ही समझा जाता है। यह स्थान जंगल में गङ्गा के किनारे बड़ा रमणीक है। इस स्थान को रेल भी जाती है। रेल की लाइन से ऋषीकेष हरिद्वार २३ मील दूर है। यह स्थान देखने में एक सुन्दर तपोवन सा मालूम होता है। अब भी बहुत से साधु, सन्यासी और योगीजन यहां तपस्या के हेतु निवास करते हैं। अब इस स्थान पर बहुत सी धर्मशालायें व मन्दिर बन गये हैं। इसकी आबादी भी बढ़ चली है। बाबा काली कमली वाले ने यहां एक क्षेत्र और धर्मशाला बनवा रक्खी है। इस क्षेत्र में सब साधुओं को दोनों समय भोजन मिलता है। उनकी धर्मशालाओं का प्रधान कार्यालय यहीं है। इससे थोड़ी दूर ही गङ्गा जी के उत्तर किनारे पर जंगल में बाबा आत्म प्रकाश जी ने स्वर्गाश्रम स्थापित किया है। स्थान गंगा के किनारे पर है और देखने में सुन्दर है।

यह एक क़सबा है। यहाँ सब ज़रूरी सामान मिलता है। डाकघर, पुलिस चौकी आदि सब कुछ है। यहां के दर्शनीय स्थान हैं:—रामचन्द्रजी का मन्दिर, कुब्जा अमृत ऋषिकुण्ड, बाराह भगवान और भरत जी का मन्दिर। इस स्थान के लिये कहा जाता है कि भरत जी ने यहां पर तपस्या की थी। इस मन्दिर की रचना और कला से ज्ञात होता है कि यह बौद्धकाल का है। इसकी प्राचीनता में सन्देह नहीं है।

कुब्जा अमृत ऋषिकुण्ड में स्नान माहात्म्य है। गरम जल का एक श्रोत भी टीले से निकलता है। तीन मोरियों से होकर पानी आता है। तीनों को गंगा, यमुना, सरस्वती कहते हैं। इसके पास ही एक दूसरा श्रोत है।

ऋषीकेष से थोड़ी दूर पर कैलाश नामक स्थान है। यहां पर श्रीशङ्कराचार्य और अभिनव चन्द्रेश्वर महादेव के मन्दिर हैं। श्रीशङ्कराचार्य महाराज की मूर्ति दर्शनीय है। यहां पर शङ्कराचार्य जी की गद्दी भी है। धर्मशाला बहुत अच्छी है। यह गंगा तट पर है। देवप्रयाग से यह स्थान ४२ मील है। लक्ष्मण झूला से केवल तीन मील पड़ता है। जहां बाबा जी का आसन है ठीक उस के पीछे उन्हीं की तरफ से एक पुस्तकालय और वाचनालय है। इसमें करीब ४००० धार्मिक ग्रन्थों का सुन्दर संग्रह है। हिन्दी, उर्दू, अंग्रेज़ी भाषा के दैनिक, साप्ताहिक सब मिल कर बीस बाईस पत्र आते हैं। इसके सिवा एक और 'भरत पुस्तकालय'' है। इससे भी जनता लाभ उठाती है। यहाँ पर एक चौक बाज़ार है। जिसमें सभी प्रकार की आवश्यक वस्तुयें पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो सकती हैं। सड़क पक्की है। रात को बड़ी बड़ी दुकानों पर गैस की रोशनी होने से इस बाज़ार का दृश्य शहरों को भी मात कर देता है। सड़क सीधी गंगाघाट तक चली गई है। इस जगह

श्री रामचन्द्रजी का मन्दिर दर्शनीय है। गंगा किनारे पक्के घाट का अभाव है। बाबा जी श्रीकाली कमली वाले के सतत प्रयत्न से कलकत्ते, बम्बई के कुछ धनीमानी धर्मात्मा सेठ यहां पर पक्का घाट बंधवा देने का प्रयत्न कर रहे हैं। आशा की जाती है कि कुछ वर्षों में हरिद्वार की तरह प्लेट-फार्म बंध जाने से यह स्थान खिल उठेगा।

भरत जी का विशाल मन्दिर ऋषिकेष की बर्तमान राजधानी कहलाता है। कहते हैं कि जब श्रीशंकराचार्य जी राज्य को निर्मूल करते हुये इधर से गुज़रे थे तब उन्होंने क्रमशः इन मन्दिरों की स्थापना की थी (१) श्रीरामचन्द्र जी का मन्दिर जो कि गंगाघाट पर है (२) श्री भरत जी का मन्दिर, (३) आगे चलकर श्री कैलाश आश्रम के नज़दीक श्री शत्रुघ्न जी का मन्दिर और लक्ष्मण झूला में श्री लक्ष्मण जी का। टिहरी राज्य के पर्गनों ने इसका जीर्णोद्धार करवाया और मठ को भूमि अर्पण की। भरत मन्दिर के सन्मुख ही जिस स्थान पर गंगा जी हैं, वही मायाकुंड जो अति प्राचीन और ऐतिहासिक बतलाया जाता है। यहाँ का पानी समीपवर्ती स्थानों की अपेक्षा अत्यधिक गहरा है और परलोक गमन करने वाले प्रसिद्ध प्रसिद्ध महात्माओं का यहीं पर जल संस्कार किया जाता है। इसी जगह चन्द्रभागा नदी आकर श्री गंगा जी में गिरती है। अतएव यहां के प्राकृतिक दृश्य की छटा बड़ी मनोहर है।

इन सब के अतिरिक्त यहां पर एक प्रसिद्ध और आलीशान शिवालय भी है, जिसे मतिलाल सेनगुप्त ने निर्माण कराया है। यह गंगा के दाहिने तट पर है।

सत्यनारायण चट्टी

हरिद्वार से ऋषिकेष जाने के लिये पक्की सड़क है। उस सड़क पर हरिद्वार से चार मील पर सत्यनारायण जी चट्टी है। यहां पर श्री सत्यनारायण जी का मन्दिर है। सुन्दर कुंड भी है। यह गंगा के दहिने तट पर है।

कनखल

हरिद्वार से तीन मील की दूरी पर दक्षिण की ओर कनखल तीर्थ है। यह गंगा जी के दक्षिण किनारे पर बसा है। कनखल नाम का अर्थ नीचे के श्लोक में दिया जाता है:—

खलः को नाम्र मुक्तिं वै भजते तत्र मज्जनात्।
अतः कनखलं तीर्थम् नाम्ना चक्रुर मुनिश्वरम्॥

यह छोटा क़सबा है किन्तु हरिद्वार की अपेक्षा बड़ा है यहाँ भी पक्के घाट बने हुये हैं। यहां पर सन्यासियों, बैरागियों के मठ और अखाड़े बहुत हैं। बाजार बड़ा और सुन्दर है। किन्तु यहां हरिद्वार की रौनक नहीं है। बड़े बड़े विशाल मकान खाली और उजाड़ पड़े हैं। अनेक सदावर्त लगे हैं। किन्तु उनका प्रबन्ध ठीक न होने के कारण साधु सन्यासी कष्ट पाते हैं।

कनखल में लंधौर वाली रानी की छत्री और घाट दर्शनीय हैं। छत्री में भगवान कृष्ण की दिव्य मूर्ति है। छत्री की कला-कौशल और चित्रकारी सुन्दर है।

कनखल एक प्राचीन स्थान है। इस स्थल पर सनत्कुमार ने तप किया था। इसी स्थान पर दस प्रजापति ने यज्ञ किया था। इसमें सती ने अपना शरीर भस्म कर दिया था। उनकी स्मृति में दस प्रजापति का मन्दिर अब भी विद्यमान है। मन्दिर में वीरभद्र और भद्रकाली की छोटी छोटी मूर्तियां हैं और सामने सती कुंड है। कुंड से लोग विभूति लेकर मस्तक पर लगाते हैं। मन्दिर और कुंड के मध्य में नन्दी की मूर्ति है। दालान में हनुमान जी की मूर्ति है।

हरि की पैड़ी के उत्तर में थोड़ी दूर पर सन् १८५५ ई० में गंगा के दाहिनी ओर से नहर निकाली गई। वह यहां से ६२५ मील बहकर कानपुर में फिर गंगा में मिल गई है। गङ्गा के बीच में लोहे के बड़े बड़े फाटक लगे हुये हैं। सूखी ऋतु में ये फाटक ऊपर उठा लिये जाते हैं और नहर पर के फाटक नीचे कर दिये जाते हैं। जिसके कारण नहर में अधिक बाढ़ नहीं आने पाती। नहर में जो अधिक पानी आ जाता है, वह मायापुर के नहर के पुल के फाटक से कनखल की ओर बहा दिया जाता है।

यहाँ से गंगा दो भागों में विभक्त हो जाती है। कनखल के पूर्व की ओर गंगा का प्रवाह है और पश्चिम की ओर नहर बहती है।



गंगा-तट पर बसे हुए स्थानों की संक्षिप्त सूची

ज्वालापुर

हरिद्वार से ४ मील पश्चिम और गंगा-नहर के उत्तर की ओर ज्वालापुर नगर स्थित है। यह हरिद्वार म्युनिसिपेलिटी के अन्तर्गत है। हरिद्वार स्टेशन से ज्वालापुर का स्टेशन दो मील है। यह क़सबा हरिद्वार और कनखल दोनों से बड़ा है। इस में पक्के मकान बने हैं। पोस्ट आफ़िस, पुलिस चौकी, स्कूल और अस्पताल आदि सब यहाँ हैं। ज्वालापुर से दो मील की दूरी पर रानीपुर का दर्शनीय पुल है। इस के नीचे गंगा की नहर और ऊपर एक नदी बहती है। यह गंगा के दाहिनी ओर पड़ता है।

मायापुर

मायाक्षेत्र का मायापुर एक प्रधान केन्द्र था। प्राचीन समय में यह नगर अति सुन्दर और वैभव सम्पन्न था। काल की गति का चक्र चला और इस का भी सम्पूर्ण वैभव नष्ट हो गया। मायापुर सातवीं सदी तक रहा, बाद वह नष्ट होने लगा। इस समय मायापुर की बस्ती नहीं है। हरिद्वार और कनखल के बीच में उसके खंडहर कहीं कहीं दृष्टिगोचर होते हैं। भूमि खोदने से उसके स्मृति-चिन्ह रूप ईंट, पत्थर, मूर्तियां और सिक्के आदि इस स्थान पर मिलते हैं। इस नगरी का विस्तार ६६ मील लम्बा और २० मील चौड़ा बतलाया गया है।

इस समय मायापुर हरिद्वार से १ मील दक्षिण-पश्चिम गंगा के दाहिने तट पर है। यह सप्तपुरियों में से माया नाम की एक पवित्र पुरी थी। अब यह हीन दशा में है। यहाँ के प्राचीन ऊंचे टीले ही अब इसकी स्मृति मात्र हैं। इसी मायापुर में राजा बेन की उजड़ी गढ़ी बनी हुई है। इन टूटे फूटे ध्वन्सावशेष स्थानों को देखने के लिये भी यात्री बड़े चाव से जाते हैं। यह गंगा के दाहिने तट पर है।

कांगड़ी

हरिद्वार से ४ मील पर कांगड़ी नाम का गांव है। उस के निकट आर्यसमाज का सब से बड़ा गुरुकुल है। भारत की राष्ट्रीय संस्थाओं में इस का स्थान मुख्य है। प्राचीन सभ्यता और शिक्षा का भारत में प्रचार करने के लिये इस संस्था की स्थापना हुई है। इसमें ब्रह्मचारियों को प्राचीन समय के गुरुकुलों को भांति शिक्षा देने का प्रबन्ध है। यह गंगा के बायें तट पर है।

हरद्वार

हरिद्वार भारत के सात मुख्य पवित्र नगरों में से है। गंगा की विचित्र शोभा के देखने का सौभाग्य सब से प्रथम यहीं प्राप्त होता है। हरिद्वार का स्टेशन ई० आई० आर० की एक शाखा पर है। जो लक्सर जंकशन से देहरादून तक गई है। हरिद्वार में करीब ४३ धर्मशालायें हैं। कुछ में यात्रियों के भोजन का भी प्रबन्ध है।

हरिद्वार तो अब एक बड़ा नगर बन गया। यह श्री गंगा जी की नहर के किनारे है। डाकघर, बिजली, तार, टेलीफ़ोन आदि सभी यहाँ पर उपस्थित हैं। म्युनिसिपेलिटी के उद्योग से इस समय पक्की सड़कें बन गई हैं। अस्पताल भी खुल गया है। खाने पीने के लिये बाजार है।

हरिद्वार में यात्रियों का मुख्य कर्म स्नान है, यहाँ देव-दर्शन का भी बड़ा पुण्य है। इस स्थान में पिण्डदान, तर्पण, और पुष्प (हड्डी) प्रवाह भी किया जाता है। हरि की पैढ़ी में अस्थियाँ प्रवाहित की जाती हैं। स्नान का भी मुख्य स्थान यह और कुशावर्त, बिल्वकेश्वर, नील पर्वत और कनखल हैं। स्टेशन से पौन मील की दूरी पर प्रसिद्ध घाट 'हरि की पैढ़ी' है। यह स्थान हरिद्वार का केन्द्र है। पत्थर का पक्का घाट बना है। दाहिनी ओर दो तीन मन्दिर हैं। बाईं ओर एक बड़ा पत्थर का मकान है। जिसके साथ ही एक और मन्दिर है। इस घाट पर उत्तर की ओर दीवार के नीचे हरि का चरण चिन्ह है। हरि की पैढ़ियों से कुछ दूर पूर्व की ओर गंगा के बीच घाट में पानी से थोड़ा ऊपर एक चबूतरा है। सरकार ने इस प्लेटफार्म तथा सीढ़ियों के मध्य में एक छोटा सा पुल बांध दिया है। प्लेटफार्म और पैढ़ियों के बीच में जहाँ गंगा की धार है उस स्थान को ब्रह्मकुण्ड कहते हैं। यहाँ बड़ी बड़ी निडर मछलियाँ बहुत हैं। ब्रह्मकुण्ड के पास गंगा जी की धार के बीच में ही मनसा देवी का मन्दिर है। मन्दिर की प्रदक्षिणा यात्री लोग जल ही में करते हैं। ब्रह्मकुण्ड का हरिद्वार में बहुत माहात्म्य है। इस स्थान पर ब्रह्मा जी ने यज्ञ किया था। यहीं पर श्री गंगाजी का मन्दिर है जहाँ सायं-प्रातः आरती होती है। रात को बहुत से नर-नारी पत्ते के दोनों में दीपक जलाकर गंगा की धारा में छोड़ते हैं। रात को गंगा की शोभा बड़ी सुन्दर मालूम होती है।

हरि की पैड़ी से दाहिनी ओर थोड़ी दूर पर कुशावर्त नाम का प्रसिद्ध घाट है। महाराज इन्दौर ने यहाँ एक छाया-दार चबूतरा बनवा दिया है। यहाँ यात्री सुख से स्नान, पूजा-पाठ, और पिण्डदान कर सकते हैं। मेष की संक्रान्ति के समय यहाँ पिण्डदान की बड़ी भीड़ होती है। स्कन्द पुराण में इस तीर्थ का बहुत माहात्म्य लिखा है। यहाँ महामुनि दत्तात्रेय जी ने तप किया था।

हरिद्वार से पश्चिम की ओर रेलवे लाइन के उस पार विल्व नामक पर्वत है। उस पर विल्वकेश्वर महादेव का प्रसिद्ध मन्दिर है। यहाँ बेल के वृक्ष अधिक हैं। मन्दिर में जाने का मार्ग सुगम है। यह मन्दिर सौ वर्ष से प्राचीन नहीं जान पड़ता। यहाँ पर विल्वकेश्वर महादेव की दो मूर्तियाँ हैं। एक मन्दिर के अन्दर और दूसरी इस मन्दिर के सामने नीम के पेड़ के नीचे चबूतरे पर है। विल्वकेश्वर पर्वत के पीछे गौरीकुण्ड है। इस में स्नान, मार्जन, और आचमन करके विल्वकेश्वर के दर्शन किये जाते हैं। यहाँ बन्दरों की अधिकता है। यहाँ पर किसी समय गंगा का प्रवाह था। इस तीर्थ में महर्षि ऋचीक का आश्रम है। पास ही एक गुफा में दुर्गा देवी की मूर्ति है।

नील पर्वत

गंगा की दूसरी तरफ सामने की पहाड़ी का नाम है। इसके नीचे नीलधारा बहती है। असल में नीलधारा ही गंगा की प्रधान धारा है। ठीक पहाड़ की चोटी पर चण्डी देवी का मन्दिर बना हुआ है। इसके समीप ही अञ्जना देवी का छोटा सा मन्दिर है। यहाँ मेला भी लगता है। नील नामक गण ने यहां पर शङ्कर की उपासना की थी। परम भक्त नील ने जिस शिवलिङ्ग को स्थापना की वह नीलेश्वर महादेव कहलाते हैं।

हरिद्वार में अन्य तीर्थों की भांति मन्दिरों की संख्या अधिक नहीं है। दो चार मन्दिर अब बन गये हैं। श्रवण-नाथ महादेव का मन्दिर कुशावर्त के समीप है। इसको श्रवणनाथ नामक सन्यासी ने भीख मांग मांग कर बनवाया था। इसके पूर्व बीकानेर महाराज का बनवाया हुआ गंगाजी का शिखरदार मन्दिर है, जिसमें सदावर्त भी बटता है। हरि की पैड़ी से उत्तर की ओर भीमगोड़ा के मार्ग पर कांगड़े के राजा का बनवाया हुआ चौबीस अवतारों का मन्दिर है।

हरि की पैड़ी से बांई ओर जाने वाली पक्की सड़क पर दो फ़र्लांग पर भीमगोड़ा नामक स्थान है। यहाँ रेलवे लाइन के पास की पहाड़ी के नीचे एक मन्दिर बना है। आगे एक चबूतरा और पक्का कुंड है। कहते हैं यहां पर भीम ने तपस्या की थी जिनके पैर रखने से कुण्ड बन गया है।

स्टेशन से थोड़ी दूर रेलवे लाइन की दूसरी तरफ़ आसा देवी का सुन्दर मन्दिर एक पहाड़ी पर है।

सूर्यमल की धर्मशाला से दक्षिण की ओर तीन सब से पुराने मन्दिर हैं। पहला मायादेवी का दूसरा भैरव जी और तीसरा अष्टभुजी शिवजी का। मायादेवी का मन्दिर ग्यारहवीं शताब्दी का बताया जाता है। हरिद्वार गंगा के दाहिने तट पर है।

दारानगर

बिजनौर से दस मील दक्षिण में श्री गंगा जी के बायें किनारे पर बसा हुआ है। नगर का एक भाग इस्किनगंज कहलाता है। यह नगर से करीब आध मील दूरी पर है। यहाँ गंगा स्नान के कई मेले होते हैं। जिसमें प्रधान कार्तिक मास में पूर्णिमा का होता है। जन-संख्या लगभग तीन हज़ार है।

बिजनौर

समुद्र-तल से उँचाई ७८० फुट। श्री गंगाजी से बायीं ओर करीब तोन मील है। लोग कहते हैं कि इसे प्राचीन काल में राजा बेणु ने बसाया था। इस राजा ने बीजना (पंखे) बेंच कर राज्य का काम चलाया था। लोगों से कर नहीं वसूल किये। शायद बिजनौर विजयनगर या बीजानगर का अपभ्रंश भी हो सकता है। यहाँ जाटों का आधिपत्य रहा। बाजार पांवरगंज में है। कई मसजिद और मन्दिर हैं। सरकारी सरायँ और डाकघर भी है।

जहानाबाद

दारानगर से दो मील दक्षिण श्री गंगाजी के बायें किनारे पर बसा हुआ है। इस का पुराना नाम गोवर्धन नगर था। शुजाजात खाँ ने इसका नाम जहाँगीर बादशाह की यादगार में जहानाबाद कर दिया।

शामपुर

यह नजीबाबाद परगने में श्री गंगाजी के शीशमवाला घाट से करीब तीन मील है। इसमें सन् १९०१ में केवल ३८३ व्यक्ति रहते थे। इसमें डाकघर है और गंगा के बायें तट पर स्थित है।

बाणगंगा—गंगा संगम

यह धारा गंगा के एक पूर्व मार्ग पर स्थित है और

गंगा से चांदपुरी ग्राम में आकर दक्षिण तट पर मिलती है।

कोरतपुर

यह नजीबाबाद तहसील जिला बिजनौर में गंगा की बाईं ओर है। बिजनौर से दस मील है। इससे मालिन नदी करीब दो मील है। यह बहलोल लोदी के समय में बसाया गया था। सन् १८४७ में मनुष्य संख्या ७८७८ थी, सन् १९०२ में वह १५०५१ तक बढ़ गई। यहां से सड़क मंडावर होती हुई रावली घाट को गई है और दूसरी सड़क बिजनौर को गई है।

नागल

यह नगर श्री गंगा जी से करीब डेढ़ मील बायें तट पर है। इसे सन् १६०५ में साहनपुर के राय ने बसाया था। जन-संख्या लगभग ढाई हज़ार है। इसके पास गोयला ग्राम में कार्तिक-पूर्णिमा को मेला लगता है।

मंडावर

यह गंगा की बाईं ओर पुराना नगर है। बिजनौर से नौ मील है। यहां से रावलीघाट को सड़क है। गांव के आस पास आम के बगीचे हैं। यहां देवी जी के उपलक्ष में चैत्र और क्वार में मेले लगते हैं। पुराना नगर उजड़ गया था। बारहवीं सदी में अगरवाल बनियों ने इसे फिर से आबाद किया।

सावलगढ़

यह गंगा के बायें किनारे पर एक किला था। शाहजहाँ के राजत्वकाल में नवाब सावलखाँ जाह ने इसे बनवाया था। इस प्रकार अब यह करीब तीन सौ वर्ष पुराना है। अब किले के भग्नावशेष रह गये हैं। सन् १९०१ में केवल ८० व्यक्ति रहते थे।

बूढ़ गंगा—गंगा संगम

यह संगम गढ़मुक्तेश्वर से कुछ मील उत्तर दायें तट पर है। इसे गंगा का पूर्व मार्ग बतलाते हैं। यह सत्य भी प्रतीत है। क्योंकि तैमूर अपनी आत्मकथा में लिखता है कि उसने गंगा के तट पर फ़ीरोज़पुर में डेरा किया। यह ग्राम इसके तट पर है।

बूढ़गंगा खादर (कछार) का एक विशेष अंग है। यह एक शिथिल और असंयम धारा है। जो बहुत से स्थानों में संयमबद्ध नदी के बजाय एक पोखरों की पंक्ति के सदृश्य प्रतीत होती है। विशेषकर गर्मियों में तो यह कई स्थानों पर सूख जाती है। पोखरों में बहुधा दलदल रहता है और उनसे चटाई और कुर्सी बुनने के पदार्थ प्राप्त किये जाते हैं।

पूठ

यह गढ़मुक्तेश्वर से ८ मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। गंगा के दाहिने किनारे पर एक छोटा सा ग्राम है। यह पूठ परगना की राजधानी है। इसका महत्व पुलिस का थाना बहादुरगढ़ को हटा देने के बाद से कम हो चला है। १९०१ में यहां की जनसंख्या केवल ५२२ थी। गंगा पार जाने के लिये यहां नावें रहती हैं।

कहा जाता है कि हस्तिनापुर के राजाओं का उद्यान यहीं था और इसका नाम पुष्पवती था। नाम में रूपान्तर मुसल्मानों के कारण हुआ है।

पूठ पर खादर समाप्त हो जाता है क्योंकि यहां से उच्च तट पश्चिम की ओर धारा तक चला जाता है।

गढ़मुक्तेश्वर

गंगा जी के दाहिने किनारे पर स्थित है। यहां पर नावों का पुल है किन्तु वर्षा ऋतु में नाव चलती है। यहां ई० आई० आर० की एक शाखा (मुरादाबाद से गाजियाबाद तक) पर एक स्टेशन और रेल का पुल भी है।

यह नगर बूढ़गंगा से संगम होने के कुछ मील के अन्तर पर एक उच्च कगार पर स्थित है। मुख्य बाज़ार पूर्व से पश्चिम की ओर जाता है। पूर्व में चार बड़ी बड़ी सरायें हैं। फौजी पड़ाव भी उधर ही है। पश्चिम में नाज की मंडी का खुला मैदान है। अस्पताल ब्राह्मणों और मुसलमानों के मुहल्ले के बीच में स्थित है। पुलिस का थाना भी खादर के सिरे पर ही है। डाकखाना, कांजीहाउस, स्कूल और डाकबंगला नगर के पश्चिमी किनारे पर है। लकड़ी और बांस का व्यापार मुख्य है जो गढ़वाल और देहरादून से गंगा में बहाये जाते हैं।

कहते हैं कि यह स्थान हस्तिनापुर का एक मुहल्ला था। भागवतपुराण और महाभारत में इसका वर्णन पाया जाता है। यहां पर एक अति प्राचीन दुर्ग है जिसका जीर्णोद्धार मराठा सरदार मीरभवन ने कराया था। मुसलमान इतिहासकार भी इसका वर्णन सेना रखने के स्थान के रूप में करते हैं।

इसका नाम मुक्तेश्वर महादेव के नाम पर पड़ा है। जिनका विशाल मन्दिर गंगा देवी जी को अर्पित किया गया है। गंगा जी के यहाँ चार मुख्य मन्दिर हैं। जिनमें से दो तो उच्च कगार पर स्थित हैं और दो नीचे पर हैं।

सब में गंगा की मूर्ति सफेद संगमरमर की बनी हुई है और वस्त्र धारण किये हैं। मेरठ वाली सड़क के निकट वाले मन्दिर के पास एक कुआं भी है जिसके जल से स्नान करना पाप दूर करने के लिये आवश्यक है। इसी मन्दिर के निकट कोई ८० सतीस्तम्भ है।

कार्तिक-पूर्णिमा के अवसर पर दो लाख मनुष्य समस्त भारत से यहां जमा होते हैं छठवें और बारहवें वर्ष तो यह संख्या द्विगुणित हो जाती है और चालीसवें वर्ष और भी अधिक। सोमवती अमावस, बैसाख की पूर्णिमा, गंगा दशहरा और संक्रान्ति के अवसर पर भी मेला लगता है। जाट और गूजर सकुटुम्ब बैलगाड़ियों में बैठ कर अधिक आते हैं। स्त्रियों की भड़कीली पोशाक बहुत सुहावनी मालूम पड़ती है। पहले यहां घोड़ों का एक मेला लगता था किन्तु वह टूट गया है। उसके स्थान पर अब खच्चरों की प्रदर्शिनी होने लगी है।

टिगरी

यह गंगा के बायें तट पर स्थित है। यह मुरादाबाद जिले के हसनपुर तहसील में एक ग्राम है। यहां से गंगापार गढ़मुक्तेश्वर को नावों के पुल पर सड़क जाती है। सदियों से यहां कार्तिक की पूर्णिमा को गंगास्नान का बड़ा मेला लगता है। यहां थाना, डाकखाना, कांजीघर, सरायँ और लोअर प्राइमरी स्कूल भी हैं।

आहार

यह एक छोटा किन्तु अति प्राचीन स्थान गंगा के दाहिने किनारे पर स्थित है। यह व्यापारिक मार्गों से दूर स्थित है। केवल कच्ची सड़कें सियाना और अनूप शहर को जाती हैं। पहिले इसका कुछ व्यापारिक महत्व था भी किन्तु नरोरा पर बांध बंध जाने से जल मार्ग भी टूट गया है। यहां पर थाना, डाकघर, अपर प्राइमरी स्कूल और बाजार है जो हर मंगल को लगतो है। यहां से मुरादाबाद जिले के लिये नाव भी चलती हैं।

यहाँ पर मन्दिर बहुत हैं जिनमें से कुछ तो प्राचीन हैं अम्बकेश्वर महादेव का मन्दिर बहुत प्रसिद्ध हैं। फाल्गुन में शिवरात्रि पर और ज्येष्ठ में गंगा दशहरा पर मेला लगता है। तब गंगास्नान के लिये बहुत भीड़ इकट्ठी होती है। दो मील दूर मोहम्मदपुर में चैत्र शुक्ल पक्ष नौमी को अम्बिका का मेला होता है। कहते हैं कि श्रीकृष्ण जी रुक्मिणी को यहां से हर ले गये थे। रुक्मिणी महाराज भीष्म की कन्या थी। उन्होंने जहां पर गंगास्नान किया था वहां रुक्मिणीकुंड अब तक बना हुआ है। यहां एक तालाब है जिसमें श्री कृष्ण जी ने मौर सिराया था। भादों कृष्ण पक्ष द्वादशी को ब्राह्मण स्त्रियाँ अब तक इसमें स्नान करती हैं। यहां की खिन्नी मशहूर है।

कहते हैं कि यहां भूरेश्वर महादेव का एक बड़ा विशाल मन्दिर था जिसमें बहुत माया भरी हुई थी। इसी मन्दिर का एक पत्थर एक ब्राह्मण ने एक दफा पाया जिसमें इसका कुछ हाल लिखा हुआ था। उसी के आधार गवर्मेंट ने यहां कुछ खुदाई भी की थी। ब्रह्मपुराण में लिखा है कि और भी बहुत से मन्दिर यहां पर थे।

भैरों, गणेश, कंचनामाई, चामड माई और हनूमान जी के भी मन्दिर हैं यहाँ की परिक्रमा बारह कोस में है जो अब भी की जाती है। कार्तिक शुक्ल नौमी को इसका आरम्भ होता है।

पाप मोचनी तीर्थ में स्नान करके नागेश्वर महादेव के दर्शन किये जाते हैं। अनावृष्टि के समय यहाँ वर्षा हो जाने पर पानी भर जाता है।

ब्रह्मपुराण में लिखा है कि जब असुरों के कारण पृथ्वी-तल पर हाहाकार मच गया तो भगवान ने बाराह रूप धारण कर उनका दमन किया था फिर सोरों जाकर भगवान ने यह रूप त्याग दिया।

पहिले इस स्थान का नाम कुन्दनपुर था। जन्मेजय के नागयज्ञ करने के पश्चात् इस स्थान का नाम आहार (अहि = सर्व, हार = नाश) पड़ा। जन्मेजय ने नागर ब्राह्मणों को इसके उपलक्ष में नगर के समीप ही जागीर दी थी। लोग यह भी कहते हैं कि आहार ही प्राचीन कौशाम्बी है किन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं है।

रामघाट

गंगा के दाहिने किनारे पर एक छोटा नगर है यहाँ एक नाव का पुल है। जिस पर से अलीगढ़ से बुलंदशहर जाने वाली सड़क निकलती है। नगर की स्थिति एक स्वास्थ्यकारी स्थान पर है जो नदी तल से ८५० फ़िट ऊँचे पर है।

रामघाट उन तीर्थ स्थानों में से है जहाँ यात्री स्नान करने के लिये समस्त भारत से आते हैं मुख्य मेला कार्तिक की पूर्णिमा को लगता है वैसे ही मेले बैशाख की पूर्णिमा और ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष नौमी को भी लगते हैं। अन्य मेले सोमवती अमावश और लौंद मास की पूर्णिमा को (यदि वह सोमवार को पड़ती है) होते हैं।

राजघाट पर रेल खुल जाने से अब बहुत से यात्री वहाँ

जाने लगे हैं। रुहेलखंड से जो व्यापार होता था वह भी बन्द हो गया है। पहिले बनारस और मिर्जापुर से नाव द्वारा गेहूँ और ऊन का अच्छा व्यापार था किन्तु नारोरा पर बांध बंध जाने से अब यह बिलकुल बन्द सा हो गया है।

किन्तु यहाँ के मन्दिर इतने प्रसिद्ध हैं कि वे कभी पूर्ण रूप से भुलाये नहीं जा सकते हैं। ये गणना में बहुत हैं किन्तु किसी की बनावट बहुत उच्च कोटि की नहीं है। कहते हैं रामघाट को कृष्ण के भाई बलराम ने उस समय बसाया था जब उन्होंने कोलासुर को कोयल पर हराया था।

रामघाट में थाना, डाकखाना, अपर प्राइमरी स्कूल है। बाज़ार सप्ताह में एक बार बुधवार को लगता है।

अनूपशहर

यह आहार से ७ मील दक्षिण गंगा के दाहिने तट पर बसा हुआ है। यहाँ से बुलन्दशहर, अलीगढ़ और आहार को सड़कें जाती हैं। यहाँ एक नावों का पुल भी है जिस पर से गंगा के उस पार मुरादाबाद, चंदौसी और बदायूं को सड़कें जाती हैं। जाड़े में गहरी धारा बदायूं की ओर चली जाती है और इस किनारे पर रेत ही रेत रह जाता है।

यह नगर लम्बा और सँकरा है। यहाँ बेवस्टरगंज नामक एक बड़ा सुन्दर बाज़ार है। इसी के दक्षिण में डाकख़ाना, अस्पताल, तहसील, थाना और मिडिल स्कूल हैं। एक बड़ी सुन्दर सराय भी है। गलियाँ और गंगा जाने के रास्ते पक्के कुटे हुये हैं। बाज़ार में एक बड़ी सुन्दर मसजिद भी है।

किन्तु इसकी विशेषता यह है कि यह हिन्दुओं का धार्मिक स्थान है। मुख्य मेला कार्तिक की पूर्णिमा को होता है तब बड़ी भीड़ इकट्ठी होती है। छोटे छोटे मेले तो हर मास की पूर्णिमा को होते हैं। फाल्गुन में एक मेला होता है जिस का नाम स्वामी दीनदयाल का मेला है। नहाने के मुख्य स्थान गंगा दरवाजा और मदार दरवाजा है घटवालियों का कार्य गुजराती ब्राह्मण करते हैं जो गढ़ी मुहल्ला में निवास करते हैं। गंगा के किनारे एक बड़ी कोठी और बाग़ पैकपरा राज्य का है।

अनूपशहर पहले व्यापार का केन्द्र था किन्तु अब इसकी अवनति हो रही है। इसका एक कारण चन्दौसी से अलीगढ़ वाली रेल का खुलना है। साथ ही नारोरा पर बांध बंध जाने से जलमार्ग रुक गया है। यहाँ कपड़े, कम्बल और जूते बनते हैं और चीनी का व्यापार उन्नति कर रहा है।

यहाँ की जलवायु बहुत उत्तम समझी जाती है किन्तु यहां की मृत्युसंख्या भी अधिक है। यह ४६.७६ प्रति सहस्र है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि बहुत से धार्मिक हिन्दू यहाँ केवल मरने के लिये ही आते हैं। हिन्दू वैद्यों का एक प्रसिद्ध कुटुम्ब यहाँ रहता है।

अनूप शहर बड़गूजर राजा अनूपराय ने जहाँगीर के राज्यकाल में बसाया था। यहाँ पहिले एक पुराना खेरा भदौर नाम का था।

राजघाट

यह तीर्थ गंगा के दाहिने तट पर स्थित है। ई० आई० आर० की अलीगढ़ से चंदोसी जाने वाली शाखा यहाँ एक पुल पर से निकलती है। यह अनूपशहर से आठ मील दक्षिण है और एक पक्की सड़क द्वारा अनूपशहर से जुड़ी हुई है। नारोरा यहाँ से चार मील दक्षिण को पड़ता है। रेल के खुल जाने से राजघाट ने रामघाट का महत्व कुछ कुछ ले लिया है। कार्तिक स्नान के मुख्य मेले के अवसर पर यात्रियों को रेल से यहाँ आने में सुविधा होती है। रेल के दक्षिण में एक नावों का पुल भी है जो इस स्थान को बदायूँ ज़िले से जोड़ता है। राजघाट में एक डाकखाना, तारघर और लोअर प्राइमरी स्कूल है। यहाँ की जनसंख्या ८७२ है निवासी मुख्यतया ब्राह्मण और मल्लाह हैं।

करनवास

यह ग्राम गंगा के दाहिने तट पर अनूपशहर से आठ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर है। कहते हैं कि इसे पांडवों के सौतेले भाई राजा कर्ण ने बसाया था। एक और दन्त कथा के अनुसार राजा कर्ण उज्जयिनी नरेश विक्रम के समकालीन थे। इस स्थान की प्रसिद्धि गंगा दशहरा के मेले के कारण है जिसमें सम्भवतः एक लाख मनुष्य पश्चिम से आकर भाग लेते हैं। यहाँ पर शीतला देवी का एक अति प्राचीन मन्दिर है जिनका दर्शन बहुत सी स्त्रियाँ हर सोमवार को करती हैं।

यह स्थान काफ़ी समय से आर्यसमाज के प्रचार का केन्द्र रहा है। स्वामी दयानन्द जी यहाँ कुछ काल तक रहे थे और उन्होंने यहाँ और पास पड़ोस के गांवों में प्रचार किया था। यहां एक डाकखाना और लोअर प्राइमरी स्कूल है। यहाँ एक प्राचीन बैस राजपूत वंश का है।

नारोरा

गंगा के दाहिने किनारे पर एक ग्राम है। निम्न (लोअर) गंगा नहर यहीं से निकाली जाती है। यही इस स्थान के महत्व का कारण है। नहर के लिये गंगा में एक बड़ा बांध

बंधा हुआ है और धारा को उथला करने के लिये भी काम किया गया है। नहर के उपयोग के लिये यहाँ एक ट्रामवे जारी की गई थी जो अब तक कोई चार मील दूर राजघाट स्टेशन तक जाती है। बांध पर सड़क भी गई है।

नहर के मुख्य स्थान के पास ही एक छोटी सी बस्ती है जिसमें नहर के बंगले और दफ़्तर हैं। एक सरायँ, एक डाकघर भी है। बबुआगंज में हर एतवार को बाज़ार भी लगता है।

बासी

यह ग्राम गंगा के दाहिने तट पर स्थित है। यहाँ से गंगा मुरादाबाद ज़िले को चलती है। इसलिये अगहन शुक्ला दशमी से पौष कृष्ण प्रतिपदा तक बड़ा भारी मेला लगता है। इसमें दूर दूर से यात्री और दुकानदार आते हैं। यहाँ बाराह भगवान का अति प्राचीन मन्दिर भी है। और भी कितने ही सुन्दर देवालय तट पर बने हुये हैं। सीढ़ियाँ और घाट पक्के हैं। तीन-चार मील दूर गंगा की एक नहर से इस तालाब में पानी लाया गया है, और कम होने पर एक बम्बे द्वारा लाया जाता है। गंगा अब यहाँ से हटते हटते तीन मील चली गई है। अब जिस स्थान पर वह लहरा कहलाता है वहां पर लहरेश्वर महादेव का अति प्राचीन और विशाल मन्दिर है। खुर्जे के दानी सेठ गंगा सागर ने सोरों लहरा तक पक्की सड़क बनवादी है।

यहाँ पर आने वाले यात्रियों में राज्यों में बसने वालों की संख्या अधिक होती है। मालवा, अलवर, भरतपुर, जयपुर. जोधपुर, बीकानेर, ग्वालियर, धौलपुर, मेवाड़, धारवाड़ आदि रियासतों से लोग आते हैं। यात्री यहाँ से लौट कर भ्रातृभोज करता है और एक गंगा जली भरे हुये गंगाजल को वह उन सब जेवने वालों को पूर्ण रूप से पिलाता है। वह उस गंगाजल को एक कठौते में कर लेता है और उसी में से जल भर भर कर परसता है। उसका जल बराबर बढ़ता ही रहता है और कभी कभी उमड़ भी पड़ता है। कहते हैं कि जिसके कठौता में जल नहीं उमड़ता उसको स्नान का फल नहीं मिलता है। जेवने वाले उसके यहाँ भोजन न कर लौट जाते हैं और उसे फिर स्नान करने जाना पड़ता है। इसी से कदाचित यह लोकोक्ति प्रचलित हुई है कि मन चंगा तो कठौती में गंगा।

गंगा जी के प्राचीन गर्भ पर गुप्तवंश का प्राचीन और ऐतिहासिक दुर्ग भी था जो खंडहर और भग्नावस्था में अब भी विद्यमान है। प्रतिष्ठानपुर का दुर्ग जीतकर शशांक देव ने कान्यकुब्ज दुर्ग के रक्षार्थ वहीं छावनी डाली थी।

कुरुक्षेत्र के समान इस की भी गणना भारत के रण क्षेत्रों में है। बहुत काल पहिले मध्य देश के राजाओं के भाग्य का निपटारा यहीं हुआ था। ईसा की बारहवीं शताब्दी में जब आर्यावर्त के राजाओं का सौभाग्य-सूर्य सदैव के लिये अस्त हो रहा था तब इस शूकर क्षेत्र ही में महाराज जयचन्द्र ने मुहम्मदगोरी की सेना का सामना किया था।

शूकर क्षेत्र में प्राचीन और नवीन कितनी ही धर्मशालाओं के होने से यात्रियों को ठहरने की पूर्ण सुविधा है। यात्री पंडों के घरों पर भी ठहरते हैं।

सोरों से गंगा जी को जो सड़क गई है उससे वामपार्श्व में सोरों से निकलते ही "सीता जी की रसोई" है जिसे लोग बाल्मीक मुनि का आश्रम बतलाते हैं। कहते हैं रामचन्द्र जी द्वारा बनवास दिये जाने पर सीता ने अपना अधिकांश जीवन यहीं बिताया था। और उसी स्थान पर रसोई बनाकर भोजन किया था। रसोई भवन के परकोटे के भीतर एक कुंआ है उसका जल कुछ विशेष दिनों में रात के बारह बजे दूध हो जाता है। इस लिये इस कुएँ को दूधधारी कुआं कहते हैं।

यहाँ थाना, स्टेशन, म्युनिसिपेलिटी, पुस्तकालय आदि सब हैं। खांड की तैयारी और तिजारत होती है। यहाँ सब जातियों के लोग रहते हैं। ब्राह्मण और वैश्य मुख्य हैं।

सोरों

यह नगर गंगा के दाहिनी ओर बूढ़ गंगा के तट पर एटा ज़िले में स्थित है। यद्यपि यहाँ पर कुछ व्यापार होता है किन्तु यह स्थान तीर्थ होने के कारण ही अधिक प्रसिद्ध है। भक्त लोग समस्त भारत से मथुरा जाकर बूढ़ गंगा में भी स्नान करने आते हैं। ये स्वयं गंगा जी में चार मील उत्तर गढ़िया घाट में नहाते हैं। अगहन में पूर्णिमा को बड़ा मेला लगता है। बूढ़ गङ्गा यहाँ एक बड़ी झील सी बनाती है जिसमें यात्री लोग स्नान करते हैं। सोरों का पहिले ऊकलक्षेत्र नाम था किन्तु हिरण्यकश्यप नामक दैत्य के बाराहरूप विष्णु भगवान द्वारा बध किये जाने पर इसका नाम ऊकलक्षेत्र पड़ गया। प्राचीन नगर का अवशेष केवल एक ढेरी रह गई जिसे किला कहते हैं।

सोरों कासगंज से बरेली जानेवाली आर० के० आर० पर एक स्टेशन है। कहा जाता है कि सतयुग में हिरण्याक्ष

पृथ्वी को उठाकर पाताल ले गया और वहाँ विष्टा के कोन में बन्द करके रख दिया। उस समय विष्णु भगवान ने बाराह अवतार लिया और पाताल लोक जा हिरण्याक्ष को मार पृथ्वी को ला फिर यथा स्थान स्थापित किया। जिस स्थान पर भगवान ने अवतार लिया था वहाँ एक बड़ा सा तालाब बना हुआ है। अवतार मिती अगहन शुक्ला ११ को हुआ था।

ककोरा

गंगा के बायें किनारे पर गंगा से तीन मील पर स्थित है। कादिर चौक पश्चिम की ओर इस से मिला हुआ ही है। यहाँ की जन संख्या लगभग तीन हज़ार है। यहाँ के निवासी मुख्यतया मुरान और तोमर राजपूत हैं। यहाँ पर एक सहायता प्राप्त स्कूल और एक ग्राम्य बंक है। बाजार सप्ताह में दो बार लगता है।

कार्तिक की पूर्णिमा को यहाँ गंगा स्नान का बड़ा मेला लगता है। जो करीब सात आठ दिन तक रहता है। कभी कभी तो इस में मथुरा, दिल्ली, फर्रुखाबाद और रुहेलखंड और दोआब के अन्य स्थानों के तीन लाख आदमी जमा हो जाते हैं। मेला अब ककोरा में नहीं लगता जैसा कि पहिले होता था किन्तु कुछ मील की दूरी पर मेला का स्थान गंगा के इधर उधर होने से बदलता रहता है। किन्तु इस का नाम हमेशा ककोरा का मेला ही रहता है। यात्रियों का मुख्य अभिप्राय गंगा के पवित्र जल में शुभ मुहूर्त पर नहाने से होता है। व्यापारिक दृष्टि से यहाँ हाथी, ऊंट, बड़े बड़े घोड़े, बैल दूर से बिक्री के लिये आते हैं। कपड़ा, बिसातखाना, घोड़ा गाड़ियाँ, रथ, बैल गाड़ियाँ, पालकियाँ, चमड़े और धातु के सामान की बहुत सी दुकानें आती हैं और लाखों रुपये का व्यापार होता है। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की ओर से यहाँ एक कृषि-प्रदर्शनी भी होती है।

कछला

गंगा के बायें तट पर स्थित है। बरेली से मथुरा जाने वाली सड़क यहाँ से गुज़रती है। एक नावों का पुल भी है। वर्षा में नाव चलती है। ई० आई० आर० की सोरों जाने वाली लाइन पर एक स्टेशन भी है। रेल का पुल भी बना हुआ है।

यहाँ पर पुलिस चौकी, डाकघर, सराय, कांजीघर, लोअर प्राइमरी स्कूल आदि सब हैं। इस ज़िले की अफ़ीम की कोठी भी यहीं है। बाज़ार सप्ताह में दो बार लगता है। यहाँ दरी बनने के कारण यह स्थान प्रसिद्ध है। ज्येष्ठ में मेला लगता है।

खेरा-जलालपुर

यह गंगा के बायें तट पर स्थित एक बड़ा ग्राम है। बदायूं से फ़र्रुखाबाद जाने वाली सड़क यहाँ से निकलती है। यहाँ की जलवायु अच्छी नहीं है। ज्येष्ठ के महीने में ज़खिया नामक छोटा सा मेला लगता है। यहाँ एक अपर प्राइमरी स्कूल है।

पटियाली

यह ग्राम एटा ज़िले में गंगा के एक पुराने दाहिने तट पर स्थित है। यह एक बहुत प्राचीन नगर है। महाभारत तक में इसका वर्णन आया है। इसकी उत्पत्ति के बारे में दो कथायें प्रचलित हैं। एक इस प्रकार है :—पाञ्चाल देश के राजा द्रुपद का राज्य पांडवों के गुरु द्रोण ने छोड़ दिया जिससे उसकी अवनति होने लगी। ब्राह्मणों से राय मांगी गई। उन्होंने बतलाया कि यदि राज्य का एक भाग द्रोण को दे दिया जाय तो समृद्धि फिर से आ सकती है। ऐसा ही किया गया और द्रोण को कम्पिल से पटियाली तक भूखंड दे दिया गया। पटियाली का नाम पटियन भी हो गया।

दूसरी कथा इस प्रकार है कि पटिया नामक एक अहीरिन रवि को दही ले जाया करती थी उन्होंने उदारता पूर्वक एक भूखंड उसको दे दिया जिस पर अब यह ग्राम स्थित है पटियाली की अब अवनति हो रही है। न व्यापार है न व्यवसाय।

पृथ्वीपुर-ढाई

यह जलालाबाद तहसील में गंगा के बायें तट पर एक बड़ा ग्राम है। जलालाबाद से एक कच्ची सड़क द्वारा मिला हुआ है। पृथ्वीपुर और ढाई दो ग्रामों से मिल कर इस का नाम पड़ा है। यहां की जन-संख्या तीन सहस्र से ऊपर है। यहाँ रघुवंशी राजपूत बहुत रहते हैं।

यहाँ डाकखाना, लोअर प्राइमरी स्कूल और एक दर्शनीय पक्का मन्दिर है। गंगा के तट पर भरतपुर में सुप्रसिद्ध ढाईघाट का बड़ा मेला कार्तिक की पूर्णिमा को लगता है जो इस ज़िले का सब से बड़ा मेला है। इसमें लगभग पचास सहस्र मनुष्य भाग लेते हैं

कादरचौक

कादरचौक नामक ग्राम गंगा के बायें किनारे पर स्थित है। यह आर० के० आर० का स्टेशन भी है। किन्तु यहाँ आने के लिये बदायूं पर ही उतरना चाहिये क्योंकि वहाँ

इक्का, तांगा, मोटर आदि सवारी मिलती है। यह बदायूँ वाली सड़क पर वहाँ से केवल तीन मील दूर स्थित है। यहां थाना भी है।

इसे कादर जंग नामक नवाब ने गंगा के किनारे बसाया था। यहाँ एक कच्चा किला भी बनवाया था। लेकिन वह अस्त व्यस्त हो गया केवल उसके ऊँचे ऊँचे टीले उसकी याद दिलाते हैं।

महावा-गंगा संगम

महावा नदी का उद्गम मुरादाबाद ज़िले में है। यह साधारणतया गंगा के बराबर ही (समानान्तर) बहती है। उझियानी परगना के पश्चिमी सिरे पर गङ्गा के बायें तट पर इसका संगम है।

कम्पिल

यह फ़र्रुख़ाबाद ज़िले में गंगा के दाहिनी ओर एक पुराने कगार पर स्थित है। यहां की तम्बाकू और आलू मशहूर हैं और बाहर भेजे जाते हैं। ग्राम के उत्तर में जहां पहिले गंगा जी बहती थीं वहाँ अब मन्दिरों और स्नानगृहों की श्रेणियां खड़ी हुई हैं। यहाँ लोग अब भी एक मैले पोखर में स्नान करते हैं जिसे गंगाजी बाढ़ के समय में छोड़ देती हैं। सबसे प्राचीन और दर्शनीय रामेश्वरनाथ महादेव का जीर्ण मन्दिर है जिसकी तहें एक के बाद एक ईंट और पत्थर की बनी हुई हैं। यहां सरौगी लोग बहुत आते हैं। उन्होंने चन्दा करके जैन स्वामी नेमीनाथ के तीन मन्दिर बनाये हैं। इनके लखनऊ, मैनपुरी और फर्रुखाबाद वालों के नाम पर नाम रक्खा गया है जिन्होंने मुख्यतया चन्दा दिया है। यहां माकिन नामक मुसलमान शहीद के मकबरे के खंडहर भी हैं। यहां बसन्त और हेमन्त में मेले लगते हैं। कम्पिल का मुख्य महत्त्व उसकी निर्विवाद प्राचीनता है। महाभारत में इसे दक्षिण पांचाल की राजधानी लिखा है। यहां पर राजा द्रुपद का दरबार लगता था और यहीं अर्जुन ने द्रौपदी को जीता था। ग्रामीण लोग लक्ष्यभेद का ठीक स्थान अब भी दिखलाते हैं। दन्त कथाओं के आधार पर राजा द्रुपद की गद्दी का स्थान और द्रौपदी अब भी देखने को मिलते हैं।

कायमगंज

यह स्थान फर्रुखाबाद ज़िले की कायमगंज तहसील का केन्द्र है। दाहिने तट पर यह एक ऊँचे कगार पर स्थित है जहां पहिले गंगाजी बहती थीं। एक मील उत्तर इसी कगार के नीचे बूढ़गंगा अब भी बहती हैं। कायमगंज के आम, तम्बाकू, आलू, ताले और चक्कू मशहूर हैं। बसन्त ऋतु में यहाँ दो मेले लगते हैं। पहिला मेला परशुराम के मन्दिर पर लगता है और दूसरा लालजोदास के मन्दिर पर। बाजार मंगल और शनिवार को लगता है। यहां की अफगान जनता के स्वभाव के कारण पहिले यहां तलवार और आतिशबाज़ी का काम होता था। किन्तु इस व्यवसाय का अवशेष अब चाकू और सरौते बनाने में रह गया है। यहां पर कई प्रकार की पगड़ी (सर में बांधने का वस्त्र) बनती है। फूना (एक प्रकार का सुन्दर वस्त्र) और मिला (एक प्रकार का वस्त्र जो मज़बूत किन्तु रद्दी प्रकार का होता है) बनता है।

अहमपुर जदोद

कायमगंज के पास यह एक छोटा सा ग्राम है जो फर्रुखाबाद जिले में गंगा की तराई के ऊपर एक उच्च स्थान में दाहिने तट पर स्थित है। यहां शमसाबाद जाने वाली कच्ची सड़क के दोनों ओर बाजार लगता है। चीनी बनाने के लिये यह स्थान प्रसिद्ध है। पहिले और अब भी इस स्थान से भारतीय सेना में अच्छे सिपाही भरती होते हैं।

शमसाबाद

फर्रुखाबाद ज़िले में यह नगर गंगा के दाहिने तट पर एक पुराने कगार पर स्थित है। यहां एक चौकोर नाज की मंडी है जो दक्षिण में नीम और इमली के वृक्षों से छायान्वित एक बड़े बाजार का रूप धारण कर लेती है। शमसाबाद अब किसी विशेष व्यापार या व्यवसाय के लिये प्रसिद्ध नहीं है। किन्तु जब विलायती कपड़ा नहीं आया था तब यह स्थान मिठा और फूना नामक सुन्दर वस्त्रों को बड़े परिमाण में बनाता था। यहां से आलू और तम्बाकू जो यहीं पैदा होते हैं बड़े परिमाण में बाहर भेजे जाते हैं।

अल्लाहगंज

ज़िला फर्रुखाबाद में यह रुहेलखंड ट्रंक रोड के पश्चिम में आबाद है किन्तु गंगा के किनारे नहीं है। एक मील पूर्व की ओर रामगंगा बहती है। अल्लाहगंज का पुराना भाग बाज़ार को घेरते हुये कच्चे झोपड़ों का एक समूह है जिस पर कुछ बड़े वृक्ष छाया किये हुये हैं। रुहेलखंड की सड़क बन जाने के पश्चात् दुकानदारों ने पुरानी दुकानें छोड़ कर सड़क के किनारे नई दुकानें बनाई हैं। सोमवार और शुक्रवार को अनाज और कपड़े की दुकान लगती है। यह गंगा की बाईं ओर स्थित है।

अमेठी

यह ग्राम गंगा के दाहिने तट पर ज़िला और तहसील

फर्रुखाबाद में राजधानी से लगभग एक मील पश्चिम पुराने कगार पर स्थित है। अब यह ग्राम अधोगति को प्राप्त है। और नवाब मुहम्मदखां के बनवाये हुये किले के स्मारक चिन्ह भी मिलते जा रहे हैं। नाना प्रकार के सुन्दर आमों के लिये यह ग्राम पास पड़ोस में अच्छी ख्याति प्राप्त किये हुये है और यहां के बागों से क़लमें भेजी जाती हैं।

ढाईघाट

फर्रुखाबाद से १६ मील उत्तर-पश्चिम गंगा के बायें तट पर स्थित है। यहाँ कार्तिकी पूर्णिमा पर गंगा स्नान का बड़ा भारी मेला लगता है और व्यापारी दूर दूर से दुकानें लेकर आते हैं। आठ दिन तक मेला रहता है।

फर्रुखाबाद

यह गंगा के दाहिने तट पर स्थित है। लगभग दो मील उत्तर-पश्चिम में गंगा जी बहती हैं। यहां के व्यापार का इतिहास शीघ्र उन्नति और शीघ्र अवनति का है। किन्तु इसे कारख़ाना न कह कर यदि कोठी मात्र कहें तो ज़्यादा उचित है क्योंकि यहाँ कलकत्ते से माल मँगा कर पश्चिम के ज़िलों को भेजा जाता था। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि पहिले यह ब्रिटिश राज्य की सीमा पर स्थित था। जब यह सीमा बढ़ी और आने जाने की सुविधाओं की उन्नति हुई तो इसकी अवनति आपसे आप होने लगी।

फर्रुखाबाद में विश्रान्ति बहुत बनी हुई हैं। जिनमें शाह जी की विश्रान्ति विशेषतया दर्शनीय है। इसके जोड़ की विश्रान्ति कदाचित और कहीं नहीं है।

फतेहगढ़

यह फर्रुखाबाद ज़िले का केन्द्र है और गंगा के दाहिने तट पर स्थित है। यहां का व्यापार कुछ भी उन्नतिशील नहीं है।

भोजपुर

ज़िला फर्रुखाबाद में यह ग्राम फतेहगढ़ से ६ मील दक्षिण, दाहिने तट पर एक उच्च कगार पर प्रमुख स्थान पर स्थित है। इसी के दक्षिण बागर नाला आकर गंगा से मिला है। भोजपुर पहिले व्यापार का अच्छा स्थान था किन्तु अब तो यह खेतिहरों की आबादी मात्र है।

कमालगंज

यह उन्नतिशील बाजार वाला नगर गंगा के दाहिने तट पर दो मील के अन्दर ही स्थित है। बी० बी० सी० आई० आर० की कानपुर-अचनेरा शाखा पर यहां एक स्टेशन भी है। इससे यहाँ के व्यापार का गेहूँ और अन्य अनाज कलकत्ता-बम्बई भेजने के लिये केन्द्र हो रहा है।

पुरुषोत्तम क्षेत्र

पुरुषोत्तम क्षेत्र की उत्पत्ति श्रृङ्गी जी इस प्रकार कहते हैं :—एक समय सब देवता और मुनि बैकुण्ठ गये और रंज से जालन्धर की मूर्खता को कहने लगे। घर में वृन्दा नाम की उसकी स्त्री पतिव्रता है। उसके आचरण से वह गर्वित है। वहाँ सूर्य की गति नहीं है। सम्पूर्ण तपस्वियों का तप नष्ट हो गया। भगवान स्वयं गंगा जो तट पर पहुँचे जहाँ सुन्दर चैत्ररथ बन में गंगा की स्थिति है। सलाह कर सब लोग जालन्धर के यहाँ गये और उसे मारकर अपने स्थान को गये तब से यह पुरुषोत्तमक्षेत्र कहलाया।

विष्णु भगवान और देवताओं से यह बर प्राप्त किया कि इस क्षेत्र में स्नान करने से प्रेम, पौत्र और धन से युक्त होवे और शरीर त्यागने पर स्वर्ग को प्राप्त होवे।

एक समय एक प्रेत ने आकर ऋषि से अपनी मुक्ति और गंगा की उत्पत्ति पूंछी। श्रृङ्गी जी बोले। एक समय सब देवता बैकुण्ठ गये वहाँ ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि ने सभा बनाई और शिव ने विष्णु से प्रेरित बहुत गान किया। उस गाने से शिव और विष्णु को छोड़ सब देवता द्रवित (पिघल) हो गये। विष्णु की ताल से शिवजी ने गाया तो विष्णु जल रूप हो गये। धर्म को जानने वाले ब्रह्म और शेष भी जल रूप हो गये धर्म को जानने वाले ब्रह्मा और शेष भी जल रूप हो गये। काल पाकर वह द्रव स्थिर हो गया। फिर जब विष्णु भगवान ने बामन रूप हो कर बलि से याचना की तब तीसरे ही पैर से जो ब्रह्माण्ड में छेद हो गया उसी छेद से ब्रह्मद्राव च्युत हुआ। विष्णु भगवान की आज्ञा से ब्रह्माजी ने उस जल को कमण्डल में धारण किया और बहुत काल बीतने पर ब्रह्माजी विष्णु भगवान से बोले :—हम ब्रह्मा जल से कमल पर ठहरने को समर्थ नहीं हैं। हे विष्णो और कुछ विचारिये जिससे मेरा कल्याण हो। तब विष्णु भगवान ने मन में विचार कर शिव जी से कहा कि आप ब्रह्मद्राव को जटा में धारण करने के योग्य हैं। शिवजी ने वैसा ही किया। शिवजी का ध्यान कर भगीरथ राजा वह ब्रह्मद्राव ले गये।

श्रृङ्गी ऋषि बोले कि प्रेत मोक्ष के लिये यह क्षेत्र मुख्य स्थान है।

सिंघीरामपुर

फर्रुखाबाद ज़िले में यह ग्राम जिसे संग्रामपुर भी

बोलते हैं गंगा के उच्च दाहिने तट पर स्थित है। स्थान रमणीय है। यहाँ का मुख्य महत्व यहाँ पुण्यकारी स्नान है। ज्येष्ठ और कार्तिक में दो वार्षिक मेले लगते हैं जो तीन दिन तक रहते हैं। किन्तु, इन मेलों में रेल खुल जाने से अब उतनी भीड़ नहीं लगती जितनी पहले लगती थी क्योंकि बहुत से लोग सोरों या इलाहाबाद चले जाते हैं। यहाँ बहुत सी जीर्ण धर्मशालायें इस स्थान के पूर्व महत्व की याद दिलाती हैं। स्थान दर्शनीय है विशेष कर वर्षा ऋतु में जब दो मील पर बहने वाली गंगाजी घाट की सीढ़ियों तक आ जाती हैं।

पुराणों में लिखा है कि इस स्थान का नाम पहिले पुरुषोत्तम क्षेत्र था। एक आंगि ऋषि के पुत्र शृङ्गीऋषि ने राजा परीक्षित को शाप दिया इस पर आङ्गिऋषि ने अपने पुत्र से कहा कि तुम ऐसे क्षेत्र में जाकर निवास करो जहाँ तुम्हारे सींग गिर जाय। शृङ्गीऋषि सब बड़े बड़े स्थानों में घूम आये किन्तु उनके सींग इसी स्थान में आने पर गिरे। इस लिये शृङ्गीऋषि ने यहीं निवास करना शुरू किया और सम्पूर्ण प्रयत्न से भगवान रामचन्द्र के चरण कमलों में चित्त लगाया इस लिये इस स्थान का नाम शृङ्गीरामपुर पड़ा।

खुदागंज

फ़र्रुखाबाद ज़िले में यह ग्राम काली नदी के बायें तट पर स्थित है। इसका महत्व काली नदी पार करने के स्थान पर होने से था। कानपुर से फ़र्रुखाबाद और फिर वहां से रुहेलखण्ड को जो बहुत अधिक माल जाता है उसे उतारने के लिये यहाँ की बड़ी सरायँ अच्छी जगह पर है। किन्तु अब खुदागंज बी० बी० सी० आई० आर० की कानपुर से अचनेरा जाने वाली शाखा पर स्टेशन है। जिससे सड़क का व्यापार हलका पड़ गया है।

कन्नौज

फ़र्रुखाबाद ज़िले में यह गंगा के दाहिने तट पर एक पुराने कगार पर स्थित है जिसके निकट पहिले गंगाजी बहती थीं किन्तु अब धारा कोई चार मील पूर्व है। इसके पास ही गंगा में रामगंगा मिलती है। पुराने समय में यह एक बड़े राज्य की राजधानी था। इस समय वहाँ पर खँडहर हैं। इत्र का व्यापार यहां खूब बढ़ रहा है और उसकी खपत योरुप, एशिया, अफ्रीका आदि समस्त पृथ्वीतल पर है।

दाईपुर

यह ग्राम फ़र्रुखाबाद ज़िले के धुर दक्षिण पश्चिम में दाहिने तट के एक कगार पर स्थित है। यहां से हरदोई ज़िले को असबाब और यात्रीगण लेकर नाव जाती है।

बिलग्राम

यह नगर हरदोई ज़िले में गंगा के एक पुराने और ऊँचे बायें तट पर स्थित है। यहां पर कुछ व्यापार भी होता है जो मुख्यतया माधोगंज और हरदोई से है। बड़ी और छोटी नामक दो पुरानी बाज़ारें नाज़िम हाकिम मेंहदी अली खां ने बनवाई थीं। दो नये बाज़ार भी बने हैं। यहाँ के उद्योग कुछ विशेष महत्व के नहीं हैं। कुछ अच्छी डिज़ाइन की लाख की पालिश किये हुये मिट्टी के बर्तन बनते हैं। अमृतबान और घन मुख्य हैं। उनके रंग हरे, पीले और चांदी के पत्ती वाले होते हैं। नक्काशी किये हुये दरवाज़े और अन्य वस्तुयें भी बनती हैं। और भी बहुत सी लकड़ी की वस्तुयें जैसे खड़ाऊँ जिनका मूल्य चार आने से दो दो रुपये तक होता है बनती हैं। अन्य व्यवसायों में चमड़े के देशी चाल के जूते, पीतल के कलमदान और पानदान बनते हैं।

बिठूर

यह कानपुर से छै कोस पर गंगा के किनारे ही बसा हुआ है। यह स्थान उजड़ा हुआ सा प्रतीत होता है, फिर भी लगभग १५०० घर होंगे। बाज़ार रोज़ लगता है। कार्तिकी को बड़ा मेला लगता है। वैसे तो यात्री सदा आते जाते हैं। यहां के मुख्य स्थान बालमीक आश्रम, ब्रह्मावर्त खूंती, सीता कुण्ड, सीता रसोई, स्वामी आत्मानन्द का मन्दिर (इसमें यात्रियों के ठहरने की जगह भी है) और रामचन्द्र जी का मन्दिर है। यहाँ बहुत से पक्के घाट बने हुये हैं, किन्तु महराज घाट, लक्ष्मण घाट और ब्रह्मावर्त घाट मुख्य हैं। यहाँ के निवासी बतलाते हैं कि गंगा जी पहले परियर के उस पार बहती थी, किन्तु अब उस स्थान और बिठूर के बीच में बहने लगी हैं। बिठूर में ही अन्तिम पेशवा नज़रबन्द किया गया था।

कानपुर शहर

यहाँ के घाट जाजमऊ से शुरू होते हैं। बंगालीघाट, कोयला घाट, सिकन्दर घाट, गोला घाट, भगवतदास घाट, गुप्तार घाट, आनन्देश्वर घाट, सरसइया घाट पक्के बने हैं। इन सब पर मन्दिर बने हैं। अन्य गुड़िया घाट, गिरधर घाट, कालीघटिया या लट्ठा घाट, रामेश्वर घाट, जागेश्वर घाट, भैरों घाट, तिवारी घाट हैं।

कानपुर में मन्दिर तो सैकड़ों हैं किन्तु पांच खास तौर से प्रसिद्ध हैं—कांच मन्दिर, दौलतराय का नया मन्दिर,

प्रागनारायण का मन्दिर, कैलाशनाथ का मन्दिर, जुग्गीलाल कमलापति का मन्दिर।

जागेश्वर घाट पर आज कल पानी नहीं है, वर्षा में गंगा का पानी यहाँ तक आ जाता है। यहाँ पर एक मल्लाह का बनवाया हुआ शिवजी का मन्दिर है। सावन में हर सोमवार को यहां मेला लगता है। परमट घाट पर श्री आनन्देश्वर महादेव का अत्यन्त विशाल तथा सुन्दर शिवाला है।

नागापुर

पहिले यहां लगभग सौ से अधिक घर रहे। तीस बत्तीस वर्ष हुये बाढ़ से यहां का गांव बह गया। अब केवल पांच घर ब्राह्मणों के हैं। कार्तिकी का मेला लगता है।

यह स्थान एक छोटी सी पहाड़ी पर स्थित है। यहां का कगारा विचित्र रूप से सीधा खड़ा है। यहां पर काशी बनने की उम्मेद थी। कौये के हाड़ डालने से नागा हो गया। तब से इसका नाम ही नागापुर पड़ गया है। एक मील तक जमीन अच्छी नहीं है। एक दो कोस तक जंगल ही जंगल है। लकड़ी और असबाब लाद कर नावें यहां से कानपुर को जाती हैं।

शिवराजपुर

कार्तिकी अमावस्य, दशहरा, सावन के उत्सवों पर, बसन्त में, होली पर, मन्दिरों में बड़े धूम धाम से उत्सव होता है। दूर दूर से लोग आते हैं। सब मन्दिर सौ डेढ़ सौ हैं, किन्तु मूर्तियां करीब तीस में ही हैं। गंगेश्वर, सिद्धेश्वर, कपिलेश्वर, श्रंगढेश्वर, पंचवटेश्वर, मुंडेपुर, दुधियादेवी, सुगनेसुर, कालिका देवी, महादेव जी का बड़े स्थान हैं। श्री ठाकुर रसिकबिहारी जी का सबसे प्रसिद्ध मन्दिर है। इसके बाद गिरधरगोपाल के मन्दिर का नाम आता है, जिन्हें मीराबाई लाई थीं। अन्य मन्दिर कन्खरेश्वर, वरखंडेश्वर और तनेश्वर के हैं।

घाट भी यहां बहुत से बने हुये हैं। इनमें से राजघाट दखिखनी घाट, गिरधर घाट, बनियनघाट, मथुरिया घाट, रघुघाट, और पतुरियन घाट प्रसिद्ध हैं।

धार बदलकर अब पक्के घाटों से दूर हो गई है। बारह चौदह वर्ष हुये जब जोर का पानी बढ़ा था उसमें बहुत नुकसान हुआ।

चंडिकनखेरा

यहां चन्द्रिका देवी का मन्दिर है। इसमें एक सरकारी मौजा लगा हुआ है। यह मन्दिर बक्सर के क्षत्रियों का बनवाया हुआ बहुत पुराना है। मारकंडे स्थान से जब दुर्गा जी निकाली गईं, उसी समय का यह स्थान है। मुधुकपट कानों से उत्पन्न हुआ। चंडमुंड, रक्तवीर सुभास, बकासुर यह सब दैत्य यहां पर हुये हैं। मेघाजी, मकासुर, धुनलोचन, इसी स्थान पर हुये। चंडिकादेवी अम्बिकादेवी की बहन हैं।

घाट यहां पर पक्का बना हुआ है। हर सोमवार और शुक्रवार को यहाँ मेला लगता है। इस गांव में गंगा जी का मन्दिर है।

आदमपुर

यहां माघी, गंगा दशहरा, भदई और कार्तिकी को मेला लगता है। यहां घाट पक्का बना हुआ है और रामजी का एक मन्दिर है जो स्वामी मुकुन्दाचार्य राजगुरू रीवां का बनाया हुआ है। इस मन्दिर के साथ सवा लाख का इलाका लगा हुआ है। इस जगह के मन्दिर का नाम ब्रह्मशिला है। कहा जाता है कि यहां ब्रह्माजी ने यज्ञ किया था। उसके बाद यहां पर एक ब्रह्म राक्षस रहता था। स्वामी मकुन्दाचार्य जी (जो कि बद्रीनाथ में निवास करते थे) ने यहाँ आकर इसको मुक्ति दी। इन स्वामी जी रीवां नरेश राजा रघुराज सिंह को एक भयानक रोग से बचाया था। तभी आप राजगुरू हो गये। और इस स्थान पर एक मन्दिर राजा साहब की सहायता से स्थापित कराया। उसमें राम, लक्ष्मण, सीता, भरत, शत्रुघ्न की मूर्तियां स्थापित कीं। सामने एक हनुमान जी का मन्दिर है। यहां पर नित्य पूजा दोनों समय होती है।

असनी

अश्वनीकुमार ऋषि की तपोभूमि है। धनुष विद्या का प्रधान केन्द्र है। बड़े बड़े प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति आज भी मौजूद हैं। हरिनाथ इत्यादि बड़े बड़े कवि यहाँ हो गये हैं। यहां से दूध के लड्डू बहुत विख्यात हैं। दीपावली उत्सव बड़े धूम धाम से मनाया जाता है। गूजर घाट है।

मेला भादों में पूर्णमासी को, चैत्र शुक्ल नौमी, माघी अमावस्या और फाल्गुन में शिवरात्री को लगता है। मन्दिर यहां ६० हैं। ५० शिवजी के और दस देवी जी के।

डलमऊ

यह एक अति प्राचीन बस्ती है। इसकी गणना क्षेत्रों में थी, जैसा कि निम्नलिखित दोहे से ज्ञात होता है:—

दालिभ ऋषि की दलमऊ, कि गंगा कूल निवास।
तहाँ दास लालन बसैं, कर अकास की आस॥

यह महात्मा अकबर के समकालीन थे। अकबर से इनका साक्षात भी हुआ है। इनका स्थापित किया हुआ भगवान-

शेष मन्दिर अब भी डलमऊ के हिन्दुओं को बधाई देता हुआ बना है।

चन्द ऐतिहासिक खंडहरों के आधार पर यहां के इतिहास के बाबत यह कहा जा सकता है कि यह गूजरों का इलाका था। आल्हा-ऊदल जब महोबा से रुष्ट होकर कन्नौज के राठौर राजा जयचन्द के यहां रहते थे तब कन्नौज के कुंवर राना लाखन ने इसे विजय कर कई वर्ष की बाकी वसूल की। इसका प्रमाण चौरासी मुहल्ले के ऊपर स्थित एक टीले से मिलता है। यह टीला आल्हा ऊदल के नाम से सरकारी कागजात में पाया जाता है। लेकिन लोग आम तौर से इसे दहचन्दी या जैचन्दी के नाम से पुकारते हैं। और मुसलमान टीला शाह भीखा के नाम से याद करते हैं।

इसके बाद इसका वर्णन अकबर के समय में आता है। जिस समय मालिक शर्की इब्न जलाल कुरैशी नवाब मानिकपुर ने मुगल सम्राट की अनुमति से यहाँ चढ़ाई की. उस समय यहां का राज दलपति और नलपति नामक दो राजपूत राजाओं के हाथ में था। सात बार मुसलमान हारे फिर एक बार होली के अवसर पर धोखे में धावा किया। जिसमें राजपूत हार गये। इस युद्ध में नवाब की सेना का अधिनायक घोड़े सहित शहीद हुआ। जिसकी कब्र आज दिन भी किले के नीचे घोड़े शहीद के नाम से प्रसिद्ध है। शर्कीशाह मारा गया जिसका मजार बना हुआ है। दलपत और नलपत डलमऊ से ढाई मील दूर सुजांपुर में काम आये। जहाँ आज भी उनकी शिर-विहीन पत्थर की प्रतिमायें बनी हुई हैं। भादों मास में प्रति सोमवार और शुक्रवार को मेला लगता है। उनकी पूजा होती है और उन पर कंकड़ चढ़ाये जाते हैं। आज तक होली पर उनका सूतक मानते हैं और तीन दिन बाद रंग वगैरह खेलते हैं। यहाँ न राजा शेष रहे न नवाब। अंग्रेजों में इसका राजत सेमरपट्टा राज्य को दिया गया। उस वंश के अस्त हो जाने पर शिवगढ़ाधीश राजत्व में आया।

यह ई० आई० आर० की रायबरेली शाखा पर स्टेशन है। इतवार, सोमवार, गुरुवार और शुक्र को यहां बाजार लगता है। यहां पर बड़े-बड़े वैयाकर्णी, वेदान्ती, ज्योतिषी वैद्य, हकीम तथा लट्ठबंद पहलवान मौजूद हैं। इसके उत्तर-पूर्व में खंडेरी नाला बरहम से निकल कर गंगा में मिला है।

कुटीला या कोहरा

यहां की बस्ती बड़ी है। आबादी करीब दो ढाई सौ घर होंगे। भादों कार्तिक और माघ में यहां मेले लगते हैं। घाट के पास गांव में एक छोटा शिवाला है। यहां का घाट कच्चा है। किन्तु उस पर दो तीन नावें हमेशा मौजूद रहती हैं। घाट कच्चा होने पर भी सुन्दर प्रतीत होता है। क्योंकि किनारे से इन गाँव की छटा दिखाई पड़ती है। यहाँ पर दो ध्वंस किलों के आसार पाये जाते हैं। जिनमें से एक को कनौज के राजा जयचन्द ने बनवाया था। दूसरे किले के बानी का कुछ पता नहीं। सुना जाता है कि वह किसी अफ़गान ने बनवाया था।

कुंदन पट्टी

यहाँ चिन्तामणि महाजन का बनवाया हुआ एक तीन पीढ़ी का प्राचीन शिवाला अब भी बना हुआ है। पुजारी अब भी चिन्तामणि की सन्तान की ओर से रक्खा जाता है। यहां शिवरात्री को अधिक मेला लगता है।

अजूरा

यहाँ केवल आठ दस मकान मल्लाहों के हैं। यहां के मनुष्य अधिकतर मछली मारकर गुजर करते हैं। यह लोग गंगा जी में इस पार से उस पार तक जाल लगा देते ह और खूब मछली का शिकार करते हैं।

यहाँ के दृश्य की विशेषता यह है कि यहाँ पर गंगा जी के किनारे पर कंकड़ के ऊँचे टीले का कगार है। और गंगा जो इस गांव के निकट ही एक समकोण बनाती हुई मुड़ती हैं।

कालाकांकर

गंगा जी के जो मेले लगते हैं। उन सब पर यहां भी खूब मेला लगता है। क्योंकि यहां पर घाट पक्के बने हुये हैं, और उन पर तीन चार सुन्दर मन्दिर भी हैं। राजा साहेब की कोठी बिलकुल जल के निकट होने के कारण बहुत भली मालूम होती है। बाजार यहां पर काफी बड़ा है और एक नाज की मंडी भी है।

मानिकपुर

यह एक बड़ी बस्ती है। यहां पढ़े लिखे लोगों की संख्या भी विशेष मालूम होती है। गंगा जी के अन्य मेलों के समान यहां भी मेले लगते हैं। यहां पर ज्वालामुखी देवी का मन्दिर प्रसिद्ध है। इसमें हर बृहस्पतिवार को मामूली और असाढ़ बदी सप्तमी को विशेष मेला लगता है। घाट कच्चा है। यह कहा जाता है कि किसी जमाने में

मानिकपुर कड़ा और शहजादपुर के बीच में खूब तिजारत होती थी। और यह तिजारत गंगाजी पर बोट द्वारा होती थी। इस तिजारत को सुरक्षित रखने के लिये कड़े में ऐसे साहूकार रहते थे जो नावों के बेड़ों का बीमा किया करते थे। मानिकपुर के दक्षिण में राजघाट और उत्तर में शाहाबाद घाट मानिकपुर ही में शामिल हैं।

कड़ा

यहां लगभग २५० घर होंगे। मुसलमानों के घर ज़्यादा हैं। खजूर के वृक्ष और कछार के हरे भरे दृश्य के बीच में पुराने ज़माने के टूटे हुये लखौड़ी ईंट के मकान मिलते हैं। कार्तिकी, सीतला सप्तमी, चैत में अष्टमी, नौमी, दसमी और भादों में अमावस को और सावन में सप्तमी से दसमी तक और असाढ़ में अष्टमी को मेला लगता है। इसके पास १५ धर्मशालायें हैं। मन्दिर बहुत पुराना है। इसके अंदर एक कुंड है। पक्की सड़क घाट तक आई है।

अकबरपुर

यहां किनारे पर एक छोटा शिवाला है। घाट के ऊपर एक ओर अकबरपुर का टूटा फूटा किला बना हुआ है।

पहिले यह गुलजार था। तिजारत होती थी। पक्के लखौड़ी ईंट के मकान कुछ टूटे हुये और कुछ अच्छी हालत में अबतक मौजूद हैं। सड़क का पुल लखौड़ी ईंट का बना हुआ है। इसके आस पास में शोरा निकलता है।

शहजादपुर

यहां रामलीला क्वार सुदी दसमी से पूर्णिमा तक होती है। यहाँ हनूमान जी का एक अति प्राचीन मन्दिर है। मन्दिरों में खूब मेले लगते हैं। दसहरा पर और हर अमावस को मेला लगता है। नवरात में देवियों का मेला होता है।

पहिले यह एक अच्छा गांव था। अब मकान गिर गये हैं। ग्राम के कुओं से पानी खारी निकलता है जिससे सख्त तकलीफ है। नाले बहुत हैं। रास्ता खराब है।

बदनपुर

यहां चैत में रामनौमी और भादों में जन्म अष्टमी को कोई हजार दो हजार आदमी जुटते हैं। पांच मन्दिर हैं जिनमें एक बहुत पुराना और बड़ा है। पुराना मन्दिर हुबलाल महाजन का बनवाया हुआ है।

रामचौरा

कुरई यहाँ से एक कोस है। यहाँ श्रीरामचन्द्रजी गये थे और सीता जी ने तालू उठाकर रक्खा था। यहाँ लगभग ४० घर घाटियों के हैं। हर अमावस और पूर्णिमा को मेला लगता है। खास मेला कतकी को होता है, जिसमें ५० हज़ार आदमी जुटते हैं। यहां चरण पादुका का प्रसिद्ध मन्दिर है।

यहाँ पाँच घाट हैं। सीताकुंड, रामचौरा घाट, संध्या-मठ, अमौंडी कुंड। निषाद लोग एक घाट पक्का बना रहे हैं। श्रीरामचन्द्र जी ने यहीं पर फ़कीरी भेष धारण किया था। और यहीं से सुमंत्र को वापिस किया था।

उझनी

यहां तीन मन्दिर हैं। दो महादेव जी का और एक हनुमान जी का है। एक नरायनदास बनिया का बनवाया हुआ सौ वर्ष पुराना है। कतकी-दशहरा और भदई को मेला लगता है।

फतेहपुर

यहां कतकी और गंगा दशहरा को लगभग एक सहस्र मनुष्य इकट्ठा होते हैं। शंकरजी, राधाकृष्ण और हनुमान जी के ६ मन्दिर हैं।

एक सुन्दर कच्चा घाट है। किनारे पर एक पंडे की चौकी है। और दोनों ओर दो ऊंचे टीलों पर बहुत प्राचीन मन्दिर हैं। सारे गांव में तमाम टीले ही टीले हैं जिनका दृश्य अच्छा है।

यहां पर कई जगह गहरी पक्की ईंटों की नींव पाई जाती है। जिससे मालूम होता है कि बहुत प्राचीन काल में यहां पर कोई शहर आबाद था।

मऊसरइयाँ

यहां निरालेश्वर का मन्दिर है। इसमें श्रीरामचन्द्र, लक्ष्मण और सीताजी की मूर्तियां हैं। इसी मन्दिर में तीन प्राचीन मन्दिर नवाबी ज़माने के हैं।

बक्सर

यह ग्राम गंगा के बायें तट पर उन्नाव ज़िले के धुर दक्षिण में स्थित है। डौंडीखेरा से यह तीन मील पड़ता है। इसका असली नाम बक्साराम था। इस संस्कृत शब्द का अर्थ बकस का स्थान है। बकस एक राक्षस था जिसने इस स्थान की नींव डाली थी और माहेश्वरनाथ महादेव का मन्दिर बनवाया था। इस राक्षस का वध श्री

कृष्णचन्द्र के हाथों हुआ था। श्री चन्द्रिका देवी का पक्का मन्दिर भी गंगा के किनारे स्थित है। कार्तिक में इस स्थान पर मेला लगता है। लगभग एक लाख यात्री इसमें भाग लेते हैं। यहां पर गंगा जी बहुत पवित्र मानी जाती हैं। क्योंकि उनका बहाव कुछ उत्तर की ओर है। अन्य मेले आश्विन और चैत की अष्टमी और फाल्गुन की शिवरात्रि को लगते हैं।

यह प्राचीन तान्त्रिक क्षेत्र है। पहिले के समय में यहां के ओझा लोग बड़े विद्वान तंत्रकुशल और धनाढ्य होते थे। देवी इन्हें सिद्ध रहती थी। बड़े बड़े मारन, मोहन, उच्चाटन तथा अन्य प्रकार के सांसारिक कार्य यहाँ होते थे। भाट और ब्रह्मभट्ट मन्दिर के पुरोहित और आचार्य गिने जाते थे। ओझों की बस्ती अब भी है।

परियर

उन्नाव जिले का एक छोटा सा नगर है और गंगा के बायें तट पर स्थित है। यह दो सड़कों के संगम पर स्थित है जो इसका सम्बन्ध सफीपुर और रसूलाबाद से रखती है। ग्राम के निकट ही महुआ झील नामक एक सुन्दर जलाशय है। सप्ताह में दो बार बाज़ार लगता है। जिसमें कपड़े की बिक्री अधिक होती है। परियर अपने मेले के लिये बहुत प्रसिद्ध है। जो कार्तिक की पूर्णिमा को होता है और जिसमें लगभग एक लाख मनुष्य भाग लेते हैं। कहते हैं जब भगवान रामचन्द्रजी ने अश्वमेधयज्ञ का अनुष्ठान किया तो उसके लिये श्यामवर्ण घोड़ा छोड़ा। इसका आशय यह था कि जो कोई उसे पकड़ेगा वह युद्ध करेगा। लव और कुश ने उसे परियर के जंगल में पकड़ लिया, जिससे एक बड़ा युद्ध हुआ। परियर के एक मन्दिर में अब भी बहुत से तीर रक्खे हुये हैं, जो कहते हैं युद्ध में दोनों ओर से काम में लाये गये थे। कभी कभी ये नदी तट में भी मिल जाते हैं। यहां बालकेश्वर नाथ महादेव का मन्दिर है, जिसे लव और कुश ने गंगा के किनारे बनवाया था। और एक जानकीजी का भी मन्दिर है।

कन्तति

टप्पा छियानवे तहसील मिर्ज़ापुर में उजला संगम पर दायें तट पर मिर्ज़ापुर के निकट ही स्थित है। इसका अस्तित्व अलग नहीं है, क्योंकि यह मिर्ज़ापुर म्युनिसिपैल्टी में शामिल है। यह एक अति ऐतिहासिक महत्त्व का स्थान है। इसमें एक प्राचीन क़िले के भग्नावशेष मिलते हैं, जो भाट राज्य की याद दिलाते हैं। किन्तु इसके अब केवल कच्चे अंश खाई और कुछ पक्के खंडहर ही शेष हैं। एक प्राचीन मसजिद भी है जो क़िले से अवश्य ही बहुत पीछे की है।

गौरा

गौरा, टप्पा छियानवे तहसील व ज़िला मिर्ज़ापुर में गंगा के दाहिने तट पर एक कृषिप्रधान ग्राम है। यह मिर्ज़ापुर से १६ मील पश्चिम पड़ता है। जनसंख्या ढाई हज़ार से ऊपर है। गहरवार राजपूत यहां के मुख्य हिन्दू निवासी हैं। सन् १८५७ ई० में बहुत से नदी सम्बन्धी डाके मारे गये थे। कर्नल पाट ने इस ग्राम का नाश कर दिया।

विन्ध्याचल

टप्पा छियानवे तहसील मिर्ज़ापुर में विंध्याचल एक प्रसिद्ध तीर्थ है। मिर्ज़ापुर यहां से केवल सात मील रह जाता है। यह उससे एक पक्की सड़क द्वारा सम्बन्धित भी है।

यहां डाकखाना, थाना, कांजीघर, अस्पताल और स्कूल सब कुछ है। किन्तु यह मिर्ज़ापुर म्युनिसिपैल्टी में सम्मिलित है। यहां श्री विन्ध्येश्वरी देवी का मन्दिर है, जिनके दर्शन के लिये प्रतिवर्ष सहस्रों यात्री समस्त भारत से मुख्यतः मध्य और दक्षिण से आते हैं। यह चौकोर मन्दिर पत्थर का बना हुआ है। इसके चारों ओर बराम्दा और पांच सीढ़ी का ज़ीना भी है। खम्भे साधारण कारीगरी के हैं। देवी की मूर्ति एक अन्दर के कमरे में है जिसकी दीवालें मामूली पत्थरों की हैं। मूर्ति का शिर-भाग काले पत्थर का है, आंखें बड़ी बड़ी हैं और उनके भीतरी भाग चमकदार चांदी के हैं। पैर काले चूहे पर स्थित हैं। यह सम्पूर्ण भवन अवश्य ही बहुत प्राचीनकाल का होगा। विशेष कर लोगों को देवी जी पर बहुत श्रद्धा थी। नदी की ओर डीवी घाट है जो एक किले की भांति बना हुआ है। लगभग अस्सी सीढ़ियां हैं। यहाँ से मन्दिर आध मील है।

पश्चिम की ओर एक किले के भग्नावशेष हैं। जहाँ पर पुरानी वस्तुयें काफी परिमाण में पाई गई हैं। पुराण प्रसिद्ध विन्ध्याचल, पम्पापुर नामक प्राचीन नगर का एक भाग था जिसके ये खंडहर हैं। पंपापुर एक प्राचीन भाट नगर था जिसका विस्तार मीलों था। कहते हैं यहां एक सौ पचास मन्दिर थे जिन सबको औरङ्गज़ेब ने गिरवा दिया।

मिर्जापुर

गंगा जी के दक्षिणी तट पर स्थित है। प्रयाग से रेल द्वारा यह ५५ मील है। बनारस केवल छियालीस मील रह जाता है। यहां से सड़कें सब ओर गई हैं। ई० आई० आर० पर स्टेशन है। गंगा के उस पार नद घाट बी० एन० डबल्यू० आर० पर स्टेशन है। जनसंख्या १९०१ में लगभग ८०,००० थी। इस हिसाब से यह संयुक्त-प्रान्त का आठवां नगर है। लोगों के मुख्य व्यवसाय, खाने पीने की वस्तुयें, धातुयें, कीमती पत्थर, मादक द्रव्य, गोंद, मसाले, लाख और ऐसी ही अन्य वस्तुओं की तय्यारी तथा कपड़े बुनने का रोजगार है।

यद्यपि यह नगर अब पहिले जैसा नहीं रहा किन्तु फिर भी काफी अच्छा नगर है। उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में यह व्यापार की एक बड़ी मण्डी थी। यहाँ का व्यापार मुख्यतया बनारस के सन्यासियों के हाथ में था। मुख्य वस्तु रुई थी, जो मध्य भारत से आती थी। भाप से चलने वाले धुआँकशों के प्रचार से इसका महत्व और भी बढ़ा, क्योंकि बड़े स्टीमर मिर्जापुर ही तक आ सकते थे। गंगा और यमुना के तटों की उपज छोटी छोटी नावों द्वारा यहाँ आती थी और यहाँ से स्टीमरों में लद कर कलकत्ते जाती थी। इसके बदले में चीनी, कपड़े और धातु के सामान नावें ले जाती थीं, किन्तु रेल खुल जाने से इसकी बराबर अवनति हो रही है।

यह नगर गंगा के एक बड़े मोड़ पर स्थित है। पृथ्वी का धरातल किनारे पर ऊँचा है और अन्दर की ओर नीचा होता गया है। नदी का तट ठोस और स्थायी हैं क्योंकि वह एक कंकड़ की सतह पर स्थित है। तट यद्यपि दर्शनीय और सुन्दर है, किन्तु आलीशान नहीं है। यहाँ यद्यपि लगभग बीस घाट हैं किन्तु तीन चार को छोड़ कर सब छोटे और साधारण हैं। बहुतेरे तो नींव मजबूत न होने के कारण भग्नावस्था को प्राप्त हो रहे हैं। केवल वारी घाट, नीरघाट के मन्दिरों के समूह और पक्का घाट का विशाल रूप अवश्य ही इसको कीर्तिमान बनाये हुये हैं किन्तु सबसे दर्शनीय कोट नामक स्थान है जिस के बड़े बड़े खाली गोदामों को देखकर वे दिवस याद आते हैं जब वे ऊपर तक ठसाठस मध्य भारत की रुई से भरे रहते थे। नगर में एक उत्तम और विस्तृत सराय भी है।

नरैनी

यह एक बड़ा खेतिहर ग्राम है। तहसील मिर्जापुर, तालुका मँझवा में मिर्जापुर से नौ मील उत्तर-पश्चिम गंगा के बायें तट पर उसी स्थान पर स्थित है जहां मिर्जापुर से बनारस जाने वाली सड़क गंगा को पार करती है। ग्राम में एक लोअर प्राइमरी स्कूल है। यहां के दर्शनीय स्थानों में एक प्रस्तर निर्मित विशाल मन्दिर और एक सती स्मारक है। जनसंख्या लगभग दो सहस्र के है। हिन्दुओं में भुईंहार प्रधान जाति है।

छोटा मिर्जापुर

यह एक छोटा कृषिप्रधान नगर है। गंगा के दायें तट पर बनारस की सीमा के निकट ही स्थित है। यह मिर्ज़ापुर से ३१ मील और चुनार से दस मील उत्तर पश्चिम में स्थित है। यहाँ कच्ची सड़क टिड़वा और चकिया को जाती है जो अहरौरा से अहरौ रोड स्टेशन जाने वाली पक्की सड़क से मिल जाती है। पहिले यहां बहुत व्यापार था किन्तु अब नहीं है यद्यपि बाज़ार रोज़ लगती है। पार जाने के लिये यहाँ नाव मिलती है। यहाँ थाना, कांजीवर, डाकखाना, लोअर प्राइमरी स्कूल आदि सब हैं। यह स्थान परगना भुइली तहसील मिर्ज़ापुर ज़िला चुनार में है।

लम्बुइया संगम

इसका संगम गंगा से लम्बुई नामक ग्राम पर होता है। इसी कारण इसका नाम लम्बुइया पड़ गया है। वैसे इसे महजो भी कहते हैं। यह महायच के दक्षिणी भूभाग से निकल कर गाजीपुर और बनारस के बीच की सीमा बनाती ज़मनिया की सीमा पर पहुँच कर उत्तर की ओर मुड़ती है। यहां ज़मनिया को महायच से पृथक करती हुई गंगा में मिल जाती है।

चुनार

यह सुप्रसिद्ध दुर्ग और नगर गंगा के दाहिने तट पर मिर्ज़ापुर से २१ मील और बनारस से २६ मील पर स्थित है। यह परगना हवेली चुनार, तहसील चुनार, जिला मिर्ज़ापुर में है। नगर से उत्तर पश्चिम में दो मील पर ई० आई० आर० रेल का स्टेशन भी है। यहां से बनारस, अहरौरा, राजगढ़, मिर्जापुर और कछवा को कच्ची सड़कें जाती हैं। गंगा नाव द्वारा भी पार की जाती है। लाल दरवाजे से किले तक पक्की सड़क गई है। जिसके दोनों ओर एक अच्छा सा नगर बसा हुआ है। चौक में दुकानों के मुहाने पत्थर के और अच्छे बने हुये हैं। लाल दरवाजे के बाहर एक उच्च स्थान पर एक पुरानी सराय है। मिगम

मुअज्जीन मसजिद में एक सन्दूक में हसन और हुसेन के उतारे हुये कपड़े फर्रुखसियर बादशाह के जमाने में कर्बला से लाकर रक्खे गये हैं। भैरव जी की मूर्ति जो पहिले किले में थी अब डाकघर के पास एक भवन में स्थापित है। गंगेश्वरनाथ महादेव की प्राचीन मूर्ति दर्शनीय है।

यहाँ तहसील, अस्पताल, अंग्रेजों का अस्पताल, प्रथम श्रेणी का थाना, डाकघर, तारघर, स्कूल है। जलवायु यद्यपि उष्ण है, किन्तु बहुत ही स्वास्थ्य वर्धक है। यहाँ के मुख्य उद्योग धन्धे पत्थर के काम और चमकदार लाल पालिश की हुई मिट्टी की वस्तुयें हैं।

नदी के तट पर स्थित दुर्ग बड़ा ही शोभायमान प्रतीत होता है। दुर्ग की सब से बड़ी विशेषता भर्तृनाथ, (जो उज्जयिनी के राजा विक्रम के भाई थे) का स्थान है। पर इस स्थान में केवल एक काला पत्थर ही देखने में आता है। हिन्दुओं का विश्वास है कि ईश्वर स्वयं ही नौ घंटे इस पत्थर पर बैठता है किन्तु किसी को दिखलाई नहीं पड़ता है। बाकी तीन घंटे के लिये वह बनारस चला जाता है। इसलिये यह कहा जाता है कि चुनार के दुर्ग को शत्रु सिवाय छः से नौ बजे के अन्दर के और किसी समय नहीं जीत सकता है। इसी कारण से बनारस के राजा लोग अपने वंश के सब विवाह बराबर वाले महल में ही आकर करते हैं। किले में १३२ फीट गहरी बावली भी है जिसका व्यास २८ फीट है। इसमें कुयें के नीचे तक सीढ़ियां भी हैं। यहां बाल अपराधियों के लिये एक स्कूल भी है।

चुनार शब्द चरणाद्रि (चरण आद्रि) शब्द का अपभ्रंश है। कहते हैं द्वापर युग में हिमालय से कुमारी अन्तरीप जाते समय किसी दैत्य ने अपना पैर यहां रख दिया था जिसका चिन्ह यहां बन गया है।

शाह क़ासिम सुलेमानी की दरगाह अच्छी बनी हुई है। स्टेशन से दक्षिण-पश्चिम में एक कभी न सूखने वाला सोता है जिसे दुर्गाकुंड कहते हैं। नाले के उत्तर में कामाक्षा देवी का मन्दिर है। उसी के निकट एक छोटा सा बिना नाम वाला मन्दिर है। पत्थरों पर शेर, हाथी, घोड़ों की मूर्तियाँ खिंची हुई हैं। पीछे की दीवाल गुप्तकाल से लेकर आगे के अनेक समयों के लेखों से रंगी हुई सी है। किन्तु उन शिलालेखों में कोई महत्त्व की बात नहीं है। इसी तरह के लेख दुर्गा खोह नामक कन्दरा में भी हैं। यहां दुर्गापूजा के अवसर पर नौमी को एक वार्षिक मेला भी लगता है।

राल्हूपुर

बनारस ज़िले में यह ग्राम गंगा के दाहिने तट पर, बनारस और रामनगर से चुनार जाने वाली पक्की सड़क पर डफरिन ब्रिज (पुल) से छः मील दक्षिण में स्थित है। यह रामनगर से मिला हुआ है और रामनगर की उन्नति से इसका पुराना महत्त्व जाता रहा।

रामनगर

बनारस के अतिरिक्त इस ज़िले में ही एक नगर है। यह गंगा के दाहिने तट पर स्थित है। बनारस के दक्षिण भाग से यह दिखलाई पड़ता है। यहां या तो नगवा से नाव द्वारा आते हैं या जलीलपुर के पास ग्रांडट्रंक रोड से एक पक्की सड़क द्वारा सम्बन्धित है।

पहिले यह एक साधारण सा स्थान था किन्तु जब राजा बलवन्त सिंह ने इसे अपनी राजधानी बनाया तब से इसका महत्त्व बढ़ने लगा। उसने किला बनवाया और नगर की नींव डाली। इसका रूप दो चौड़ी मध्यवर्ती सड़कें निर्धारित करती हैं। एक किले से पश्चिम की ओर जाती है और बनारस से आने वाली सड़क से समकोण बनाती है। इस स्थान के बाद ही एक तीन दर का फाटक है जिसे त्रिपोलिया कहते हैं। यह फाटक इस स्थान को शानदार बना देता है। यहां की सड़कों के दोनों ओर पक्के मकान हैं। दोनों सड़कों के दोनों ओर की दुकानें पक्की बनी हुई हैं। लोगों को सड़कों की ओर मकान बनाने की आज्ञा नहीं है। जिससे यह स्थान खूब खुला हुआ और हवादार है।

बलुआ

एक छोटा किन्तु अच्छा सा ग्राम गङ्गा के दायें तट पर बनारस से २४ मील उत्तर पश्चिम में स्थित है। यह बनारस से धानापुर जाने वाली कच्ची सड़क पर है। यहां से गंगा नाव द्वारा पार की जाती है। बलुआ में थाना, डाकघर, कांजीघर और लोअर प्राइमरी स्कूल है।

यहां एक महादेव जी का मन्दिर है। और यह स्थान बहुत पवित्र माना जाता है। यह कंकड़ की एक ऊँची भीतपर स्थित है। जहाँ से गंगा पश्चिम की ओर घूमती है उस मोड़ को पश्चिम वाहिनी कहते हैं। यह यात्रा का स्थान है और माघ के महीने में यहाँ स्नान का बड़ा मेला लगता है।

कहते हैं रामायण बनाने वाले आदि कवि वाल्मीक यहीं रहते थे।

टाँडा कलाँ

यह गंगा के उच्च दक्षिणी तट पर स्थित बनारस से १० मील है। यहां से ग़ाज़ीपुर तक नाव चलती है। आम के बाग़ यहां खूब हैं। यह सूरी अफ़गानों की जागीर थी। जिस वंश में सुप्रसिद्ध शेरशाह बादशाह ने जन्म लिया था।

कैथी

यह एक बड़ा कृषिप्रधान ग्राम है और गंगा के बांये तट पर स्थित है। उत्तर में ग्राम का विस्तार मुख्य स्थान से गुमती संगम तक है। जहाँ एक नीची उपजाऊ घाटी है, जिसमें बाढ़ के समय दोनों नदियों का जल भर जाता है। इससे यह दो भागों में विभाजित है। एक का नाम है कैथी गंगाबरार और दूसरे का कैथी गुमती बरार। यहाँ कई मन्दिर हैं। जिनमें मार्कण्डेय महादेव का मन्दिर दर्शनीय है। शिवरात्री पर यहाँ बड़ा मेला लगता है। गंगा पार करने के लिये नाव भी रहती है।

सैदपुर

ग़ाज़ीपुर में यह गंगा के उत्तर तट पर स्थित है। गंगा का तट यहाँ कंकड़ का है, इसलिये यह युगों से नदी के वेग को रोकने में समर्थ रहा है। सैदपुर अवश्य ही एक प्राचीन है, किन्तु अभी तक यहां किसी प्राचीन नगर का निर्धारण नहीं हुआ है। यद्यपि यह कहा जाता है कि ह्वान् सांग ने जो चेंचू नगर का वर्णन किया है वह यही चेंचू है। नगर और उसके आसपास बौद्ध और हिन्दू काल की अनेक वस्तुयें पाई गई हैं। यह साफ है कि सैदपुर मुसलमानों के इस देश में आने से पहिले का है। सम्भव है कि इसकी नींव गुप्तकाल में पड़ी हो।

ज़मनियाँ

ग़ाज़ीपुर ज़िले में यह एक लम्बा सा नगर है जो गंगा के उच्च दक्षिण तट पर स्थित हैं। इसका नाम अकबर के काल में जौनपुर के हाकिम अली कुली ख़ाँ खानेजमाँ के नाम पर है, किन्तु अवश्य ही इसके स्थान पर एक अति प्राचीन नगर रहा होगा।

किंवदन्ती यह है कि यहाँ जमदग्नि नामक ऋषि रहते थे, जिनके नाम पर इसका नाम जमदग्नि पड़ा। जमदग्नि यहाँ के राजा मदन की कन्या से विवाहे थे। राजा मदन स्वयं गाधिपुर (ग़ाज़ीपुर) के राजा गाधि की कन्या से विवाहे थे। एक समय राजा मदन और उनकी स्त्री जमदग्नि ऋषि के यहां आये। ऋषि ने उनका कामधेनु गाय के कारण खूब स्वागत किया। ईर्ष्या के वशीभूत होकर राजा उस गाय को उठा ले गया, किन्तु ऋषि के पुत्र परशुराम उसे फिर जीत लाये। अपने पाप से बचने के लिये मदन ने एक महान यज्ञ किया, जिसका वर्णन एक ताम्रपत्र पर भी लिख दिया गया। पिछली शताब्दी में एक मुसलमान ने इसे पाया था, किन्तु तिवारी ब्राह्मण को इसके आधार पर, एक भूखंड दान में मिला है। इस झगड़े में वह ताम्रपत्र मनका तालाब या गंगा में फेंक दिया गया। यज्ञ के बाद राजा ने नगर के दो मील दक्षिण-पूर्व में एक मन्दिर मदनेश्वर का बनवाया और एक स्तम्भ भी स्थापित किया, जो लठिया या शाहपुर नामक ग्राम में अब भी है। उसका विचार जमदग्निया में बनारस का एक प्रतिद्वन्दी स्थापित करने का था कि मूहूर्त प्रतिकूल निकला और कार्य छोड़ दिया गया। इसी से इसे मदन बनारस भी कहते हैं।

लठिया स्तम्भ उस टीले के पश्चिम में है जिसपर ईटें फैली हुई हैं, इसके चारों ओर पानी भरा है। यह एक गोल पालिश किया हुआ सा पत्थर है, जिसका व्यास साढ़े तीस इञ्च और ऊँचाई बीस फुट के लगभग है। यह ज़मीन में चार पत्थरों के सहारे स्थित है, जिसकी चौकी नींव के चारों ओर स्थित है। इसपर कुछ लिखा हुआ नहीं किन्तु भीतरी और पहाड़पर के उस स्तम्भ के समान है जो वहां से बनारस ले जाया गया है। इससे यह प्रकट होता है कि यह गुप्त समय का है। भीतरी स्तम्भ के समान यहां एक पुराना घंटाघरनुमा स्तम्भ भी है जिस पर आठ सिंहों का एक समूह बाहर की ओर मुँह किये हुये स्थित है। इसके ऊपर पहिले दो स्त्रियों के अर्धभ पीठ से पीठ मिलाये हुये एक कमल की पत्तियों के घेरे से निकलती हुई स्थित है। किन्तु अब यह पृथ्वी पर पड़ा है। जमनियों के बहुत से भवन यहां से ले जाई गई ईटों के बने हैं। इसी प्रकार का व्यवहार नगर के उत्तर भाग में स्थित एक अति प्राचीन पत्थरों के साथ भी, जिनपर खुदाई भी है, किया गया है जो यह टीले और निकट के बहुत से भवनों के चारों ओर पड़े हुये हैं।

गंगी संगम

यह जौनपुर के निकट से निकल कर दक्षिण-पश्चिम

की ओर बहती हुई जौनपुर और आज़मगढ़ की सीमा बनाती है। ग़ाज़ीपुर में इसमें पछुई नाम की धारा सोनियापुर में आकर मिलती है। फिर कुछ मील तक आज़मगढ़ की सीमा पर रहती है। पश्चात् बहरियाबाद और सैदपुर परगनों को पृथक करती हुई करन्दा और ग़ाज़ीपुर की सीमा बनाती है। फिर गंगा से मैनपुर में मिल जाती है।

तारीघाट

यह ग्राम ग़ाज़ीपुर के सामने गंगा के दाहिने किनारे पर स्थित है। यह ज़मनिया से दस मील है और उससे एक कच्ची सड़क द्वारा सम्बन्धित भी है। ई० आई० आर० की दिलदारनगर से आने वाली शाखा यहां समाप्त होती है। स्टेशन से स्टीमरों के ठहरने के घाट तक सड़क पक्की है।

ग़ाज़ीपुर

यह नगर गंगा के बायें तट पर स्थित है। यहां बी० एन० डबल्यू० आर० की औंरीहार से बलिया जाने वाली शाखा पर एक स्टेशन है। स्टेशन के पास ही बनारस, बलिया, आज़मगढ़ और गोरखपुर से आई हुई तीन पक्की सड़कें मिलती हैं।

इस स्थान का नाम राजा गाधि, गज अथवा गध के नाम पर गाधिपुर था। हिन्दू लोग इसका उच्चारण गाजिपुर करते हैं। जनरल कनिंघम का मत है कि पुराना नाम गजपतिपुर हो सकता है। जो चीनी शब्द चेचु का संस्कृत पर्यायवाची हो सकता है।

नदी के एक उच्च तट पर जहां नगर स्थित है बहुत सी पुरानी टूटी ईंटें और मिट्टी के बर्तन पड़े हैं। और वह टीला जिस पर पहिले अस्पताल था, अवश्य ही एक प्राचीन मिट्टी के किले का स्थल है। यहां बन्दोबस्त इस्तमरारी के जन्मदाता और भारत के प्राचीन गवर्नर जनरल लार्ड कार्नवालिस का मक़बरा है।

सम्पूर्णतया यह एक साधारण कोटि का स्थान है। जहां संकरी और घूमती हुई गलियों के दोनों ओर निम्न कोटि के गृह बने हुये हैं। मुख्य मुख्य भवन व्यापारिक भाग से अलग नदी तट पर स्थित हैं। नदी तट देखने में बड़ा सुन्दर प्रतीत होता है। यहां कई घाट पक्के बने हुये हैं, जिनमें मुख्य आमघाट है, जहां अफ़ीम का कारखाना है। अन्य कलेक्टर घाट, पक्का घाट, महसूल घाट, गोला घाट, चितनाथ घाट, नकटा घाट (जिसके निकट ही चश्मयेरहमत स्कूल है) खिरकी घाट और पुस्ता घाट हैं। यहां के धन्धों में कपड़ा बुनना और अतर बनाना मुख्य है। यहां अफ़ीम का कारख़ाना भी है।

तीरपुर

ग़ाज़ीपर ज़िले में बड़ा ग्राम और गंगा के उच्च उत्तर तट पर स्थित है। इसके सामने गंगापार बारा पड़ता है। कहते हैं कि यह सुप्रसिद्ध चेरू राजा टीकमदेव की राजधानी थी। जिसको किन्तार शाखा के भुईहारों ने गद्दी से उतारा था। भुईहार लोगों की यहां एक बड़ी रियासत थी, जो उनके हाथ से निकल गई। किन्तु अब भी उनमें से बहुतों की स्थिति अच्छी है। इस किंवदन्ती के अतिरिक्त टीकमदेव के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है। किन्तु पुराने कोट से समय समय पर सिक्के तथा अन्य वस्तुयें प्राप्त हुई हैं।

बारा

ग़ाज़ीपुर ज़िले में गंगा के दक्षिण उच्च तट पर स्थित है। यह अवश्य ही प्राचीन स्थान है और इसकी स्थिति बीरपुर के प्राचीन नगर से इसका सम्बन्ध ज़ाहिर करती है। इस ग्राम में एक बड़ा टीला है और लगभग एक मील पूर्व और भी बहुत से भग्नावशेष मिलते हैं। मुख्य सड़क पर इसके स्थित होने के कारण बारा का व्यापार परगने के अन्य बड़े ग्रामों से अधिक समुन्नत है।

बेसूसंगम

बेसू एक बड़ी सी नदी है। इसका उद्गम आज़मगढ़ की देवगांव तहसील के कुछ जलाशयों से है। यह कई कोस तक आज़मगढ़ और ग़ाज़ीपर की सीमा पर बहती है। फिर दक्षिण की ओर मुड़कर शादियाबाद और ग़ाज़ीपुर के परगनों में होती हुई डूंगरपुर पर गंगाजी से मिल जाती है किन्तु इसकी कुछ प्राचीन धारें भी हैं। एक शेरपुर के पास बहती है और दूसरी बलिया रोड के पास बहती हुई बीरपुर पर गंगा से बायें तट पर मिली है।

चौसा

यहां अफ़ग़ान सरदार शेरखां ने मुग़ल सम्राट् हुमायूं को परास्त किया था। हुमायूं ने तैर कर गंगा को पार करना चाहा, किन्तु बीच में डूबने लगा। उस समय एक राजभक्त भिश्ती ने मशक फुलाकर उसे गंगा पार करा दी। हुमायूं उसका बहुत कृतज्ञ हुआ और आधे दिन तक राज सिंहासन पर बैठने की आज्ञा प्रदान की। भिश्ती ने चमड़े का सिक्का जारी किया और अपने रिश्तेदारों को बहुमूल्य भेंट दी।

बक्सर

यह गंगा के उत्तर तट पर स्थित है। ई० आई०आर० का यहाँ एक स्टेशन और व्यापार की एक अच्छी मंडी भी है। कहते हैं बक्सर वेद की ऋचाओं के बहुत से रचयिताओं का निवासस्थल था। इससे इसका प्राचीन नाम वेदगर्भ था। एक अन्य स्थानीय किंवदन्ती के अनुसार इसका नाम गौरीशंकर के मन्दिर के निकट अघसर नामक सरोवर पर पड़ा है। समय बीतने पर यह अघसर नामक सरोवर का नाम बदल कर बघसर हो गया, जिसकी कथा इस प्रकार है :—वेदशिर नामक ऋषि दुर्वासा से ईर्ष्या मानने के कारण दुर्वासा को डरवाने के लिये व्याघ्ररूप धारण किया। दुर्वासा ने उसे व्याघ्र ही रहने का श्राप दिया। उसने अघसर में स्नान कर और गौरीशंकर की पूजा करके फिर अपने पूर्व रूप को प्राप्त किया। इस घटना की स्मृति में इस सरोवर का नाम व्याघ्र सर अथवा बघसर पड़ गया। बक्सर एक प्राचीन ब्राह्मण-स्थान है। इसके कुछ भागों के नाम जैसे रामेश्वर, परशुराम, विश्वामित्र का आसरा आदि प्राचीनता के द्योतक हैं, किन्तु इसका पुरातत्व सम्बन्धी दृष्टि बिन्दु से कुछ विशेष महत्व नहीं है। रामेश्वरनाथ महादेव का मन्दिर दर्शनीय है। अनेक स्थानों के यात्री इनके दर्शन के निमित्त आते हैं।

सन् १७६४ ई० में यहां अंग्रेजों और मीर कासिम (जिसकी सहायता के लिये अवध का नवाब वज़ीर शुजा-उद्दौला भी आया था) से युद्ध हुआ।

बक्सर का किला जो कि एक उच्च स्थान पर स्थित होने से गंगा की चौकसी रखता है, सदा से विशेष राज-नैतिक महत्व का स्थान रहा है।

सरजू संगम

बलिया ज़िले में गंगा की मुख्य सहायक नदी सरजू या टोंस है। सरजू नाम का उपयोग घाघरा के लिये भी विशेषकर अयोध्या में करते हैं। इससे इस सिद्धान्त का समर्थन होता है कि घाघरा किसी समय में इसी मार्ग से बही होगी। यह इस ज़िले की सीमा पर पहिले पहल भदाव परगना में प्रवेश करती है। फिर कुछ मील तक बलिया और ग़ाज़ीपुर के ज़िलों को पृथक करती है। प्रधानपुर के निकट यह कोपाचित पश्चिमी परगना में प्रवेश करती है। फिर दक्षिण पूर्व में बहती हुई कोपाचित पूर्वी में होती हुई बलिया परगना में बलिया नगर से तीन मील पश्चिम बनस्थान नामक स्थान पर गंगा से मिलती है।

बलिया

यह एक अच्छा सा नगर है और गंगा के उत्तर तट पर स्थित है। यहां से ग़ाज़ीपुर को पक्की सड़क गई है। बी० यन० डबल्यू० बनारस और गाज़ीपूर से चांद दियरा जाने वाली शाखा नगर के उत्तर से निकली है। इसकी एक शाखा उत्तर-पश्चिम में मऊ को भी गई है।

इस स्थान के नाम की उत्पत्ति का विषय विवादग्रस्त है। स्थानीय किम्बदन्ती के अनुसार इसकी उत्पत्ति आदि-कवि बाल्मीक से मानते हैं। जिनकी स्मृति में यहां एक मन्दिर था जिसे गंगा जी बहा ले गई हैं। बलिया शब्द का अर्थ रेतीला भी है जिससे रेत पर बने हुये मकान का दृष्टान्त घटित होता है।

यह स्थान अवश्य ही बहुत प्राचीन है, जैसा कि बहुत सी कथाओं से साफ़ प्रकट है। कुछ के हिसाब से तो बलिया वही स्थान है जहां चीनी यात्रियों द्वारा वर्णित "महान् एकान्त" (Vast Solitude) का बौद्ध मन्दिर था। सरजू संगम के कारण हिन्दू लोग इसे तीर्थ मानने लगे और यहां पर ददरी के मेले के समान बड़े बड़े मेले आज तक होते हैं। एक समय ब्रह्मा के पुत्र सुप्रसिद्ध भृगु ऋषि यहां रहते थे। भृगु आश्रम नामक उनका मन्दिर एक पवित्र स्थान माना जाता था। किन्तु उसे गंगा जी बहा ले गईं। वर्तमान मन्दिर कम से कम तीसरा है और नदी तट से हट कर धर्मारण्य सरोवर के पास बना है। धर्मारण्य सरोवर एक प्राचीन स्थल है। जहां सहस्रों ऋषियों ने योग साधना की थी। पहिला मन्दिर एक प्राचीन संगम पर बना था, जो नगर के उत्तर-पूर्व में स्थित था। किन्तु अब यह संगम नगर के पश्चिम में कुछ दूर बनस्थान नामक स्थान पर है। किन्तु मेला अब भी प्राचीन स्थल के निकट ही गंगाजी की रेती पर लगता है।

शिवपुरदियार

यह गंगा के उत्तर तट पर वाली भूमि पर स्थित है। यह बलिया से चार मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है, जिससे यह एक ऐसी ही सड़क द्वारा सम्बन्धित है जो जौही तक चली जाती है। यहाँ पर सत्ताइस झोंपड़े छितराये हुये हैं। यह बलिया परगना का एक तालुका है और प्रति झोपड़े का नाम उसके राजपूत जन्मदाता पर है।

सोन संगम

सोन, महानदी और नर्वदा के उद्गम के समीप ही मध्यभारत के उच्च पठार से निकलती है। लगभग २२५

मील के पहाड़ पर ही चलती हुई जदुनाथपुर के निकट कोसडेरा नामक स्थान पर शाहाबाद जिले में प्रवेश करती है। कैमूर श्रेणी के ढालों और पहाड़ियों पर बहती हुई यह गंगा की घाटी में अकबरपुर के निकट प्रवेश करती है। फिर यह लगभग सौ मील के दक्षिण बिहार के मैदानों में सीधी बहती है। फिर आरा और दीनापुर के मध्य स्थान पर मनेर से दस मील उत्तर में सारन्ता जिले के दरियागंज नामक स्थान में गंगा से मिल जाती है

आइने अकबरी में लिखा है कि सोन में फेंकी हुई वस्तुयें पत्थर हो जाती हैं। इसमें सालिगराम पत्थर भी बहुत हैं।

सोन का ऐतिहासिक महत्व भी है। कदाचित् मेगास्थनीज़ ने Erranaboas नाम की जो भारत की तृतीय नदी बतलाई है पहिली और दूसरी सिन्धु और गंगा है, और जो गंगा से मिलती है यही है।

Erranaboas संस्कृत हिरण्यवाहू का रूपान्तर मालूम पड़ता है। पहिले इस नदी का यह नाम बाढ़ के समय में अपने साथ जो रेत ले आती है उसके रंग के आधार पर पड़ा था।

घाघरा संगम

यह छपरा के निकट गंगा से मिलती है। पृथ्वी का वह भाग जो बलिया जिले का पूर्वी भाग है और इन दोनों नदियों के बीच में आ जाता है। बाढ़ के समय घाघरा और गंगा के जल से ढक जाता है। और कुछ काल के लिये आरा और छपरा के मध्य में नाव चलने लगती है। जल मार्ग अच्छा है और इसमें व्यापार भी खूब होता है। स्टीमर पटने से अयोध्या तक आते हैं और रास्ते में उनके अन्य स्टेशन भी हैं। अयोध्या तक बड़ी से बड़ी नावें और छोटे स्टीमर चले जाते हैं किन्तु छोटी और मध्यम श्रेणी की देशी नावें तो नेपाल की सीमा तक चली जाती हैं।

घाघरा शब्द संस्कृत "घरघर" शब्द का अपभ्रंश है। इसके अन्य नाम सर्यू या सरजू और डेबवां भी कहते हैं।

गंडक संगम

यह सोनपुर के निकट गंगा से मिली है। यह हिमालय की निम्न पहाड़ियों से निकल कर चम्पारन ज़िले के उत्तर-पश्चिम में त्रिवेनी घाट पर मैदान में प्रवेश करती है। वहाँ से इसमें डेल्टाई नदी के गुण आ जाते हैं। किनारे निकटवर्ती देश से ऊँचे होते हैं। इस बात का सारन ज़िले की समृद्धि पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। बांध बनने के पहिले बाढ़ का पानी किनारों को बांध कर विस्तृत क्षेत्रों को जल से ढक देता था। मैदान में इसकी कोई सहायक नदी नहीं है। समीपस्थ देश का बहाव इस नदी की ओर न होकर इस नदी की ओर से दूसरी तरफ़ है। यहाँ से पानी ले जाने वाली बहुत सी धारायें जाकर गंगा में मिलती हैं। इस में धार के बहाव के साथ नावें बड़ी सरलतापूर्वक चल सकती हैं। किन्तु धारा की तेज़ी अधिक होने से और उसमें सेवार होने के कारण ऊपर की ओर जाने में अत्यधिक परिश्रम करना पड़ता है और जोखिम भी है। सोनपुर पर इसमें एक रेल का पुल भी बंधा है जो निर्माणकला में एक महत्व की वस्तु है। क्योंकि धारा बहुत तेज़ है और उसका पेंदा स्थिर नहीं है।

पहलेजा घाट

यहाँ से पटना में डीघा नामक स्थान तक स्टीमर आते जाते हैं।

सोनपुर

यह नगर गंडक के दायें तट पर गंगा-गंडक संगम के पास स्थित है। यहाँ कातिक की पूर्णिमा को एक बड़ा मेला लगता है, जो इस प्रान्त का सब से पुराना और बड़ा मेला है।

कहते हैं कि गज और ग्राह का युद्ध इसी स्थान पर हुआ था। जिसकी कथा श्रीमद्भागवत में इस प्रकार है :—प्राचीन काल में तिरहुत पर्वत के चारों ओर एक बड़ी झील थी। तिरहुत पर, जैसा कि नाम से स्पष्ट है, तीन बड़ी चोटियां थीं, जिन पर घने जंगल थे, जो जंगली पशुओं से पूर्ण थे। इस झील में एक बड़ा भीमकाय मगर या ग्राह रहता था। एक दिन एक विशालकाय हाथी इस झील में अपने साथियों के साथ स्नान करने आया। ग्राह ने उसके पैर को पकड़ लिया और गहरे जल में घसीटना चाहा। यह युद्ध सहस्त्रों वर्षों तक होता रहा और इस में भाग लेने के लिये सब हाथी और ग्राह आ पहुँचे। अन्त में हाथी कमज़ोर पड़ने लगा, तो उसने भगवान हरि से सहायता की प्रार्थना की। हरि ने उस की प्रार्थना सुनी और हर और अन्य देवताओं के सन्मुख उसे ग्राह से छुड़ा दिया।

यह ग्राह पूर्व जन्म में गन्धर्वों का राजा हूहू था, जो कुछ गन्धर्व स्त्रियों के साथ इस में स्नान करने आया। खेल में उसने द्वाल ऋषि की टांग को पकड़ लिया जो वहाँ स्नान करने के लिये आये थे। उन्होंने उसे श्राप

दिया जिससे वह ग्राह हो गया। इसके बाद वह झील में ग्राह के स्वरूप में रहने लगा। जब विष्णु भगवान ने गज के बचाने के लिये उसकी गर्दन काट डाली तो वह फिर गन्धर्व हो गया।

गज पूर्व जन्म में पांड्य का राजा इन्द्रद्युम्न था, जो कि बहुत धर्मात्मा और तपस्वी था। एक बार जब वह ध्यानमग्न बैठा था तो अगस्त्यमुनि वहां आये। राजा को उनका आना ज्ञात न हुआ उसकी इस उदासीनता पर क्रुद्ध होकर मुनि ने श्राप दिया कि तू गज हो जा। वह भी बहुत काल के बाद हरि द्वारा अपने से बैकुण्ठ ले जाया गया। इस स्थान पर जनकपुर जाते समय रामचन्द्र जी ने एक मन्दिर बनवाया था। यह मन्दिर हरिहरनाथ महादेव का है। पीछे यहाँ हरिहर क्षेत्र का मेला लगने लगा। यात्री लोग हरिहरनाथ महादेव के दर्शन अवश्य करते हैं। अन्य स्थान काली स्थान और पंचदेवता मंडिल हैं। पंचदेवता मंडिल का प्रबन्ध एक स्त्री के हाथ में है। इसका कहना है कि उसने देवता पर चढ़ाये हुये धन से ही इस मन्दिर को बनवाया है।

सोनपुर एक अत्यन्त पवित्र स्थान माना जाता है। यहाँ के स्नान का माहात्म्य भी बहुत अधिक है। किन्तु यहाँ का मुख्य महत्व यहाँ के मेले के कारण जिसमें भारतीयों के साथ योरुपियन भी अच्छी संख्या में आते हैं। यह मेला दो सप्ताह तक रहता है। किन्तु पूर्णिमा के दो दिन पहले और दो दिन बाद तक बहुत भीड़ रहती है। आने वालों की संख्या कभी कभी तीन लाख तक हो जाती है। क्षेत्र का विस्तार उत्तर से दक्खिन तीन मील और पूर्व से पश्चिम दो मील तक रहता है। नाना प्रकार की वस्तुएं और बहुत से पशु, हाथी, घोड़े इत्यादि काबुली, उत्तर भारतीय तथा स्थानीय दुकानदारों द्वारा बेचे जाते हैं। हाथियों का यहाँ हिन्दुस्तान भर में सब से बड़ा बाज़ार लगता है। सैकड़ों हाथी बिक्री के लिये लाये जाते हैं।

बैकुण्ठपुर

पटना ज़िले की बाढ़ तहसील में यह ग्राम गंगा के दक्षिण तट पर स्थित है। यह तीर्थ स्थान है। और यहाँ स्नान के बड़े मेले लगते हैं। यहाँ बैकुण्ठनाथ का एक प्राचीन शैव मन्दिर है। महाराज मानसिंह की माता का देहान्त यहीं हुआ है। दाह के स्थान पर राजा मानसिंह ने एक बारहदरी बनवाई। बूकानन हैमिल्टन लिखता है कि राजा साहब ने इस समय एक स्वप्न देखा जिसमें उन्हें नदी में एक स्थान की सूचना दी गई जहां जरासंध अपनी तावीज़ (जन्तर, जिसे वह अपनी बांह पर बांधे रहता था) फेंका था। वह पाया भी गया; क्योंकि ऐसे स्वप्न हमेशा सत्य होते हैं। यह एक लिंग के सदृश्य पत्थर था, जिस पर चार मनुष्य के से सिर बने हुये थे। शिवरात्री के अवसर पर लगभग दो लाख मनुष्य यहाँ एकत्रित होते हैं।

पुनपुन संगम

सोन के पूर्व में पुनपुन गया ज़िले से पटने में आती है और फिर नौबतपुर तक उत्तर दिशा में बहती है। यहाँ से यह पश्चिम की ओर मुड़ती है और गंगा से फ़तवा नामक स्थान पर मिल जाती है। संगम से थोड़ा ही पहिले इसका कुछ जल धोआ नामक धारा में बँट जाता है, जो गंगा के साथ साथ ही बहती है। इसमें साल भर पानी रहता है, किन्तु वर्षाऋतु को छोड़कर अन्य किसी समय में वह जलमार्ग का काम नहीं देती क्योंकि इससे नहरें भी बहुत सी निकाली गई हैं। गया में इस पर एक बड़ा बांध भी बंधा हुआ है। इस प्रकार इसका इतना जल निकल जाता है कि केवल थोड़ा सा ही अंश गंगा तक पहुँचता है। संगम पर इस की चौड़ाई केवल सौ गज रह जाती है, जिसके दोनों ओर टलुआ तट है।

पुनपुन पवित्र नदी है। इसे आदि गंगा या वास्तविक गंगा भी कहते हैं। गयाधाम के प्रत्येक यात्री का यह कर्तव्य होता है कि वह गया जाते समय इसके तट पर सिर मुड़ाये और इस के जल में स्नान करे।

बांकीपुर

पटना ज़िले का केन्द्र है और गंगा के दक्षिण तट पर स्थित है। यहाँ बहुत से सरकारी दफ़्तर हैं। यहां की सब से प्रधान और अजीब इमारत पुराना सरकारी नाजघर है, जिसे गोला कहते हैं। यह ईंट की बनी हुई है। दीवालें बारह फ़ुट मोटी और ९६ फ़ुट ऊँची हैं। यह शहद की मक्खी के छत्ते के समान या आधे अंडे के समान है। बाहर दो सीढ़ियाँ हैं, जो घूमती हुई ऊपर तक गई हैं। कहते हैं नैपाल के राना जंगबहादुर घोड़े पर सवार होकर एक सीढ़ी से चढ़े थे और दूसरी से उतरे थे। इसका निर्माण सन् १७४० के काल के १६ वर्ष उपरान्त हुआ था। उस समय यह समझा गया था कि नाज ऊपर से डाला जायगा और नीचे छोटे दरवाज़ों से लोग उसे पायेंगे किन्तु बनाने वालों की एक विचित्र भूल से यह दरवाज़े बाहर के बजाय भीतर की ओर खुलते हुए बनाये गये।

पटना

यह गंगा के दक्षिण तट पर स्थित है। यद्यपि इसकी समृद्धि गिरती जा रही है, किन्तु फिर भी इसका व्यापार अब भी अच्छा है। रेल और नदी दोनों पर एक मुख्य स्थान में स्थित होने के कारण यह बिहार प्रान्त के व्यापार का एक मुख्य केन्द्र हो गया है। इसका क्षेत्रफल नौ वर्गमील है।

यह बात अब सर्वमान्य है कि पटना प्राचीन पाटलिपुत्र, कुसुमपुर अथवा पुष्पपुर के स्थान पर स्थित है। पाटलिपुत्र (जो इस समय पटना और बांकीपुर के नीचे दबा हुआ है) का निर्माण पांचवीं सदी ईसा से पहिले हुआ था। चन्द्रगुप्त के समय में (३२१—३६७ बी० सी०) में यह भारत की राजधानी हो गया। मेगास्थनीज़ के लेख से पता चलता है कि उन दिनों में यह अधिकतर काष्ठ का ही बना हुआ था, किन्तु अशोक ने इसके वातावरण में एक महान परिवर्तन किया। पक्के मकान बनने लगे और बिहारों और स्मारकों से इस नगर को भर दिया। यह बह नहीं गये हैं जैसा कि पहिले समझा जाता था बल्कि अब भी दबे हुये पड़े हैं।

सन् १८७७ में लम्बी ईंट की दीवाल के ग्राम और लकड़ी के बने हुये स्थान भी मिले थे, किन्तु कर्नल वैडेल की खोजों से और भी बहुत सी बातों का पता चला है। साल लकड़ी के लट्ठे, जो अब भी अच्छी हालत में हैं, पाये गये। अशोक का प्रसिद्ध महल, पुरानी ईंट की दीवारें, लकड़ी के पुल और एक मुख्य नगर तथा अशोक के स्तम्भ के भग्नावशेष पाये गये हैं। वर्तमान पटना में केवल दो छोटे मन्दिर दर्शनीय हैं। एक बड़ा पाटन देवी का महराजगंज में और एक छोटा पाटन देवी का जो हरमन्दिर की गली में है। बड़ा मन्दिर वाले अपनी मूर्ति को असली बतलाते हैं। और कहते हैं कि देवी की प्रतिमा ज़मीन से निकली है। किन्तु छोटा मन्दिर वाले कहते हैं कि उनका मन्दिर असली है और वह कूप भी उनके अधिकार में है जहां सती का वस्त्र गिरा था जब शिव जी उन्हें त्रिशूल पर धारण किये विचर रहे थे।

कहते हैं कि गुरु गोबिन्द सिंह का जन्म १६६० ई० में चौक के निकट एक गृह में पटने में ही हुआ था। रणजीत सिंह ने वहां एक मन्दिर बनवाया अर्थात् उसका जीर्णोद्धार किया। जिस गली में यह मन्दिर है उसे हर मन्दिर की गली कहते हैं। इस मन्दिर पर सिक्खों की असीमश्रद्धा है।

पटना ओरियन्टल पुस्तकालय खानबहादुर खुदाबख्स ने स्थापित किया था। यहाँ अरबी और फ़ारसी अनेक बहुमूल्य हस्तलिखित ग्रंथ रक्खे हैं और पूर्वीय हस्तलेखन कला के अनेक उदाहरण प्रस्तुत हैं जिनमें से लगभग ३०० तो भारत के प्रसिद्ध सम्राटों के हस्ताक्षर, और मुस्लिम जगत के बड़े से बड़े उल्माओं की सील आदि हैं।

डीघा घाट

गंगा के दक्षिण तट पर रेल का स्टेशन है। बांकीपुर से उत्तर-पश्चिम पाँच मील पर स्थित है। यहां दक्षिण में ई० आई० आर० से उत्तर में बी० एन० डबल्यू० आर० से गंगा के उस पार पहलेजा घाट तक स्टीमर द्वारा सम्बन्धित है। नदी यहां पर बराबर अपना स्थान बदलती रहती है। विशेषकर उत्तर में जहां उतरने का स्थान एक साल आध मील दूर हो जाय और दूसरे साल बिलकुल ही कट जाय, फिर बीच धार में एक रेत का किनारा निकल आये और स्टीमर के लिये एक नया मार्ग ढूँढ़ने की आवश्यकता पड़े। यह धारा भी कुछ वर्ष में भर जाये और एक नया मार्ग ढूँढ़ने की आवश्यकता पड़े।

दीनापुर

यह पटना ज़िले में गंगा के दक्षिण तट पर स्थित है। छावनी स्टेशन से २ मील पर गंगा के किनारे स्थित है। पटना ज़िले में सन् १८५७ के विद्रोह की आग पहले पहल यहीं भड़की थी। दीनापुर, दानपुर शब्द का अंग्रेज़ी अपभ्रंश है, जिसके दो अर्थ लगाये गये हैं। एक अर्थ तो दान ऋषि का नगर है, और दूसरा नाज का नगर है, क्योंकि यह एक बड़ी मंडी भी है। एक गजेटियर के संवाद दाता का कथन है कि दीनापुर का केवल एक अर्थ दीन पर के नगर का है। दीन छावनी में होकर जाने वाले एक नाले का नाम है।

फतवा

गङ्गा के दक्षिण तट पर पुनपुन संगम के पास पटना से सात मील पूर्व में स्थित है। ई० आई० आर० का स्टेशन है और कपड़ा बुनाई के धन्धे का केन्द्र है। यहां के जुलाहे लोग टसर, सिल्क, मेज़पोश, तौलिया और रुमाल बुनते हैं।

गङ्गा स्नान के बड़े बड़े मेले पुनपुन संगम पर लगते हैं। बारूणी द्वादसी का विशेष माहात्म्य है। क्योंकि इस रोज़ यहां वामन अवतार हुआ था। इस दिन यहां लगभग दस सहस्र मनुष्य इकट्ठे होते हैं।

कुंजी

बांकीपुर का एक भाग है। यहां योरुपियन लोगों की बस्ती है।

मोकामें

गङ्गा के दक्षिण तट पर स्थित है। यहां थाना, अस्पताल, सब रजिस्ट्री आफिस और डाक बँगला है। यह ई० आई० आर० पर एक स्टेशन और बी० एन० डबल्यू० आर० का जंकशन भी है। यहां रेल के बहुत से यूरोपियन और यूरेसियन कर्मचारी रहते हैं और यह व्यापार का भी एक अच्छा केन्द्र है।

बड़ी गंडक संगम

बड़ी गंडक, जो गंगा के उत्तर तट पर पटना से उस पार आकर मिली है, नारायणी और शालिग्रामी के नाम से भी विख्यात है। यह नैपाल के मुख्य पठार से निकलती है जहां इसका उद्गम सप्तगंडकी के नाम से प्रसिद्ध है। इस ज़िले में यह करनौल नामक स्थान पर प्रवेश करती है। यहां से टेढ़ी मेढ़ी चलती हुई हाजीपुर तक आती है, जहां १९२ मील की यात्रा के बाद श्री गंगा जी से मिल जाती है।

बूढ़गंडक संगम

बूढ़गंडक दरभंगा ज़िले के रुसेरा नामक स्थान से दक्षिण की ओर बहती है। फिर पूर्व की ओर बहकर मुंगेर ज़िले में यह अकाहा नामक स्थान पर प्रवेश करती है। फिर बेगूसराय नामक तहसील में टेढ़ी मेढ़ी बहती हुई मुंगेर से कुछ मील नीचे खगरिया नामक स्थान पर गंगा से मिल जाती है। यह वर्ष भर जल मार्ग का कार्य देती है किन्तु बड़ी बड़ी नावें केवल वर्षा ऋतु में ही आ सकती हैं। स्टीमर भी संगम से थोड़ी दूर ऊपर खगरिया तक जाते हैं, किन्तु अब संगम पर धारा भर रही है और गर्मी में काम लायक नहीं रहती है।

किमूल संगम

दक्षिण से आने वाली मुख्य सहायक नदी किमूल है। हज़ारीबाग के ज़िले के खरगडीह थाने से निकलती है और सतपहाड़ी पर्वत के निकट मुंगेर ज़िले में प्रवेश करती है। यह पहिले पूर्व की ओर गिद्धेश्वर पहाड़ियों के दक्षिण मुख के निकट ही बहती है। किन्तु उनके पूर्वी अन्त पर पहुँच कर उत्तर की ओर मुड़ जाती है। जमुई नगर के दो मील दक्षिण में इससे बनार आकर मिली है। इससे भी दो मील नीचे आकर अलई मिली है। इसके बाद यह पूर्व की ओर फिर मुड़ जाती है और सूरज घाट के निकट गङ्गा से मिल जाती है। किमूल और लक्खी सरांय के मध्य में इस पर रेल का बड़ा पुल भी बँधा है।

मान संगम

मान नदी खरगपुर की पहाड़ियों से भीम बाँध के सोतों के निकट से ही निकल कर चक्कर खाती हुई पहाड़ियों के पूर्व की ओर से उत्तर की ओर बहती है और घोड़ाघाट के निकट गङ्गा से मिल जाती है।

मुंगेर

गंगा के दक्षिण तट पर स्थित है। कहते हैं इसे चन्द्रगुप्त ने बसाया था, जिसके नाम पर इसका नाम गुप्तगढ़ पड़ा। यह नाम कष्टहारिणी घाट की एक शिला पर अङ्कित पाया गया है। यह भी कहा जाता है कि इस नगर का विस्तार बहुत था, जिसके चारों ओर मिट्टी की दीवालें थीं। इनके भग्नावशेष कोट से तीन मील दक्षिण अब भी पाये जाते हैं, किन्तु यह बाद के समय के प्रतीत होते हैं। महाभारत में इस स्थान का नाम मोदागिरि दिया हुआ है। और सभा पर्व में भीम द्वारा पूर्वी भारत का वर्णन करते हुये कहा गया है कि भीम ने अङ्ग के राजा कर्ण को परास्त कर मोदागिरि के राजा से युद्ध किया और उसे मार डाला। कहते हैं कि ईसा की दसवीं शताब्दी में पाल राजाओं का शाही कैम्प यहीं था और एक लेख मोदागिरि से निकाला गया था, जिसमें गंगा पर एक नावों के पुल का निर्माण होना लिखा है।

मुसलमान और अंग्रेज़ी काल के इतिहास में भी इसका वर्णन आता है। यहां एक मज़बूत किला बनवाया गया था, जो अब तक है।

समीप की पहाड़ियाँ, लोहे की खानें होने के कारण यहां बिजली अक्सर गिरती है, किन्तु यहां का जलवायु स्वास्थ्य के लिये प्रसिद्ध था। वारेन हेस्टिंग्ज़ ने एक पत्र में बंगाल से तुलना करते हुये यहां की जलवायु की प्रशंसा की है। अन्य यात्रियों ने भी इस स्थान और इसके उद्योग धन्धों की प्रशंसा की, किन्तु यहां के भिखमंगों के झुंड से सब तंग आ गये थे। फैनी पार्कस नामक स्त्री ने सन् १८३६ में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'Wanderings of Pilgrim' में लिखा है कि "किला दर्शनीय है"। किन्तु मेरा मन बैरागी मन्दिरों के उस सुन्दर झुंडको देखकर बहुत ही मुग्ध हुआ। मठों के चारों ओर सुन्दर वृक्ष थे। श्वेत मन्दिरों की ऊँची चोटियां, जिनमें सफेद

और लाल झंडे वाले बांस बँधे हुये थे, जिनके सन्मुख वेदियाँ थी। वे बड़ी ही सुन्दरता के साथ सज्जित थे। डाइरेक्टरी में बाज़ार में मिलने वाली वस्तुओं का वर्णन है, किन्तु सुन्दरता के उपासक के लिये इन पूर्वी सौन्दर्य के अमूल्य रत्नों का कहीं नाम भी नहीं है। यहां की कारीगरी में फूलों के काले गमले जो काष्टनिर्मित और गोंद की पालिश किये हुये बड़े सुन्दर होते हैं। मालायें और कङ्कण भी अच्छे होते हैं।

यहां लोहे की वस्तुयें भी अच्छी बनती हैं। इसी से इसे बंगाल का बरमिंघम कहते हैं, किन्तु यहां के निवासी बड़े शराबी होते हैं।

यहां पूरब सरांय स्टेशन के पास ही एक मारवाड़ी धर्मशाला है। मुँगेर स्टेशन के पास बाबू बैजनाथ की बनवाई हुई एक बड़ी धर्मशाला है। किले से आध मील की दूरी पर बीच धारा में एक शिला है, जिसमें एक पत्थर पर दो पैर बने हुये हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि यह चरणचिन्ह श्रीकृष्ण जी के उस समय बन गये जब वे गंगा पार कर रहे थे। इसे मन पत्थर कहते हैं। और यह नदी मध्य की उन शिलाओं में से एक है जिनकी चोटी पर मन्दिर बने हुये हैं और जिन्हें रोशन मीनार कहते हैं। कहते हैं कि मुंगेर में मुद्‍गल ऋषि निवास करते थे। जिससे यह मुद्‍गलगिरि या मुनिपर्वत के नाम से प्रसिद्ध है। दमदमा कोठी (जो अब नहीं है) के बारे में यह कहा जाता है कि इसकी ईंट की दीवालों पर अन्य कोई वस्तु तो अपना चिह्न भी न कर पाती। इस कारण इसके एक टुकड़े को गनपाउडर से उड़ाना पड़ा। कष्टहारिणी घाट पर छः मन्दिर बने हुये हैं। जहां राखी पूर्णिमा के दिन बड़ा मेला लगता है। मन्दिर के बाहर एक नाक कटी हुई पुरानी मूर्ति पड़ी हुई है। यह बौद्ध काल की मालूम पड़ती है। किन्तु इसके चार भुजा हैं।

चण्डीस्थान और कर्णचौरा के बारे में एक एक कथा प्रसिद्ध है। मुद्‍गलपुरी का राजा कर्ण विक्रम का समकालीन था और हर रात्रि को चण्डी देवी की उपासना करता था। वह मन्दिर में जा कर उबलते हुये घी के पात्र में, अपने आप को डाल देता था। जोगिनी उसके मांस को खा जाती थीं। देवी इससे प्रसन्न होकर अस्थिपञ्जर पर जल छिड़क कर उसे पुनर्जीवित कर देती थी। वह घी सवा मन सोना हो जाता था, जिसे वह ब्राह्मणों में वितरित कर देता था। यह कीर्तिसमाचार राजा विक्रम तक पहुँचा और वह आकर उसका नौकर हो गया। उसने इस रहस्य का पता लगाकर एक रात कर्ण से पहले जाकर कड़ाई में तीन बार अपने आप को डालता चला गया। देवी ने प्रसन्न होकर वर मांगने को कहा। उसने सोना बनाने की विधि मांगी। देवी ने उसे पारस दे दिया। जब कर्ण वहां पहुँचा तब देवी और घी का पात्र दोनों न थे। तब उसने सम्पत्ति बेचकर दान करना शुरू किया। यहां तक कि उसके पास कुछ न रहा। जब बिक्रम ने उससे खिन्न रहने का कारण पूछा तो उसने सब वृत्तान्त कह सुनाया। जिस पर उसने उसे वह पारस दे दिया। कर्ण ने विचारा कि यह अवश्य विक्रम होगा अन्यथा इतना उदार न होता और नम्र भाव से उसके पैरों पर गिर पड़ा।

वाया संगम

दरभंगा ज़िले में गंगा के उत्तर तट पर मुख्य सहायक है। यह बड़ी गंडक से निकलती है और दक्षिण मुज़फ्फ़रपुर में बहती हुई इस ज़िले के दलसिंहसरांय थाने के पास होती हुई धनेशपुर के कुछ नीचे गङ्गा से मिल जाती है।

छोटी या बूढ़ी गंडक संगम

यह चम्पारन, मुज़फ्फ़रपुर, दरभंगा और उत्तरी मुंगेर की एक महत्वशाली नदी है। दरभंगा ज़िले में यह पूसा के निकट प्रवेश करती है। यद्यपि रेल बन जाने से इसका महत्व कम हो गया है, किन्तु फिर भी इस जलमार्ग द्वारा अच्छा व्यापार होता है। इसके तट पर कई बड़े बाज़ार और मंडियां हैं। मध्यम श्रेणी की देशी नावें इस पर साल भर चल सकती हैं। जमकानी और बालन नामक दो शाखायें इससे पूसा के निकट निकलती हैं और समस्तीपुर तहसील के दक्षिण-पश्चिम बहती हुई मुंगेर में फिर मुख्य नदी से मिल जाती है। खगरिया के निकट यह नदी गंगा से मिल जाती है।

सूरजगढ़

गंगा के दक्षिण तट पर स्थित है। यह स्थान इस ज़िले में सबसे प्राचीन माना जाता है। कहते हैं कि यहां राजा सूरजमल का किला था, जिसका केवल कुछ अंश अब बच रहा है। इस राजा ने मुसलमानों के विजय-काल तक यहां राज किया। इसी से इस स्थान का यह नाम पड़ा है। यह कहा जाता है कि लगभग चालीस वर्ष हुये जब नदी के कटाव के कारण भूगर्भ में से एक कमरा दृष्टिगोचर हुआ। जिसमें एक आला था, कुछ पुरानी पगड़ियां

रक्खी हुई थीं। यह छूते ही नष्ट हो गई। सूरजगढ़ व्यापार की एक अच्छी मण्डी थी, किन्तु रेल बन जाने से इसका व्यापार जाता रहा। नाव के घाट के समीप ही एक वृक्ष के जड़ के पास कुछ मूर्तियां रक्खी हुई हैं। जिनमें से कुछ ब्राह्मण धर्म सम्बन्धी और कुछ बौद्ध धर्म सम्बन्धी हैं। एक बड़ा शिवलिंग बाद का प्रतीत होता है। एक बुद्ध की बैठी हुई मूर्ति है। दो और मूर्तियां भी काले पत्थर पर किसी देवता की खिंची हुई हैं। यह बुद्ध से मिलती जुलती हैं, किन्तु यह अपने चारों हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुये हैं, जो केवल नारायण के हाथ में मिलते हैं। एक तीन फुट और दूसरी इसकी आधी। बड़ी के ऊपर जलचित्र भी है जिसमें पशुओं और चिड़ियों के चित्र अंकित हैं। छोटी के निम्न भाग में दो स्त्रियों की मूर्तियां अंकित हैं, जिनमें से एक हाथ में चमर और दूसरे में सितार है।

चन्दन संगम

यह पहाड़ी नदियों में सबसे बड़ी है, जो इस ज़िले के दक्षिण भाग से आकर इसमें मिली है। यह देवगढ़ के निकट से निकल कर सन्थाल परगना में बहती हुई अनेक सहायक धाराओं के साथ गंगा जी में अनेक मुखों से प्रवेश करती है।

भागलपुर

यह गंगा के दक्षिण तट पर स्थित है। इस नगर में तथा इसके निकट चम्पा नगर में कुछ मुसलमानों के पवित्र स्थान हैं और जैनियों के भी दो मन्दिर हैं, जिनमें से एक पिछली शताब्दी के प्रसिद्ध बैंकर जगतसेठ का बनवाया हुआ है। यहां के मुख्य धन्धे कालीन और कम्बल बनाना, बेंत का काम, फर्नीचर बनाना, नक्काशी, तेल पेरना, आटा पीसना तथा रस्से बनाना है। इस स्थान का जलवायु बहुत स्वास्थ्यकर है और यहां साफ़ जल का भी अच्छा प्रबन्ध है।

कोलगंग

गंगा के दक्षिण तट पर स्थित है, और ई० आई० आर० पर कुछ व्यापारिक महत्व का स्टेशन है। पहाड़ पर स्थित एक विचित्र शैली का मन्दिर है, जिसमें नक्काशी के कुछ अद्भुत नमूने हैं। इस स्थान पर चीनी यात्री ह्वेनसांग भी कदाचित् आया था, बाद में यह स्थान ठगों का अड्डा के नाम से प्रसिद्ध रहा है।

पथर घाट पहाड़ी

यह पहाड़ी गंगा के तट पर स्थित है। पहाड़ी के उत्तर की ओर कुछ शिलाओं पर नक्काशी की हुई है। यह ईसा की सातवीं या आठवीं शताब्दी के प्रतीत होते हैं। यह चौरासी मुनि करके विख्यात है और राम और कृष्ण के जीवन की घटनाओं के चित्र माने जाते हैं। इस पहाड़ी में कुछ सुन्दर गुफायें भी हैं, जिनमें सब से मुख्य वटेश्वर गुफ़ा है जिसमें धात और चांदी की बनी हुई वस्तुएँ हैं।

राजमहल

गंगा के दायें तट पर स्थित है। किसी समय यह बंगाल की राजधानी थी, किन्तु अब तो मिट्टी के झोपड़ों का समूह मात्र है जिनके बीच में कुछ अच्छे घर हैं, तथा कुछ सुन्दर भवनों के भग्नावशेष भी हैं। प्राचीन मुसलमान नगर वर्तमान नगर के चार मील पश्चिम तक जंगल के नीचे दबा पड़ा है। किन्तु बहुत से भवन या तो गिर गये हैं या रेल के लिये गिट्टी बनाने को तोड़ डाले गये हैं।

सब रजिस्ट्री आफ़िस के पूर्व में शिव का मन्दिर भग्नावस्था में है। भागलपुर की सड़क के दक्षिण में मानसिंह की बनवाई हुई जामा मसजिद है। यह मुगल शैली का एक अच्छा उदाहरण है। इसके पश्चिम में शिव का एक मन्दिर मानसिंह का बनवाया बतलाया जाता है। इसके सामने की ओर एक बारादरी है। कोटघर पर अब सरोवर के निकट ही तीस फुट व्यास वाला एक कुआं है, जिसे मानसिंह का कुआं कहते हैं। जामा मसजिद से ८०० गज़ उत्तर-पश्चिम में एक पुराना मुसलमानी पुल है। पुल से आध मील उत्तर में एक पहाड़ी है, जिसे पीर पहाड़ कहते हैं। इसके पश्चिम में एक टीला है जिसे कनाई थान कहते हैं। कहते हैं श्रीकृष्ण जी ने इस पर नृत्य किया था। मालदा ज़िले में रामकेलि के मेले से लौटते समय यात्री लोग यहां भी आते हैं। पथरगढ़ से पश्चिम में महादेव थान पर एक प्राचीन शिवालय है। यहां तीन वैष्णव साधुओं की समाधियां भी हैं।

साहिबगंज

यह नगर गंगा के दक्षिण तट पर स्थित है। यह तटस्थ भूमि पर ही लगभग दो मील के क्षेत्रफल में विस्तृत है। इसकी स्थिति दर्शनीय है, क्योंकि यह नदी तट की उठती हुई भूमि पर है और पीछे सुहावनी पहाड़ियां हैं। रेल के स्टेशन के दक्षिण-पश्चिम वाली छोटी पहाड़ी तो बहुत ही सुन्दर है। रेल बन जाने के बाद से यह व्यापार

का केन्द्र बन गया है। स्थानीय वस्तुयें नदी द्वारा और योरुपीय वस्तुयें रेल द्वारा लाई जाती हैं। स्थानीय व्यापार की मुख्य वस्तुयें चावल, मक्का, नाज, सवाई घास (जो राजमहल की पहाड़ियों से लाई जाकर काग़ज बनाने के लिये कलकत्ते भेजी जाती है) इत्यादि हैं।

सकरी गली

यह ग्राम गङ्गा के निकट ही स्थित है। इसका नाम कदाचित संकरा (जो संस्कृत शब्द संकीर्ण का अपभ्रंश है) और गली से बना है। इस ग्राम का नाम "सकरी गली के दर्रे पर जो मुसलमान काल में एक विशेष राजनैतिक महत्व का स्थान था और जहां पर कई लड़ाइयां भी हुई हैं।" के आधार पर पड़ा है।

कोसी संगम

कोसी नैपाल के पूर्व में सात धाराओं के संगम से बनी है। इसलिये उस प्रदेश को सप्त कौशकी कहते हैं। मुख्य धारा संकोसी है जो पश्चिम से पूर्व को बहती है। अन्य छः सहायक कोसियों के नाम भोटिया कोसी, ताम्बा कोसी, लिक्खू, दूध कोसी, अरुण और तम्बर है। बाराह चेत्र या बारा चत्र पर यह नदी पहाड़ों को कुछ जलप्रपात बनाती हुई छोड़ती है। और यहीं से इसका नाम कोसी प्रसिद्ध हुआ है। पूर्णिया ज़िले में यह अचरा घाट से कुछ मील उत्तर की ओर प्रवेश करती है। इस ज़िले में यह एक मील पाट वाली चौड़ी नदी हो जाती है और डेल्टाई नदी के सब गुणों को प्रदर्शित करती हुई गङ्गा से मिल जाती है कटिहर के निकट इस पर एक उत्तम पुल बन गया है और अंचरा और खनवा घाट के मध्य में नाव भी चलती है। यह दोनों बी० एन० डबल्यू० आर० और ई० बी० एस० आर० के बिहार प्रान्तीय भाग को जोड़ते हैं।

कोसी दरभंगा नरेशों के यहां सदा से अशुभ मानी गई है। यहाँ तक कि वे इसे पार करना भी अशुभ समझते हैं। कहते हैं कि इस राज के स्थापक को गङ्गा से पर्वत प्रदेश तक और गंडक से कोसी तक के समस्त भूखंड की प्राप्ति हुई थी। (अई गङ्ग ता संग, अई कोष ता घोष)। मिस्टर वाइर्न लिखते हैं इस बाँध के कारण दरभंगा के महाराजा इसे पार करना अशुभ समझते रहे। इस के अतिरिक्त भैंसजी पुराण के चौथे अध्याय में यह भी लिखा है कि कलियुग में दुर्भिक्ष पीड़ित ब्राह्मण बगल में अपने बच्चों को दाब कर इस नदी को पार करेंगे। वर्तमान राजा साहब के पिता महाराज रामेश्वरसिंह जी ने इस विश्वास की पुष्टता का वर्णन करते हुए बतलाया कि फरकिया के राजा बिजय गोबिन्द सिंह के केवल एक ही कन्या थी, जिसका विवाह मेरे सब से छोटे चाचा के साथ करना चाहते थे। दहेज में वे अपनी अतुल सम्पत्ति भी देना चाहते थे, जिसमें राज्य का क्षेत्रफल ही लगभग दो सहस्त्र वर्गमील था। मेरे बाबा महाराज रुद्रसिंह जी ने कोसी पार करने से इन्कार कर दिया और इस बात पर ज़ोर दिया कि कन्या पहिले नदी के इस पार लाई जाय। इस बात को फ़रकिया नरेश ने अस्वीकृत कर दिया और सम्बन्ध न हो सका।

लिवारी सङ्गम

लिवारी, जिसका नाम वारन्दी भी है, एक काफ़ी बड़ी नदी है। यह पूर्निया के पश्चिम से निकल कर गंगा से करागोला के निकट मिली है।

मनिहारी

यह इस ज़िले के दक्षिणी भाग में गंगा के तट पर स्थित है। ई० बी० एस० आर० का बिहार प्रान्तीय भाग यहीं समाप्त होता है। यह ई० आई० आर० के स्टेशन सकरीगली से स्टीमर द्वारा सम्बन्धित है। यहाँ पर नदी के स्टीमर भी रुकते हैं। चन्द्र और सूर्य ग्रहण के अवसर पर बड़े बड़े मेले लगते हैं उस समय नैपाल तक के यात्री यहां नहाने आते हैं तो वारुणी गंगा के अवसर पर (मार्च अप्रैल में) यहाँ एक बड़ा मेला लगता है। कार्तिक पूर्णिमा और शिवरात्रि को भी छोटे छोटे मेले लगते हैं।

करागोला या कड़हागोला

यह ग्राम गङ्गा के दक्षिण तट पर स्थित है। पहिले यह व्यापार का एक अच्छा केन्द्र था, लेकिन रेल के बन जाने से व्यापार छिन सा गया है। किन्तु फिर भी गङ्गा पर चलने वाले स्टीमरों का यह स्टेशन है।

यह स्थान प्रधानतः एक बड़े मेले के लिये प्रसिद्ध है, जो अब कम हो रहा है। पहिले वह मेला इस प्रान्त के सब से बड़े मेलों में से था। कहते हैं कि पहिले जब गंगा पीरपैंठी पर्वत के निकट से बहती थी तब यह मेला पीरपैंठी पर ही लगता था, किन्तु अब गंगा ने करागोला का तट काट दिया है इस लिये यह मेला अब कन्टन नगर के पास लगता है। इस मेले में घरेलू उपयोग की प्रायः सभी वस्तुयें मिलती हैं। यद्यपि करागोला गंगा तट पर स्थित है, किन्तु फिर भी यह भूटिया और नैपाली लोगों

के सरहद्दी मेले के समान प्रसिद्ध रहा है। इनकी संख्या अब कम हो रही है, किन्तु ये अब भी आते हैं। मेला माघी पूर्णिमा को लगता है और हिन्दुओं में अच्छा दिन माना जाता है, क्योंकि कलियुग का आरम्भ इसी दिन हुआ था।

मानिकतल्ला

यह नगर कलकत्ते का एक बाहरी औद्योगिक भाग है यहां एक जैन मन्दिर है जो कलकत्ते में सब से सुन्दर है।

बजबज

हुगली नदी के बायें तट पर स्थित है। पहिले यहाँ एक किला था। यहाँ कलकत्ते के तेल की दूकान है, जहाँ तेल से लदे हुये जहाज़ खाली होते हैं।

अचीपुर

यह ग्राम हुगली पर बांयीं ओर स्थित है। इसका हेस्टिंग्ज़ नाम टांग एचेउ नामक एक चीनी के नाम पर है। पुराने कागजों से पता चलता है कि वारेन ने इसे एक भूखंड का दान दिया था। स्थापक की कब्र ग्राम में है। यहीं एक चीनी मन्दिर भी है। जहां कलकत्ते के चीनी फरवरी में यात्रार्थ आते हैं।

फाल्टा

यह ग्राम हुगली के बांये तट पर दमोदर संगम के सामने स्थित है। यहां एक किला है जिस पर भारी तोपें रक्खी हुई हैं यह हुगली नदी की रखवाली करता है।

डायमन्ड हार्बर

हुगली के पूर्व तट पर स्थित है। यहां डायमन्ड हार्बर खल का संगम है। यहां का स्थानीय नाम हाजीपुर है। यह पक्की सड़क द्वारा कलकत्ते से सम्बन्धित है ई० बी० एस० आर० की एक शाखा पर यहां स्टेशन भी है।

सरौगा

हवड़ा ज़िले में यह हुगली के दांये तट पर स्थित है। यह एक प्राचीन स्थान है। यहां पीर सारंग को प्रदत्त एक पुती हुई इमारत है। यहां ईंटों का काम होता है।

राज गंज

हवड़ा ज़िले में यह हुगली के दायें तट पर स्थित है। यहां नेशनल जूट मिल है और यह हिलसा कछली के व्यापार का केन्द्र है।

शिवपुर

यह हवड़ा नगर का एक भाग है। यहां रायल वोटानिकल गार्डेन और सिविल इन्जिनियरिंग कालेज हैं।

शालीमार

हवड़ा नगर का एक अंग है। यहां रस्से बनाने के कारखाने और बी० एन० आर० के गोदाम हैं। यहां कर्नल किड का एक मकान और एक बाग था। जिसे वह सन् १६६७ ई० में लाहौर में बनाये गये शालीमार बाग और आनन्दभूमि की नकल एक छोटे परिणाम में उतारना चाहते थे।

रामराज ताल

हवड़ा जिले में यह हुगली के दायें तट पर स्थित है। अप्रैल और मई में यहां एक बड़ा मेला लगता है, जिसे बरबारी कहते हैं। क्योंकि इसका व्यय चन्दा करके इकट्ठा किया जाता है। यह स्थान अपने नारियलों और ओल के लिये प्रसिद्ध है।

संकरैल

यह एक बड़ा ग्राम है, जो सरस्वती और हुगली के संगम के नीचे स्थित है। यहां नदी के स्टीमर रुकते हैं।

वाली

हवड़ा जिले में यह हुगली के दायें तट पर स्थित है। इस स्थान का नामकरण अवश्य ही तट पर नदी द्वारा जमा की हुई बालू के कारण पड़ा है। तीन सौ वर्ष पूर्व चन्दी द्वारा रचित कवि कंगन नामक कविता में इसका वर्णन आया है। ब्राह्मण सभ्यता का यह केन्द्र था यहां कई टोल थे और यहां के आचार्यों द्वारा रचित पञ्चांगों का खूब प्रचार था।

गंगासागर

यहां मकर संक्रान्ति (जो माघ की प्रतिपदा को मानी जाती है) का बड़ा मेला लगता है। यह स्थान सागर से एक छोटी धारा के संगम पर है। यहां दुकानों के लिये चटाइयों के मण्डप बन जाते हैं। मेला कई दिन चलता है। किन्तु तीन दिन मुख्य हैं। पहिले दिन प्रार्थना और प्रसाद चढ़ा कर सागर को संतुष्ट करते हैं। प्रसाद की मुख्य वस्तुएं नारियल, फल और फूल हैं, किन्तु कुछ लोग पंचरत्न-जैसे हीरा, मोती, लाल आदि नारियल, सुपारी और यज्ञोपवीत के साथ चढ़ाते हैं। यह एक कपड़े में लपेट कर धारा या संगम पर फेंक दिये जाते हैं। जहां से वे सागर में बह जाते हैं। रत्न साधारणतया एक या दो रुपया से ज्यादा मूल्य के नहीं होते हैं। पहिले दिन यात्री सागर में प्रातःकाल स्नान करते हैं। कुछ दोपहर में फिर स्नान करते हैं और अपना सिर भी मुड़ाते हैं। बहुतेरे जिनके माता पिता

हाल ही में मरे होते हैं श्राद्ध भी करते हैं। इसके उपरान्त कपिल मुनि के दर्शन किये जाते हैं। दूसरे और तीसरे दिन भी यही होता है। फिर मेला टूट जाता है। इस समय यात्रियों को रेत पर ही शयन करना पड़ता है, क्योंकि नावों में बहुत अधिक लोग नहीं आ सकते हैं। कपिल मुनि की मूर्ति एक बेरूप पत्थर है, जो लाल रंगा हुआ है। वर्षा के अधिक भाग में यह कलकत्ते में ही रक्खी रहती है। किन्तु इसके एक या दो सप्ताह के बाद यह पुरोहितों को दे दी जाती है, जो मेले के अवसर पर इसके लिये उत्तरदायी रहते हैं और उन्हें चढ़ाये में से कुछ भाग मिलता है। रेत के चार फुट ऊँचे चबूतरे पर एक स्थानापन्न मन्दिर बनाकर उसमें इसे स्थापित करते हैं। क्योंकि प्राचीन मन्दिर को सागर बहा ले गया। भीड़ से बचने के लिये सामने एक बांसों की किवाड़ लगा देते हैं।

बिलसन लिखता है कि मन्दिर के सामने बरगद का पेड़ था। जिसके नीचे राम और हनुमान की मूर्तियां थीं। यात्री लोग मन्दिर की दीवालों पर अपना नाम या कपिल मुनि से कुछ प्रार्थना लिखते थे। वे मिट्टी या ईंट का एक टुकड़ा वृक्ष की डाल से लटका देते थे, जिसका अर्थ स्वास्थ्य या सन्तान आदि की याचना होता था, जिसके पूर्ण होने के लिये वे एक विशेष मानता मानते थे। मन्दिर के पीछे सीताकुंड था, जिसके ताज़े जल का आचमन यात्री मन्दिर के मैनेजर को कुछ दक्षिणा देकर कर लेता था। यह सम्भवतः तालाब के जल से भरा रक्खा जाता था, किन्तु वहां के भिक्षुक लोग बतलाते थे कि मन्दिर के उपयोग के लिये यह आप से आप सदा भरा रहता है।

हुगली

हुगली नदी के पश्चिम तट पर स्थित है। कदाचित् इस नाम की उत्पत्ति हगला नामक घास से हुई है, जो यहाँ बहुत उगती है। ग्रान्ड ट्रङ्क रोड यहीं से निकलती है। ई० आई० आर० पर यहां तीन स्टेशन हैं—चिन्सुरा, हुगली और बन्डेल जंक्शन। ई० बी० एस० आर० पर गंगा के उस पार नैहाटी स्टेशन है। हुगली कालेज से आध मील पर शान्देश्वर का मन्दिर है। यह वृषभ पति शिव का एक छोटा सा मन्दिर है जो हुगली के तट पर स्थित है और इस के चारों ओर दीवाल का घेरा है। बैसाख के महीने में इस घेरे में एक मेला लगता है। यात्री गंगा स्नान करके डेढ़ फ़ुट ऊँचे शिवलिङ्ग पर पानी चढ़ाते हैं। मन्दिर काफ़ी प्राचीन है।

बाली में राधाकृष्ण की एक ठाकुरबारी है। मन्दिर के निकट ही बड़ा अखरा है, जिसके निकट ही खमरपारा एक और अखरा है। यहाँ साधू महात्माओं के लिये एक अतिथि-शाला है और तट पर बहुत से घाट हैं, जिन में गोलघाट मुख्य है।

सीरामपुर

हुगली के दक्षिण तट पर हुगली और हवड़ा नगरों के मध्य में समान दूरी पर स्थित है। ग्रांड ट्रङ्क रोड की शाखा इसे हवड़ा, हुगली और कलकत्ते से सम्बन्धित करती है। कलकत्ते से भारी सामान, स्टीम से चलने वाली बड़ी बड़ी नावों में ले जाया जाता है और यात्री कन्नना स्टीमर और पन्सियों द्वारा। ई० आई० आर० पर यहाँ चार स्टेशन हैं—कोन्ना नगर, रिशरा, सीरामपुर और शिवरा फूली। यहाँ ई० बी० एस० आर० से भी पहुँच सकते हैं, जिस पर तीन स्टेशन खरदाह, बैराकपुर और टीटागढ़ के हैं। नाव छः स्थानों पर मिलती है (१) छतरा से बैराकपुर (२) सीरामपुर से बैराकपुर (३) बल्लभपुर से टीटागढ़, (४) महेश से टीटागढ़, (५) रिशरा से खरडाह, (६) कोन्ना नगर से पानो हाटी।

बल्लभपुर राधा बल्लभ के मन्दिर और रथ यात्रा के लिये प्रसिद्ध है। नदी तट पर बल्लभपुर से दक्षिण महेश है। और उससे भी दक्षिण रिशरा है। महेश जगन्नाथ के मन्दिर के लिये प्रसिद्ध है। यहाँ स्नानयात्रा, रथयात्रा और उल्टा रथ मनाये जाते हैं। इनमें बड़ी भीड़ लगती है। पुरी के बाद भारतवर्ष में रथयात्रा महेश ही में सब से अधिक धूम धाम से मनाई जाती है।

उत्तरपारा

हुगली के दायें तट पर एक छोटा सा नगर है। यहां के सार्वजनिक पुस्तकालय में भारत पर प्राचीन ग्रन्थ खूब हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में प्रचलित हरकारु समाचार पत्र का पुस्तकालय भी इसमें सम्मिलित है।

इटैलियन शैली पर बने हुये एक सुन्दर भवन में यह स्थित है और नदी पर से देखने में खूब जंचती है। टोलों (पाठशालाओं) में संस्कृत धर्मशाला का अध्ययन होता है।

जलंगी संगम

यह नदी नदिया ज़िले के धुर उत्तर में पद्मा से निकली है और इस ज़िले की उत्तरी-पश्चिमी सीमा बनाती हुई टेहाटा से कुछ मील उत्तर यह इस ज़िले में प्रवेश करती है। यहाँ से टेढ़ी मेढ़ी बहती हुई कृष्ण नगर तक जाती है।

जहां से पश्चिम की ओर बहती हुई नवद्वीप नगर के सामने भागीरथी से मिल जाती है।

शान्तिपुर

यह हुगली के बायें तट पर स्थित है। यहाँ कलकत्ते से स्टीमर आते जाते हैं। पन्द्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में यहां अद्वैताचार्य हुये हैं, जो विष्णु और शिव के एक ही अवतार थे, कहते हैं कि चैतन्य ने अपनी दीक्षा इन्हीं से ली थी, किन्तु बाद में यह स्वयम् चैतन्य के शिष्य हो गये। तब से यह स्थान पवित्र माना जाता है और अब स्नान का प्रसिद्ध स्थान है।

कुछ समय पूर्व शान्तिपुर की मलमल (मसलिन) योरुप में विख्यात थी।

यहाँ के तीन सब से प्रसिद्ध मन्दिर श्याम चन्द, गोकुल चन्द और जलेश्वर के हैं।

नवद्वीप

यह भागीरथी के पश्चिम तट पर जलंगी संगम के सामने स्थित है। नवद्वीप नाम की उत्पत्ति के विषय में तीन धारणायें हैं।

(१) पहिले यह नगर एक टापू पर बसा था जिस का नाम नवद्वीप (नया द्वीप) था जिससे अग्रद्वीप (जो भागीरथी पर १५ मील उत्तर है) का भ्रम न हो।

(२) पहिले यहाँ एक साधू का आश्रम था, जो रात के समय नौ दीपक जलाकर उनके बीच में बैठ कर तपस्या करता था।

(३) यह नवद्वीपों में से एक है, जिनका वर्णन नरहरिदास ने अपनी नवद्वीप परिक्रमा पद्धति में किया है।

नदी के उस पार नदिया के सामने ही एक बामन पुकुर नामक ग्राम है, जिसमें बल्लल ढीवि नामक एक बड़ा टीला है। कहते हैं यहाँ राजाओं का महल था। बल्लाल डीघि नामक एक तालाब भी है।

जब से बल्लालसेन ने नवद्वीप को अपना स्थायी बास स्थान बनाया था, तब से नवद्वीप वङ्गदेश की विद्या चर्चा का केन्द्र बना था। कहा जाता है कि इस के पहिले एक योगी गंगा के तट पर एक झोपड़ी में थोड़े से छात्रों को पढ़ाया करते थे। उनके छात्रों में शङ्कर तर्क बागीश और व्यायासि शिरामणि प्रधान थे। लक्ष्मण सेन के समय हलायुध पशुपति 'पवन दूत' के रचयिता धोयी, कवि-श्रेष्ठ जयदेव और उमापतिधर का आविर्भाव हुआ। कहते हैं न्याय की सब से प्रथम पाठशाला अद्दहुध योगी नामक उक्त देश के एक पंडित ने स्थापित की थी। स्थानीय विद्वानों में पक्षधर मिश्र के शिष्य बासुदेव सार्वभौम बहुत प्रसिद्ध हुये हैं। इन्हें समग्र न्यायशास्त्र विशेष कर गंगेश उपाध्यायकृत चारों खण्ड चिन्तामणि कंठस्थ थी। श्री चैतन्यदेव और रघुनाथ शिरोमणि के समय में नवद्वीप ने गौरव के शिखर-देश पर आरोहण किया था। इस समय न्यायशास्त्र के अध्यापन का प्राधान्य मिथिला से उठकर नवद्वीप में चला आया था और नवद्वीप को उपाधि दान का अधिकार मिला था। इसी समय स्मृति शास्त्र संस्कारक रघुनन्दन स्मति भट्टाचार्य और तन्त्रशास्त्र के संग्रहकर्ता कृष्णानन्द आगम बागीश का जन्म हुआ था और उनके द्वारा हिन्दू समाज का सुप्रबन्ध तथा उसकी दुर्नीति का निराकरण हुआ था।

नवद्वीप उस समय अति समृद्ध नगर था, किन्तु भागीरथी की गति के बार बार परिवर्तन के कारण गौरव के समय के लिये चिन्ह मन्दिरादि, श्रीचैतन्य जन्म स्थान, बासुदेव सार्व भौम का रघुनन्दन कृष्णानन्द इत्यादि के भवन और चतुष्पाठिया, श्रीवास-अङ्गन, हरिघोष का गोपाल इत्यादि थे, अब नदी-गर्भ में विलीन हो गये हैं।

वर्तमान नवद्वीप संस्कृत शिक्षा के लिये अब भी प्रसिद्ध है। इस स्थान की मुख्य विशेषता यहां के विद्यालय हैं, जिन में स्मृति और न्याय पढ़ाये जाते हैं।

पहिले नवद्वीप के पंचांग बहुत प्रसिद्ध थे। उन में से सत्य बातें निकलती थीं, किन्तु अब आचार्यों का अस्तित्व लगभग नहीं के बराबर है।

दैंहट

बर्दवान ज़िले में यह भागीरथी के दायें तट पर स्थित है यहाँ पीतल के बर्तन बनते हैं और कपड़े बुने जाते हैं।

कलना

यह बर्दवान ज़िले में भागीरथी के दायें तट पर स्थित है। मुसलमानों के समय में यह एक महत्व पूर्ण स्थान था और एक पुराने किले के भग्नावशेष (जो नदी की चौकसी के लिये बनाया गया था) अब भी हैं। महाराज बर्दवान का एक महल यहां भी है। यहाँ एक सौ नौ शिवालय हैं, जिनकी रचना गोलाकार हुई है। बाहरी गोले में ६६ मन्दिर हैं, जो एक काले लिंग के बाद एक सफ़ेद लिंग, इस तरह उनकी रचना हुई है। भीतर वाले गोले में ४२ लिंग हैं, जिनमें केवल श्वेत लिंग ही हैं। यह मन्दिर उन स्थानों को छोड़ कर, जहां मध्य में जाने के

लिये मार्ग छोड़ दिया है, एक से एक सटे हुये हैं। तन्त्रों में लिखा है कि १०८ लिंगों की पूजा से बड़ा पुण्य होता है। विशेष कर जाति में गिरना, जाति की मृत्यु, असाध्य रोग आदि के दूर रखने का विशेष माहात्म्य है। अन्य मंदिरों में संगतराशी किया हुआ एक ईंट का शिवालय और दो कृष्णमन्दिर दर्शनीय हैं। महल से मिली हुई समाजवाड़ी में बर्दवान के सभी महाराजा और महारानियों की समाधियां हैं। हर एक महाराजा और महारानी के लिये एक पृथक स्थान है, जिनमें देह के भस्म हो जाने पर बचे हुये फूल रक्खे जाते हैं।

कटवा

यह बर्दवान ज़िले के भागीरथी और अजय के संगम पर स्थित है। कटवा वैष्णवों का तीर्थ है। चैतन्य ने यहीं सन्यास ग्रहण किया था।

अग्रदीप

यह भागीरथी पर स्थित है। यह एक तीर्थ है। यहाँ गोपीनाथ का मन्दिर है, जिनके दर्शन के लिये अप्रैल में लगभग दस सहस्र यात्री एकत्रित होते हैं।

यमुना सङ्गम

जमुना या जबुना नदिया ज़िले से चौबीस परगना में वलियानी नामक स्थान पर प्रवेश करती है और दक्षिण-पूर्व की ओर बहती हुई तीबी तक जाती है। यहाँ इससे इच्छामती आकर मिली है। और इसी के नाम से यह आगे सम्बोधित भी की जाती है। तीबी से बड़ी टेढ़ी मेढ़ी होकर दक्षिण-पूर्व की ओर बहती है। बसन्तपुर से यह सुन्दर बन में पहुँच जाती है, जहाँ रंगमहल में मिल जाती है।

गरीफ़ा

ब्रह्म समाज के जन्मदाता केशव चन्द्रसेन (१८३८) का जन्म स्थान है।

भाटपारा

यह हुगली नदी के बायें तट पर स्थित है। यहाँ ई० बी० एस० आर० पर कनकिनारा नामक स्टेशन है। पहिले यह विद्या का केन्द्र था। यहाँ के ताल प्रसिद्ध हैं। यहाँ कुछ पाठशालायें अब भी ऐसे हैं, जहां विद्यार्थियों को भोजन और निःशुल्क शिक्षा दी जाती है। परन्तु इनकी संख्या अब घट रही है। भाटपारा के पंडित वेद के अच्छे ज्ञाता होते हैं और गुरु प्रसिद्ध हैं। अब यह औद्योगिक नगर हो गया है। इसमें कई मिल हैं। जगनदल में दो बड़े तालाब और दो खाइयों के बारे में यह कहा जाता है कि सोलहवीं शताब्दी में प्रतापदित्य के द्वारा बनवाये हुये एक दुर्ग के भग्नावशेष हैं।

शाम नगर

हुगली नदी के तट पर स्थित है। यहाँ ई० बी० एस० आर० पर एक स्टेशन है। स्टेशन से कुछ पूर्व एक मट्टी के किले के भग्नावशेष हैं, जिसके चारों ओर खाई है। कहते हैं कि बर्दवान के राजा ने इसे मरहठों से बचने के लिये बनवाया था। टैगोर राज्य की ओर से यहाँ एक दातव्य औषधालय और संस्कृत कालेज है।

बैरकपुर

यह हुगली तट पर स्थित है। यहां योरुपियन लोग प्रसन्नता से रहते हैं। बंगाल के गवर्नरों का यह ग्राम्य निवास है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से यह बंगाली सेना के दो विद्रोहों का स्थान है। इचापुर में एक बन्दूक का सरकारी कारखाना है। यहां दो वार्षिक मेले लगते हैं। अगस्त में झूलन का मेला छः दिन तक रहता है और नवम्बर में गोष्ठा सप्तमी को एक दिन रहता है।

टीटागढ़

यह एक प्रसिद्ध औद्योगिक केन्द्र है। यहां जूट की मिलें और काग़ज़ का प्रसिद्ध कारखाना है।

खरदा

यह हुगली नदी के तट पर स्थित है। चैतन्य के मुख्य शिष्य नित्यानंद यहाँ कुछ समय मकान बनाकर रहे थे। कहते हैं इस ग्राम को उन्होंने बसाया था। तीन मन्दिर हैं—खरदा में श्यामसुन्दर जी का बल्लभपुर में राधा-बल्लभ का और शाहीबारा में नन्द दुलाल का। एक ही दिन इन तीनों स्थानों में दर्शन करना बड़ा पुण्य समझा जाता है। खरदा के वैष्णव मन्दिर के निकट ही चौबीस शिवालयों का एक समूह है।

कासीपुर-चितपुर

हुगली के तट पर स्थित है। यहां दो वार्षिक मेले लगते हैं (१) मोहन मेला बैरकपुर ग्रांडट्रंक रोड पर फाल्गुन में पाँच दिन रहता है। (२) रामलीला मेला जो ग्रांडट्रंक रोड के किनारे एक बाग़ में तीन दिन रहता है। यहां बेलगचिया वेटरनरी कालेज, गवर्नमेंट-गन-फ़ाउन्ड्री शेल-फैक्ट्री, कुछ जूट-प्रेस शक्कर और अन्य वस्तुओं के कारखाने हैं जो इसे एक चहल पहल का औद्योगिक नगर बना रहे हैं।

महानन्दा-संगम

पूर्णिया से बहकर आती हुई मालदा ज़िले के धुर उत्तर में आकर, इसकी उत्तरी-पश्चिमी सीमा पर लगभग २५ मील तक बहती है। इसकी एक मात्र सहायक नदी नागर आकर इससे पूर्व तट पर मिली है। यह फिर इस ज़िले में प्रवेश करती है और दक्षिण की ओर बहती हुई इसे दो समान भागों में बांटती है और बिलकुल दक्षिण में पहुँचकर गंगा से मिल जाती है।

धुलियन

यह नगर मुर्शिदाबाद ज़िले में भागीरथी के दायें तट पर स्थित है। इस ज़िले में नदी-तट स्थित बाज़ारों में से यह एक प्रमुख स्थान है। यहां चावल तथा अन्य कृषिसम्बन्धी वस्तुओं का व्यापार अधिक होता है। ई० आई० आर० की बड़हरवा-अज़ीमगंज कटवा शाखा पर एक स्टेशन है।

गिरिया

यह भागीरथी के पूर्व तट पर स्थित है। यहां पर युद्ध दो हुये हैं। एक सन् १७४० में अलीवर्दी खां और सरफराज खां में हुआ था और दूसरा मीर कासिम और अंगरेज़ों के बीच में सन् १७६३ में हुआ था।

जङ्गीपुर

यह भागीरथी के पूर्व तट पर स्थित है। यह शब्द जहाँगीर पुर का अपभ्रंश है। क्योंकि किंवदन्ती इस प्रकार है कि इसे जहांगीर बादशाह ने बसाया था। पहले यह रेशम के व्यापार का एक प्रमुख केन्द्र था। यह अब भी रेशम के व्यापार का केन्द्र और भागीरथी पर जानेवाली नावों का मुख्य चुङ्गी घर भी है। नदी तट के पश्चिमी भाग का नाम रघुनाथगंज है। रघुनाथगंज के उत्तरी भाग को बालीघाट कहते हैं। कहते हैं कि इसका ऐसा नाम बाल्मीक ऋषि के नाम पर पड़ा है। यहाँ एक प्राचीन बर्गद का वृक्ष भी है, जहां ऋषि लोग स्नान किया करते थे।

अज़ीमगंज

भागीरथी के दक्षिण तट पर है। ई० आई० आर० की अज़ीमगञ्ज शाखा यहां समाप्त होती है और यहां उसको बरहरवा-अज़ीमगंज-कटवा शाखा पर भी स्टेशन है। रेल के सम्बन्ध में अज़ीमगंज से बरहामपुर तक वर्षा ऋतु में पांच महीने स्टीमर चलता है। यहाँ जैन मतावलम्बी मारवाड़ियों का एक उपनिवेश है और उनके सुन्दर मन्दिर नदी पर से देखने में बड़े सुन्दर प्रतीत होते हैं। यहां से धुलियन और कलकत्ते के लिये स्टीमर मिलता है।

बहरामपुर

गंगा के पूर्वी तट पर स्थित है। ई० बी० एस० आर० की मुर्शिदाबाद शाखा पर यह स्टेशन है। डेल्टा के सिरे पर स्थित है। यह नाम ब्रह्मपुर का अपभ्रंश मालूम पड़ता है और यहां के एक स्थान का नाम विप्रघाट है भी। यहां की जलवायु अच्छी नहीं है। यह एक विद्रोह का केन्द्र था। कृषिनाथ कालेज देखने योग्य है।

क़ासिम बाज़ार

भागीरथी के पूर्वी तट पर स्थित है। पहिले कासिम बाज़ार व्यापार का एक बड़ा केन्द्र था। यहाँ निचले बंगाल का व्यापार केन्द्रीभूत था। हिन्दोस्तान से व्यापार करने वाली योरुपीय जातियों ने यहां अपनी कोठी स्थापित कर रक्खी थी, यही नाम निकटवर्ती देश का भी पड़ गया था और वह त्रिकोण स्थल (जिसके एक ओर पद्मा एक ओर जलंगी और एक ओर भागीरथी बहती हैं) ईस्ट इन्डिया कम्पनी के समय में क़ासिम बाज़ार द्वीप के नाम से प्रसिद्ध था। भागीरथी यहां कासिम बाजार नदी के नाम से प्रसिद्ध थी। किन्तु भागीरथी के मार्ग परिवर्तित कर देने के कारण इसकी अवनति हो गई। उसकी मुख्य धारा पूर्व धारा में थोड़ा सा पानी छोड़कर तीन मील पश्चिम हट गई। पूर्वी धारा कटिंगं नामक खल के नाम से विख्यात है. जिसमें वर्षा ऋतु में छोटी छोटी नावें चल सकती हैं। बड़े बड़े भवनों के भग्नावशेष और मिट्टी के टीले इसकी पूर्व कीर्ति की अब भी याद दिलाते हैं। कहते हैं कि उन्नतिशील बरहामपुर के भवन इसी नगर से प्राप्त हुई वस्तुओं से निर्माण हुए हैं। फिर भी यहां एक प्राचीन शिवालय है और एक जैन मन्दिर नीमनाथ के मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है। यहां कासिम बाज़ार के महाराजाओं का आलीशान महल दर्शनीय है। इसके सुन्दर नक्काशी किये हुये पत्थर और स्तम्भ बनारस के राजा चेतसिंह के महल से लाये गये हैं।

गियासाबाद

यह भागीरथी के पश्चिम तट पर स्थित है। यहां पाई गई वस्तुओं से ज्ञात होता है कि यह अवश्य ही कोई प्राचीन हिन्दू नगर का स्थल है। पत्थर और स्तम्भ, जिन पर पाली वर्णमाला में कुछ खुदा हुआ है, सुवर्ण मुद्रायें तथा टूटे मिट्टी के बर्तन पाये गये हैं। किन्तु ऐसी कोई

वस्तु अभी तक नहीं पाई गई । जिससे इस स्थान के इतिहास पर कुछ प्रभाव पड़ सके। इस स्थान का प्राचीन हिन्दू नाम बदरीहाट है।

मुर्शिदाबाद

भविष्यत् पुराण (जो पन्द्रहवीं या सोलहवीं शताब्दी में लिखा गया जान पड़ता है) के ब्रह्मानन्द भाग में लिखा है कि मोरासुदाबाद को एक यवन ने स्थापित किया। सन् १७०३ ई० में मुर्शिद कुली खां ने इसका नाम मुर्शिदाबाद रक्खा और तब से यह बंगाल की राजधानी हो गया।

पलासी के युद्ध के उपरान्त क्लाइव ने लिखा है, 'मुर्शिदाबाद का नगर लन्दन के समान विस्तृत, धनाढ्य और घना बसा हुआ है। अन्तर केवल इतना ही है कि पहिले नगर में दूसरे नगर से कुछ कहीं अधिक सम्पत्तिशाली मनुष्य विद्यमान हैं। यहां के निवासी यदि योरपियन लोगों का नाश करना चाहें तो लाठी और पत्थरों से कर सकते हैं" । सन् १८९७ ई० के भूचाल ने यहाँ के बहुत से भवनों को नष्ट कर दिया। उनका उद्धार नहीं हो पाया है। वे यहां की दीनता और अवनति को सूचित करते हैं।

हाथी दांत पर नक़ाशी का काम यहां बहुत समय से अच्छा चला आया है। कारीगर जो अब अल्प संख्या में हैं अच्छा काम तैयार करते हैं। यहां के अन्य धन्धे सोने और चांदी के तारों का काम, संगीत की वस्तुयें, हुक्के और रेशम के कपड़े हैं।

यहाँ के दर्शनीय स्थान, महल, निज़ामत किला, इमामबाड़ा, प्राचीन मदीना, बच्चावाली तोप, बड़ी बन्दूक, ख़तरा मसजिद, क़दम शरीफ़, सरफ़राज़ खां का मकबरा और इमारत, शुजा खां का मक़बरा और इमारतें, मोती झील, मुबारक मंजिल या फेन्दल बाग़ चूलाखजी और निशत बाग़ ,खुशबाग़, ज़ाफरगंज, नाशीपुर, राजबाडी, महिमापुर, मुरादबाग़, मंसूरगंज और हीराझील हैं।

वीरा ख्ज़ाज़ा ख़िज़्र का त्यौहार—इसे छोटे छोटे रोशनी वाले जहाज़ गंगा में बहा कर मनाया जाता है। वर्षा ऋतु की कुछ रातों को तो यह सहस्रों की संख्या में धारा में देखने को मिलते हैं। इनके बनाने की विधि बहुत सरल है। एक केले या बांस के टुकड़े पर कुछ मिठाई और लैम्प रख देते हैं। भाद्र के अन्तिम गुरुवार को यह बड़े धूम धाम के साथ मनाई जाती है।

सरस्वती उद्गम

सरस्वती त्रिवेणी में से हुगली से नीचे ही निकलती हैं। पहिले यह डेढ़ मील तक दक्खिन-पूर्व बहती है और फिर हुगली के साथ ही तीन मील तक दक्षिण की ओर बहती चन्दर नगर के पीछे बुरई ग्राम दक्षिण-पश्चिम को मुड़ती है। फिर हवड़ा ज़िले में प्रवेश स्थल तक दक्षिण-पूर्व की ओर मुड़ती है। और संकरैल स्थान पर हुगली से फिर मिल जाती है। अर्ध शताब्दी पूर्व यह एक मृत नदी थी, जिसका अस्तित्त्व केवल कुछ पोखरों में था ईडेन (Eden) नहर की योजना के सम्बन्ध में गोपालपुर के निकट काला नदी से इसमें पानी लाया गया। और अब यह ग्रीष्म ऋतु में भी एक बहती हुई छोटी सी नदी रहती है।

वैद्यावती

यह नगर हुगली नदी के पश्चिम तट पर स्थित है। यहां दो संस्कृत पाठशाला हैं, जिनमें स्मृति पढ़ाई जाती है। यहां ई० आई० आर० पर स्टेशन भी है। वैद्यावती पहिले काफ़ी महत्व का स्थान है। अब भी कुछ प्राचीन दर्शनीय स्थान हैं। जिनमें शिवराफूली, निमाई तीर्थ घाट और चम्पदानी मुख्य हैं। वैद्यावती में पहिला बंगाली उपन्यास (अलालेर घरेर दलाल लिखा गया था।

निमाई तीर्थ घाट वैद्यावती का सब से प्रसिद्ध स्थान है। कवि विप्रदास (१४९५ ई०) ने लिखा है कि यहां चन्द नामक व्यापारी ने एक नीम का पेड़ पाया, जिसमें गुलाब लगे हुये थे चैतन्य के सोलहवीं सदी के जीवन-चरित्रों में इसका वर्णन कई बार आया है। चैतन्य का घर का नाम निमाई था। यहां दो बड़े धार्मिक मेले वारूणी और पौष संक्रान्ति के अवसर पर लगते हैं।

बांसबरिया

यह बांसबरिया से पश्चिम तट पर स्थित है। हुगली-खुलना सड़क यहां से निकली है। यह ई० आई० आर० पर त्रिस्बीघा स्टेशन से सम्बन्धित है। बंगाल प्रांतीय रेलवे एक छोटी सी शाखा मगरा को त्रिवेणी से जोड़ती है और त्रिवेणी पर एक स्टेशन भी है। बांसबरिया और त्रिवेणी में कलना स्टीमर भी आते हैं। यहां कलकत्ते भेजने के लिये पीतल के बर्तन खूब बनते हैं। पहिले यह संस्कृत विद्या का केन्द्र था।

यहां तीन मंदिर हैं। विष्णु का सब से प्राचीन है। यहीं स्वयंभव या काली और हंसेश्वरी का मन्दिर है। इसमें नीम की बनी हुई नीली रंगी मूर्ति है। शिवजी चित लेटे हुये हैं।

उनकी तोंदी से एक कमल निकला है, जिस पर मूर्ति स्थित है।

त्रिवेणी

यह नगर के सब से उत्तरी भाग का नाम है। यह एक प्राचीन स्थान है, जिसका नाम मुक्त बेनी था। जिससे प्रयाग (मुक्तबेनी) का भ्रम न हो जाय इस स्थान का ऐसा नाम इस लिये है कि यहां से तीन धारायें निकलती हैं— भागीरथी जो दक्षिण की ओर जाती है, सरस्वती जो पश्चिम की ओर जाती है और जमुना या कन्धर पारा खल जो पूर्व की ओर जाती है। इन तीन धाराओं के संगम का वर्णन पवनदूतम् नामक संस्कृतकाव्य में आता है। यह कविता बारहवीं सदी के अन्तिम भाग की है। किन्तु इस स्थान की पवित्रता बहुत पहिले से मान्य थी। त्रिवेणी और बांसबरिया में बहुत से संस्कृत पाठशालायें थीं और सर विलियम जोन्स के शिक्षक पंडित जगन्नाथ तर्क पंचानन (जिन्होंने एक हिन्दू धर्मशास्त्र की रचना की है) यहीं के एक प्रसिद्ध विद्वान थे। हिन्दू कीर्ति की स्मारक अब यहां कुछ थोड़ी सी बातें बच रही हैं। सरस्वती संगम के कुछ उत्तर में तीस तीस सीढ़ियों के दो ज़ीने नदी में जाते हैं। एक स्थान पर सात छोटे मंदिरों का समूह है। त्रिवेणी पर कुछ महत्व पूर्ण मेले लगते हैं। यह दशहरा, संक्रान्ति या वारूणी, और ग्रहण के अवसर पर होते हैं। उत्तरायन संक्रान्ति और वारूणी के अवसर पर बहुत भीड़ लगती है।

ब्रह्मपुत्र या जमुना

ब्रह्मपुत्र नदी के बंगाल के मैदान में प्रवेश स्थल से उसका नाम जमुना पड़ा है। जल के विशाल जल मार्ग हैं। इस पर सब प्रकार की नावें, डोंगियां आदि बिछी सी रहती हैं। सामान के बड़े स्टीमर और यात्रियों के तेज़ स्टीमर भी सब ऋतुओं में गोआलन्डो से दिब्रूगढ़ तक जाया करते हैं। पबना ज़िले में इसके तट पर मुख्य स्थान सिराजगंज है, जो जूट की बड़ी मंडी है।

गोदागरा

यह पद्मा नदी के तट पर स्थित है। ई० बी० एस० आर० की कटिहारी-गोदागरी शाखा यहां समाप्त होती है। एक छोटी सी शाखा गोदागरी घाट तक जाती है। जहां से गंगा पार लालगोला घाट तक जाने के लिये स्टीमर मिलता है। लालगोला घाट से कलकत्ते तक के लिये सीधी रेल मिलती है। बारिंद के अनाज के व्यापार का द्वार यही है और बहुत सा अनाज यहां से जलमार्ग द्वारा बाहर भेजा जाता है। मराठों के हमलों से बचने के लिये मुर्शिदाबाद के निवासियों ने यहां शरण ली थी। बरुई पारा किला के भग्नावशेष (जिसमें उन लोगों ने जाकर शरण ली थी) अब भी देखे जा सकते हैं।

प्रेमताली

यह ग्राम गोदागरी जाने वाली सड़क पर स्टीमर स्टेशन है। अक्तूबर में होने वाले खेतुर मेले के यात्री पहिले यहां स्नान करते हैं। कथा इस प्रकार है कि परम वैष्णव चैतन्य ने घूमते हुये पद्मा को इसी स्थल पर पार किया था और प्रेमताली में ही गंगा स्नान भी किया था। प्रेमताली का अर्थ है प्रेम का स्थान। खेतुर के मेले के समय ही यहां भी मेला लगता है।

लालपुर

यह ग्राम गोपालपुर स्टेशन से चार मील दक्षिण-पश्चिम में गंगा तट पर स्थित है। यहां थाना, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, इस्पेकशन बंगला और मिडिल वर्नाकुलर स्कूल हैं। पुठिया पांच आना राज की ओर से एक अस्पताल भी चलता है।

सरदाह

यह ग्राम गंगा तट पर चार घाट से एक मील उत्तर में स्थित है। यहीं से बारल नदी गंगा से निकली है। यहां का पुलिस ट्रेनिङ्ग कालेज दर्शनीय है। यहां से गंगा की ओर देखने में यह बड़ा सुन्दर प्रतीत होता है।

रामपुर बोआलिया

यह पद्मा नदी के उत्तरी तट पर स्थित है। पहले यहां रामपुर और बोआलिया नामक दो ग्राम थे जिससे इसे रामपुर बोआलिया कहते हैं। इसे राजशाही भी कहते हैं। जो यहां का डाक और तार सम्बन्धी नाम है। स्टीमर स्टेशन का भी यही नाम है सिविल स्टेशन श्रीरामपुर नामक सरकारी इलाके में स्थित है। रामपुर बोआलिया में रेल नहीं है। इस लिये यहां पहुँचने के लिये सड़क या जल के मार्ग का अवलम्बन करना पड़ता है। सड़क नाटोर से (२८ मील) दारजिलिंग वाली सड़क पर है। या लाल-गोला घाट को कलकत्ते से सीधी रेल जाती है।

इतिहास प्रेमियों को यहां की पुरानी डच फैक्टरी, जो बड़ी कोठी के नाम से प्रसिद्ध है, देखनी चाहिये। यहां डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, कृषि फार्म और रेशम की उत्पत्ति सम्बन्धी स्कूल हैं। डायमंड जुबली इन्डस्टियल इन्स्टी-ट्यूट में नाप बढ़ईगीरी और लोहारगीरी की शिक्षा

दी जाती है। यहां की मुख्य शिक्षा-संस्था राजशाही कालेज (जिसके साथ संस्कृत कालेज, और मदरसा और कालिजियेट हाई स्कूल भी लगे हुये हैं) और एक हाई स्कूल (जो भोलानाथ एकेडेमी के नाम से प्रसिद्ध है) है। किन्तु अधिक दर्शनीय वारेन्द्र रिसर्च सोसाइटी का अजायब घर है। सदस्यों ने पुरातत्व सम्बन्धी अच्छी खोज की है। नक़ाशी का काम कई सदियों का है। प्राचीन काम साधारण और सरल है, किन्तु मध्यकालीन बारीक अलंकार-युक्त है।

पद्मा की धारायें खूब बदलती रहती हैं। कुछ वर्षों में तो अंतरीय धारा, जो नगर के निकट ही बहती है, पानी से इतनी भरी रहती है कि स्टीमर नदी तट तक ग्रीष्म ऋतु में भी आ जाते हैं। किन्तु कुछ वर्षों में यह धारा इतनी उथली हो जाती है कि स्टीमरों को नीचे की ओर सात मील पर रुक जाना पड़ता है।

सारा

यह ग्राम पवना ज़िले में पद्मा के उत्तरी तट पर स्थित है। यहां ई० बी० आर० पर स्टेशन भी है। यहां थाना, हाई स्कूल, डाक और तार घर हैं।

डमुकडिया

नदिया ज़िले के धुर उत्तर में पद्मा के दायें तट पर यह ग्राम स्थित है। यहां एक पुलिस की चौकी है। यहां ई० बी० एस० आर० पर एक स्टेशन है, जहां से गंगा पार की जाती है।

लोहागंज

पद्मा नदी के तट पर स्थित है। बाजार उस खल के दोनों ओर स्थित है, जो यहां पद्मा में मिलता है। यह पाट (जूट) के व्यापार का एक बड़ा केन्द्र है। आजकल लोहागंज एक बड़े चहल पहल का स्थान है। पाट, लकड़ी, तेल और नमक का यहां अच्छा काम होता है। किन्तु इसे पद्मा की बाढ़ का बड़ा भय रहता है। सम्भव है कि कुछ ही समय में इसका बहुत कुछ अंश बह जाय।

सियालो अरीचा

पद्मा के पूर्वी तट पर स्थित एक बड़ा बाज़ार है। यह गोआलंडो के सामने पड़ता है। यहां थाना है और यह अनाज की मंडी है। नदी द्वारा लाया गया अनाज यहीं से ज़िले के पश्चिम में भेजा जाता है। पश्चिम से आये हुये तीर्थ-यात्री और मज़दूर भी यहीं रुकते हैं।

राजवाड़ी

यह स्थान ढाका ज़िले में पद्मा के पूर्वी तट पर स्थित है। यहां थाना और सब-रजिस्ट्री आफ़िस है। दक्षिण-पश्चिम में दो मील पर राजवाड़ी मठ है, जो पद्मा के सभी यात्रियों को आकर्षित करता है। यह मठ २० फुट ऊँचा गुम्बज है। यह ३० फुट लम्बा और ३० फुट चौड़ा है। कहते हैं कि इसे पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य में चन्दराय और केदारराय ने बनवाया था।

मेघना-सङ्गम

मेघना उस नदी के निचले भाग को कहते हैं जो मनीपुर के उत्तर की पहाड़ियों से निकल कर सुर्माघाटी में बहती हुई पद्मा से राजवाड़ी के निकट मिलती है।

सन्दीप

यह बंगाल की खाड़ी में एक बड़ा द्वीप है, जो नोआखली के भूखण्ड से बामनी नदी द्वारा पृथक किया जाता है। यह बहुत काफ़ी जल्दी बस गया था और वेनिस के यात्री सिसारे फ्रेडिरिको (Cesare Federico) ने जो यहां १५७१ ई० में आया था, इसका वर्णन करते हुये लिखा है कि यह संसार के उन प्रमुख उपजाऊ भागों में से है जो बहुत अधिक घना बसा हुआ और भली भांति उन्नत है। उस समय यह मुसलमानों के आधिपत्य में था, किन्तु सत्रहवीं शताब्दी के आरम्भ में यह पुर्तगालियों के हाथ में चला गया।

